फरवरी, 2022

I.S.S.N. 2457-0486

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0486

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0486

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

फरवरी, 2022 अंक - 2

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

सहायक संपादक

पुंडरीक शर्मा

विधि साहित्य
प्रकाशन

(2022) 1 दा. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

क्या 12 वर्षों तक प्रेम संबंध चलने के पश्चात् प्रेमी द्वारा किसी और महिला के साथ विवाह कर लिए जाने के कारण शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाने पर कि उसने प्रेमी की ओर से विवाह के मिथ्या वचन के भ्रम में उससे शारीरिक संबंध स्थापित करने हेतु अपनी सम्मति प्रदान की थी, उसके प्रेमी/अभियुक्त के विरुद्ध बलात्संग के अपराध के लिए विचारण आरंभ करके उसे दंडादिष्ट किया जा सकता है । इसी प्रश्न पर विचार करते हुए **सचिन शुक्ला** बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य** (2022) 1 दा. नि. प. 242 वाले मामले में माननीय उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि 12 वर्ष लंबे चले प्रेम संबंधों के संबंध में उक्त आरोप उचित तथा युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है । यदि शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए सभी आरोपों को सत्य भी मान लिया जाए तो भी बलात्संग के अपराध के आवश्यक घटक साबित नहीं होते हैं और इसलिए उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में अन्वेषण को जारी रखा जाना विधि की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तत्समान है । याचिका को मंजूर करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिखंडित की गई ।

क्या यदि किसी बाल न्यायालय द्वारा किसी किशोर अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए जमानत आवेदन को खारिज कर दिया जाता है तो क्या उक्त किशोर अभियुक्त उक्त निर्णय को दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंधों के अधीन चुनौती देते हुए फाइल कर सकता है अथवा उसे इस प्रकार की अपील किशोर अधिनियम के सुसंगत उपबंधों के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करनी चाहिए । इसी प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उच्च न्यायालय की खंडपीठ **गुड्डु कुमार सिंह** बनाम **झारखंड राज्य** (2022) 1 दा. नि. प. 145 वाले मामले में इस निष्कर्ष पर पहुंची कि किशोर अधिनियम को यह सुनिश्चित करने के लिए अधिनियमित किया गया था कि ऐसे किसी बालक, जो विधि के विरोधाभास में है, की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है और उनके मूलभूत मानवाधिकारों की संरक्षा की जाती है और उक्त अधिनियम के अधीन बालक का सर्वोत्तम हित सर्वोपरि है और उक्त अधिनियम के उपबंधों के अधीन अभिकथित अपराध की गंभीरता और

प्रकृति, जमानत के आवेदन पर विचार करते समय सारवान् नहीं है और किशोर अधिनियम का एक विशेष अधिनियमिति होने के कारण, किसी किशोर अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए जमानत आवेदन या जमानत संबंधी किसी अपील के संबंध में किशोर अधिनियम के उपबंध लागू होंगे न कि दंड प्रक्रिया संहिता के ।

यदि दो अधिनियमों में सर्वोपरि खंडों को सम्मिलित किया गया है तो किस अधिनियम के सर्वोपरि खंड को प्रवर्तनीय बनाया जाना चाहिए । इसी प्रश्न पर विचार करते हुए **उपेन्द्र राय** बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और अन्य** (2022) 1 दा. नि. प. 161 वाले मामले में माननीय उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि धन शोधन निवारण अधिनियम की धारा 44(1) के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे तथा उक्त अधिनियम की धारा 44(1)(ग) में प्रयुक्त भाषा में किसी प्रकार की कोई अस्पष्टता नहीं है और चूंकि 2003 का उक्त अधिनियम एक पश्चात्वर्ती अधिनियमिति है इसलिए उसके उपबंध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के उपबंधों पर अभिभावी होंगे और इसलिए 1988 के अधिनियम के अधीन दंडनीय अनुसूचित अपराधों का विशेष न्यायालय (धन शोधन) द्वारा विचारण किया जा सकता है और इसलिए आक्षेपित आदेश में किसी प्रकार की त्रुटि विद्यमान नहीं है ।

इस अंक में, निर्णयों के हिन्दी पाठ और शीर्ष टिप्पण पाठकों के ज्ञान के लिए प्रकाशित किए जा रहे हैं । यह अंक विद्यार्थियों, विधि-वेत्ताओं, न्यायाधीशों और आम-जनता के लिए बहुत उपयोगी है । इस अंक में केन्द्रीय अधिनियम सीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम, 2008 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

पुंडरीक शर्मा
संपादक

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

फरवरी, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
उपेन्द्र राय **बनाम** केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और अन्य	161
के. तिरुपति **बनाम** राज्य, पुलिस निरीक्षक इरोड उत्तर पुलिस थाना, इरोड के माध्यम से	215
गुड्डु कुमार सिंह **बनाम** झारखंड राज्य	145
जॉन मैल्कीयुर **बनाम** उप-मंडलीय कार्यपालक मजिस्ट्रेट-सह-राजस्व मंडलीय अधिकारी, तिरुकोईलूर, राजस्व मंडल, कल्लाकुरिची और अन्य	209
महेशपाल श्री मनोहर लाल **बनाम** राजस्थान राज्य और अन्य	235
शजल राय **उर्फ** एड्रिन **बनाम** सिक्किम राज्य	248
सचिन शुक्ला **बनाम** राजस्थान राज्य और अन्य	242

संसद् के अधिनियम

सीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम, 2008 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	37 – 70

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 122(1)(ख) – अभियुक्त के विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट जारी किया जाना – याची द्वारा यह दलील देते हुए गिरफ्तारी के वारंट को चुनौती दिया जाना कि उक्त वारंट जारी करने से पूर्व उसे उसके पक्षकथन की प्रतिरक्षा करने हेतु पर्याप्त और उचित अवसर उपलब्ध नहीं कराए गए – याची द्वारा यह भी अभिकथित किया जाना कि उसके द्वारा यथाईप्सित सुसंगत दस्तावेज भी उसे उपलब्ध नहीं कराए गए और परिणामतः उसके विरुद्ध उक्त वारंट जारी करके नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का घोर उल्लंघन किया गया है – प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत किए गए मामले के अभिलेख के परिशीलन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि याची को उसके पक्षकथन की प्रतिरक्षा करने हेतु विधि के अनुसार पर्याप्त अवसर उपलब्ध नहीं कराया गया – अतः उसके विरुद्ध जारी किया गया गिरफ्तारी का वारंट विधिपूर्ण नहीं है, इसलिए उसे अपास्त किया जाता है ।

जॉन मैल्कीयुर बनाम **उप-मंडलीय कार्यपालक मजिस्ट्रेट-सह-राजस्व मंडलीय अधिकारी, तिरुकोईलूर, राजस्व मंडल, कल्लाकुरिची और अन्य** 209

– धारा 228 – याची के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा कतिपय अपराधों के लिए आरोप विरचित किया जाना – याची द्वारा उसके विरुद्ध आरोप विरचित करने वाले आदेश को पुनरीक्षण याचिका फाइल करके चुनौती दिया जाना – अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा उक्त पुनरीक्षण याचिका को खारिज किया जाना – याची द्वारा उपरोक्त दोनों आदेशों से व्यथित होकर उन्हें उच्च न्यायालय

पृष्ठ संख्या

के समक्ष चुनौती दिया जाना – शिकायतकर्ता द्वारा याची के विरुद्ध मुख्य रूप से यह आरोप लगाया जाना कि याची उसका देवर है और उसका संपूर्ण स्त्रीधन उसकी सास के पास था, जिसका अब निधन हो चुका है किन्तु अपने निधन से पूर्व उसकी सास ने शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की सभी वस्तुओं को उसके देवर अर्थात् याची को सौंप दिया था तथा शिकायतकर्ता द्वारा अपना स्त्रीधन वापस मांगने पर याची ने उससे धन की मांग की और उसका उत्पीड़न तथा उसका अपमान किया – चूंकि शिकायतकर्ता की सास का निधन हो चुका है और न्यायालय के अभिलेख पर ऐसी कोई भी सामग्री विद्यमान नहीं है जिससे यह तथ्य उपदर्शित होता हो कि शिकायतकर्ता की सास ने उसके स्त्रीधन की वस्तुओं को याची को सौंपा था – इसके अतिरिक्त, चूंकि शिकायतकर्ता अपने पति और सास के साथ श्री गंगानगर में निवास कर रही थी जबकि उसका देवर पदमपुर में निवास कर रहा था इसलिए इस बात की संभावना अत्यंत क्षीण प्रतीत होती है कि याची ने शिकायतकर्ता का उत्पीड़न और अपमान किया होगा, अत:, याची के विरुद्ध अभियोजन चलाया जाना अनुचित प्रतीत होता है और इसलिए उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों को अभिखंडित किया गया ।

महेशपाल श्री मनोहर लाल बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य** 235

– धारा 439 और धारा 440 तथा धारा 4(2) [सपठित किशोर-न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 12 और धारा 101] – एक किशोर अभियुक्त द्वारा बाल न्यायालय के समक्ष जमानत

पृष्ठ संख्या

आवेदन प्रस्तुत किया जाना – बाल न्यायालय द्वारा उक्त जमानत आवेदन को खारिज किया जाना – उक्त आदेश से व्यथित होकर किशोर अभियुक्त द्वारा उक्त आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में अपील फाइल किया जाना – इस प्रश्न के संबंध में विवाद्यक उत्पन्न होना कि यदि किसी बाल न्यायालय द्वारा किसी किशोर अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए जमानत आवेदन को खारिज कर दिया जाता है तो क्या उक्त किशोर अभियुक्त उक्त निर्णय को दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंधों के अधीन चुनौती देते हुए अपील फाइल कर सकता है अथवा उसे इस प्रकार की अपील किशोर अधिनियम के सुसंगत उपबंधों के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करनी चाहिए, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने इस विवाद्यक पर विचार करते समय किशोर अधिनियम के सुसंगत उपबंधों और साथ ही उसके उद्देश्यों और कारणों के कथन का गहराई से अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि किशोर अधिनियम को यह सुनिश्चित करने के लिए अधिनियमित किया गया था कि ऐसे किसी बालक, जो विधि के विरोधाभास में है, की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है और उनके मूलभूत मानवाधिकारों की संरक्षा की जाती है और उक्त अधिनियम के अधीन बालक का सर्वोत्तम हित सर्वोपरि है और उक्त अधिनियम के उपबंधों के अधीन अभिकथित अपराध की गंभीरता और प्रकृति, जमानत के आवेदन पर विचार करते समय सारवान् नहीं है और किशोर अधिनियम का एक विशेष अधिनियमिति होने के कारण, किसी किशोर अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए जमानत आवेदन या जमानत

पृष्ठ संख्या

संबंधी किसी अपील के संबंध में किशोर अधिनियम के उपबंध लागू होंगे न कि दंड प्रक्रिया संहिता के जो कि जमानत संबंधी साधारण उपबंधों को अंतर्विष्ट करती है और इसलिए किशोर अधिनियम की धारा 101(5) के अधीन की गई अपील कायम रखे जाने योग्य है ।

गुड्डु कुमार सिंह बनाम **झारखंड राज्य** 145

– धारा 482 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376] – शिकायतकर्ता द्वारा याची/अभियुक्त के विरुद्ध बलात्संग का आरोप लगाते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – अभियुक्त के विरुद्ध यह आरोप लगाया जाना कि उसने विवाह का मिथ्या वचन देकर शिकायतकर्ता के साथ बलात्संग का अपराध कारित किया – अभियुक्त द्वारा उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किए जाने की ईप्सा करते हुए वर्तमान याचिका फाइल किया जाना – इस संबंध में कोई विवाद नहीं है कि अभियुक्त और शिकायतकर्ता पड़ोसी थे और उनके बीच लगभग 12 वर्षों से प्रेम संबंध चल रहे थे और उनके बीच शारीरिक संबंध भी स्थापित हुए थे – यद्यपि, शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि उसने विवाह के मिथ्या वचन के भ्रम में शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए अपनी सम्मति प्रदान की थी, किन्तु इतने लंबे चले प्रेम संबंधों के संबंध में उक्त आरोप उचित तथा युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है – यदि शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए सभी आरोपों को सत्य भी मान लिया जाए तो भी बलात्संग के अपराध के आवश्यक घटक साबित नहीं होते हैं और इसलिए उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में अन्वेषण को जारी रखा

पृष्ठ संख्या

जाना विधि की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तत्समान है – याचिका को मंजूर करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिखंडित की गई ।

सचिन शुक्ला बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य** 242

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 306 – आत्महत्या हेतु दुष्प्रेरण – पीड़ित महिला और अभियुक्त द्वारा घर से भागकर विवाह किया जाना – विवाह के उपरांत अभियुक्त/पति द्वारा कोई रोजगार/कार्य न करना और अत्यधिक मात्रा में मदिरा का सेवन किया जाना – अभियुक्त/पति द्वारा अपनी पत्नी/पीड़ित महिला के सभी जेवरों आदि का विक्रय करके उससे प्राप्त हुए धन से मदिरा पान किया जाना – पति/अभियुक्त द्वारा बार-बार पत्नी/पीड़ित महिला से डांट-डपट करना और उसकी पिटाई करना तथा बार-बार उसे यह कहना कि 'जा और मर जा' – अभियुक्त/पति द्वारा अपने माता-पिता से उनकी संपत्ति में से अपने हिस्से की मांग करना – माता-पिता द्वारा संपत्ति में हिस्सा देने से इनकार किया जाना – अभियुक्त/पति द्वारा क्रोधवश पत्नी की बुरी तरह से पिटाई किया जाना और पुन: यह कथन किया जाना कि 'जा और मर जा' – तत्पश्चात् पत्नी द्वारा अपने शरीर पर डीजल छिड़ककर अग्निदाह करना – अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने पर पत्नी/पीड़ित महिला को अस्पताल में दाखिल किया जाना – डाक्टर द्वारा उसकी चिकित्सा परीक्षा के उपरांत उसकी मन:स्थिति सही होने संबंधी प्रमाणपत्र जारी किया जाना, जिसके उपरांत न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा उसके कथन को लेखबद्ध किया जाना – उसके थोड़े समय पश्चात् पीड़ित

पृष्ठ संख्या

महिला की मृत्यु हो जाना, अत:, उक्त कथन को मृतका के मृत्युकालिक कथन के रूप में न्यायालय के अभिलेख पर रखा जाना – प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा शिकायत/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने में हुए विलंब के संबंध में आक्षेप उठाया जाना – मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह प्रतीत होता है कि शिकायत/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने में हुए विलंब को उपयुक्त रूप से स्पष्ट किया गया है और चिकित्सीय साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अप्राकृतिक थी और उसके द्वारा आत्महत्या करने से तुरंत पूर्व अभियुक्त/पति द्वारा उसकी पिटाई की गई थी और उसे यह कहा गया था कि 'जा और मर जा', अत: विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त/पति की दोषसिद्धि का निर्णय पूर्णत: उचित प्रतीत होता है और उसमें किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

के. तिरुपति बनाम **राज्य, पुलिस निरीक्षक इरोड उत्तर पुलिस थाना, इरोड के माध्यम से** 215

– धारा 376 – अपीलार्थी पर अभियोक्त्री के साथ बलात्संग करने का आरोप लगाया जाना – अपीलार्थी पर यह आरोप लगाया जाना कि अभियोक्त्री और अपीलार्थी पूर्व परिचित थे और अपीलार्थी ने किसी बहाने से अभियोक्त्री को किसी एकांत स्थान पर मिलने के लिए बुलाया और वहां उसने उसके साथ बलात्संग किया और उसकी गर्दन पर चाकू रखकर यह धमकी भी दी कि यदि उसने किसी को इस घटना के बारे में जानकारी दी तो उसके परिणाम अच्छे नहीं होंगे – विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दोषसिद्ध ठहराकर उसके विरुद्ध दंडादेश पारित किया जाना – अपीलार्थी द्वारा उक्त दोषसिद्धि

पृष्ठ संख्या

को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दिया जाना – वर्तमान मामले में इत्तिलाकर्ता अभियोक्त्री का पिता है और उसके द्वारा न्यायालय के समक्ष यह कथन किया जाना कि उसे घटना के संबंध में कोई जानकारी नहीं दी गई थी और न ही उसे अभियुक्त का नाम बताया गया था – अभियोक्त्री द्वारा न्यायालय के समक्ष लेखबद्ध कराए गए कथन में अनेक विसंगतियों का पाया जाना – अन्वेषण अधिकारी द्वारा तैयार किए गए स्थल-नक्शे से घटनास्थल के सटीक अवस्थान का पता न चलना – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब होना और उसके संबंध में कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण उपलब्ध न कराया जाना – चिकित्सा रिपोर्ट और न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट के माध्यम से अभियोक्त्री द्वारा लगाए गए आरोपों की पुष्टि न होना – इस प्रकार एकमात्र अभियोक्त्री के कथन, जो कि ठोस और अकाट्य प्रकृति का प्रतीत नहीं होता है, के आधार पर अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराया जाना उचित नहीं है और इसलिए अपील को मंजूर करते हुए दोषसिद्धि को अपास्त किया गया ।

शजल राय उर्फ **एड्रिन** बनाम **सिक्किम राज्य** 258

धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 (2003 का 15)

– धारा 43, धारा 44(1)(ग) – भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) – धारा 3, धारा 4(1) और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 407 और धारा 220 – दांडिक मामले का एक विशेष न्यायालय से दूसरे विशेष न्यायालय (धन शोधन) को प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा आवेदन किए जाने पर अंतरित किया जाना – अभियुक्त के विरुद्ध भ्रष्टाचार और छल के

पृष्ठ संख्या

अपराधों को करने के संबंध में आरोप लगाया जाना – दोनों मामलों को विचारण हेतु उपरोक्त दोनों विशेष न्यायालयों को भिन्न-भिन्न रूप से सौंपा जाना – प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा न्यायालय के समक्ष यह अनुरोध किया जाना कि भ्रष्टाचार से संबंधित मामले के विचारण को विशेष न्यायालय (धन शोधन) को अंतरित किया जाए – न्यायालय द्वारा मामले को अंतरित किए जाने संबंधी आदेश पारित किया जाना – अभियुक्त द्वारा उक्त अंतरण किए जाने संबंधी आक्षेपित आदेश को इस आधार पर चुनौती दिया जाना कि विशेष न्यायालय (धन शोधन) के पास भ्रष्टाचार से संबंधित अपराधों का विचारण करने की अधिकारिता विद्यमान नहीं है – उच्च न्यायालय द्वारा दोनों विशेष अधिनियमों में अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंडों, जो उक्त विशेष अधिनियमों के उपबंधों को अध्यारोही प्रभाव प्रदान करते हैं, की समीक्षा किया जाना और इस निष्कर्ष पर पहुंचना कि धन शोधन निवारण अधिनियम की धारा 44(1) के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे तथा उक्त अधिनियम की धारा 44(1)(ग) में प्रयुक्त भाषा में किसी प्रकार की कोई अस्पष्टता नहीं है और चूंकि 2003 का उक्त अधिनियम एक पश्चात्वर्ती अधिनियमिति है इसलिए उसके उपबंध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के उपबंधों पर अभिभावी होंगे और इसलिए 1988 के अधिनियम के अधीन दंडनीय अनुसूचित अपराधों का विशेष न्यायालय (धन शोधन) द्वारा विचारण किया जा सकता है और इसलिए आक्षेपित आदेश में किसी प्रकार की त्रुटि विद्यमान नहीं है ।

उपेन्द्र राय बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और अन्य** 161

गुड्डु कुमार सिंह

बनाम

झारखंड राज्य

(2020 की जमानत अपील सं. 4677)

तारीख 12 मई, 2021

मुख्य न्यायमूर्ति रवि रंजन और न्यायमूर्ति सुजित नारायण प्रसाद

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 439 और धारा 440 तथा धारा 4(2) [सपठित किशोर-न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 12 और धारा 101] – एक किशोर अभियुक्त द्वारा बाल न्यायालय के समक्ष जमानत आवेदन प्रस्तुत किया जाना – बाल न्यायालय द्वारा उक्त जमानत आवेदन को खारिज किया जाना – उक्त आदेश से व्यथित होकर किशोर अभियुक्त द्वारा उक्त आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में अपील फाइल किया जाना – इस प्रश्न के संबंध में विवाद्यक उत्पन्न होना कि यदि किसी बाल न्यायालय द्वारा किसी किशोर अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए जमानत आवेदन को खारिज कर दिया जाता है तो क्या उक्त किशोर अभियुक्त उक्त निर्णय को दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंधों के अधीन चुनौती देते हुए अपील फाइल कर सकता है अथवा उसे इस प्रकार की अपील किशोर अधिनियम के सुसंगत उपबंधों के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करनी चाहिए, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने इस विवाद्यक पर विचार करते समय किशोर अधिनियम के सुसंगत उपबंधों और साथ ही उसके उद्देश्यों और कारणों के कथन का गहराई से अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि किशोर अधिनियम को यह सुनिश्चित करने के लिए अधिनियमित किया

गया था कि ऐसे किसी बालक, जो विधि के विरोधाभास में है, की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है और उनके मूलभूत मानवाधिकारों की संरक्षा की जाती है और उक्त अधिनियम के अधीन बालक का सर्वोत्तम हित सर्वोपरि है और उक्त अधिनियम के उपबंधों के अधीन अभिकथित अपराध की गंभीरता और प्रकृति, जमानत के आवेदन पर विचार करते समय सारवान् नहीं है और किशोर अधिनियम का एक विशेष अधिनियमिति होने के कारण, किसी किशोर अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए जमानत आवेदन या जमानत संबंधी किसी अपील के संबंध में किशोर अधिनियम के उपबंध लागू होंगे न कि दंड प्रक्रिया संहिता के जो कि जमानत संबंधी साधारण उपबंधों को अंतर्विष्ट करती है और इसलिए किशोर अधिनियम की धारा 101(5) के अधीन की गई अपील कायम रखे जाने योग्य है ।

वर्तमान अपील का निपटारे करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि नियमित जमानत मंजूर किए जाने के लिए एक जमानत याचिका, जो 2020 की एम.सी.ए. सं. 847 के रूप में है, अपीलार्थी गुड्डु कुमार सिंह जो एक किशोर है और जो बलियापुर पुलिस थाने के वर्ष 2019 के अपराध मामला सं. 151, जो भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 302/34 के अधीन रजिस्ट्रीकृत 2020 के जी.आर. मामला सं. 199 से संबंधित है, के संबंध तारीख 8 नवम्बर, 2019 से संप्रेक्षण गृह में बंद है, ने जिला और अपर सेशन न्यायाधीश-1, धनबाद के समक्ष प्रस्तुत की थी, जिसे विद्वान् न्यायाधीश द्वारा तारीख 17 जून, 2020 को पारित आदेश के माध्यम से नामंजूर कर दिया गया था । उक्त आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 और 440 के अधीन वर्तमान जमानत आवेदन फाइल किया गया है । उक्त मामला सुनवाई हेतु विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत किया गया । न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपने तारीख 17 अक्तूबर, 2020 के आदेश के माध्यम से किसी किशोर के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 439 के अधीन जमानत के आवेदन को बनाए रखने या किशोर-न्याय (बालकों की देखरेख और

संरक्षण) अधिनियम, 2015 (2016 का 2) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'किशोर अधिनियम' कहा गया है) की धारा 101 के अधीन उपलब्ध उपचार के विवाद्यक के संबंध में खंडपीठ को प्रतिनिर्देश किया है, क्योंकि प्रश्नगत विवाद्यक के संबंध में दो प्रतिकूल मतों को अभिव्यक्त किया गया है । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने वर्तमान मामले में उद्भूत विवाद्यक को उल्लिखित करते हुए उसके संबंध में विनिश्चय करने के लिए मामले को उच्च न्यायालय की खंडपीठ को निर्दिष्ट किया । खंडपीठ ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री तथा किशोर अधिनियम के सुसंगत उपबंधों तथा किशोर अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन पर गहराई से विचार करने के पश्चात् निम्नानुसार अपना निष्कर्ष प्रस्तुत किया,

अभिनिर्धारित – किशोर अधिनियम के अधीन जमानत दिए जाने के संबंध में विचार करने हेतु अपराध की गंभीरता और प्रकृति सारवान् नहीं है । किसी ऐसे व्यक्ति, जिसने 18 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है, को इस बात पर ध्यान न देते हुए कि अपराध की प्रकृति 'जमानतीय' है अथवा 'गैर-जमानतीय' है या उसे अधिनियम के अधीन तीन प्रवर्गों में से किसी के अधीन 'छोटे-मोटे अपराधों', 'गंभीर अपराधों' और 'जघन्य अपराधों' के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है, जमानत मंजूर करने की शक्ति बोर्ड में निहित है । किशोर अधिनियम की धारा 101 से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि उसमें एक ऐसा उपबंध अंतर्विष्ट है, जो किशोर अधिनियम की धारा 101 की उपधारा (5) के उपबंधों के अधीन समिति या बोर्ड द्वारा पारित किसी आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष अपील प्रस्तुत किए जाने की अनुज्ञा प्रदान करता है । ऊपर कोट किए गए अनुसार अधिनियम में उद्देश्यों के कारणों के कथन को अंत:स्थापित करने का प्रयोजन यह है कि किशोर अधिनियम को अनन्य रूप से किसी बालक के कल्याण, उसकी उचित देखरेख, संरक्षा, विकास और उपचार से संबंधित मामलों के संबंध में कार्यवाही करने या बालकों के सर्वोत्तम हित में मामलों का निपटारा करने के लिए कार्यवाही करने हेतु अधिनियमित किया गया है । यह एक विशेष अधिनियमिति है जिसे ऐसे किसी बालक, जो विधि के विरोधाभास में है, के हितों और अधिकारों को संरक्षित रखने के लिए अधिनिमित किया गया है । विधि की यह

सुस्थापित स्थिति है कि यदि किसी विशेष कानून को अधिनियमित किया गया है तो उसके अंतर्गत आने वाले मामलों के संबंध में साधारण प्रक्रिया के उपबंध लागू नहीं होंगे जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4(2) के अधीन यथाअंतर्विष्ट उपबंधों में कथन किया गया है । उक्त धारा के उपबंधों के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी अन्य विधि के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण, जांच, विचारण और उनके संबंध में अन्य कार्यवाही इन्हीं उपबंधों के अनुसार, किन्तु ऐसे अपराध के अन्वेषण, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही की रीति या स्थान का विनियमन करने वाली तत्समय प्रवृत्त किसी अधिनियमिति के अधीन रहते हुए, की जाएगी । यदि ऐसे किसी कानून को ऐसे मामलों के संबंध में कार्यवाही किए जाने के लिए अधिनियमित किया गया है तो उसमें अंतर्विष्ट उपबंध लागू होंगे । इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं है कि किशोर अधिनियम को एकमात्र रूप से किशोरों के प्रयोजन के लिए अधिनियमित किया गया है, जिसमें किशोर अधिनियम की धारा 12 के अधीन जमानत और धारा 101 की उपधारा (5) के अधीन अपील प्रस्तुत करने संबंधी उपबंध अंतर्विष्ट हैं । अत: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 और 440 के अधीन, जो एक साधारण उपबंध हैं, फाइल किए गए जमानत आवेदन के संबंध में विचार किए जाने के समय उपरोक्त धाराओं के उपबंध लागू नहीं होंगे, इसकी बजाय ऐसे किसी आदेश के विरुद्ध अपील, यदि किशोर अधिनियम की धारा 101 की उपधारा (5) के अधीन की जाती है तो वह कायम रखे जाने योग्य होगी । यह स्पष्ट किया जाता है कि '...दंड प्रक्रिया संहिता में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार' पद से यह अभिप्रेत नहीं है कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध लागू होंगे इसकी बजाय इससे केवल यह प्रक्रिया अभिप्रेत है न कि सारवान् धारा । इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने तद्नुसार विवाद्यक का उत्तर उपलब्ध कराया । तद्नुसार, उच्च न्यायालय ने मामले को विद्वान् एकल न्यायाधीश को वापस भेजा, जिससे कि वह विधि के अनुसार उस न्यायालय द्वारा किए गए प्रतिनिर्देश के उत्तर को विचार में लेते हुए इस मामले में उपयुक्त आदेश पारित करे । (पैरा 10, 11, 12, 13, 14 और 15)

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2020 की जमानत अपील सं. 4677.

अपीलार्थी गुड्डु कुमार सिंह द्वारा पूर्व में नियमित जमानत मंजूर किए जाने के लिए एक जमानत याचिका प्रस्तुत की गई थी, जो बलियापुर पुलिस थाने के वर्ष 2019 के मामला सं. 151 से संबंधित थी और जिसे जिला और अपर सेशन न्यायाधीश-1, धनबाद के समक्ष प्रस्तुत किया गया था । उक्त जमानत याचिका को नामंजूर कर दिया गया था, जिससे व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की गई, जिसके संबंध में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा सुनवाई की गई और मामले में दो प्रतिकूल निष्कर्ष सामने आने के कारण विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा उक्त अपील को इस न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष निर्दिष्ट किया गया, जिसने उक्त अपील पर सुनवाई करते हुए एकल न्यायाधीश द्वारा उसे निर्दिष्ट विवाद्यक के संबंध में अपना निर्णय दिया ।

अपीलार्थी की ओर से मुकेश बिहारी लाल, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री सतीश प्रसाद, एपीपी और रोहित

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति रवि रंजन ने दिया ।

मु. न्या. रंजन – दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की सहमति से इस मामले की सुनवाई वीडियो कांफ्रेंसिंग के माध्यम से की गई है । विद्वान् काउंसेलों में से किसी ने भी उक्त कांफ्रेंसिंग की श्रव्य और दृश्य गुणवत्ता के संबंध में कोई शिकायत प्रस्तुत नहीं की है ।

2. वर्तमान जमानत आवेदन की सुनवाई इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा की जा रही है क्योंकि इस न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपने तारीख 17 अक्तूबर, 2020 के आदेश के माध्यम से किसी किशोर के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 439 के अधीन जमानत के आवेदन को बनाए रखने या किशोर-न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (2016 का 2) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'किशोर अधिनियम' कहा गया है) की धारा 101 के अधीन उपलब्ध उपचार के विवाद्यक के संबंध में खंडपीठ को प्रतिनिर्देश किया है, क्योंकि प्रश्नगत विवाद्यक के संबंध में दो प्रतिकूल मतों को अभिव्यक्त किया गया है ।

सुगम संदर्भ के लिए, विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा खंडपीठ के

समक्ष उत्तर दिए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए प्रतिनिर्देश को यहां नीचे उल्लिखित किया गया है :–

> "(i) क्या किशोर अधिनियम की धारा 101 की उपधारा (5) को ध्यान में रखते हुए, ऐसे किसी मामले में अपील कार्यवाही किए जाने योग्य है, जहां किसी किशोर द्वारा किशोर अधिनियम के अधीन बाल न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत जमानत के आवेदन को रद्द कर दिया जाता है ?
>
> (ii) क्या 2017 की दांडिक अपील (एस.जे.) सं. 2119 में [शाहबुद्दीन अंसारी **उर्फ** नन्नू अंसारी **उर्फ** मोहमम्द शाहबुद्दीन अंसारी **बनाम** झारखंड राज्य और वाले मामले में] समन्वय खंडपीठ द्वारा तारीख 11 दिसम्बर, 2017 को पारित आदेश, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अपील कायम रखे जाने योग्य नहीं हैं, विधि के अनुसार सही है अथवा नहीं ?"

3. श्री मुकेश बिहारी लाल, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील प्रस्तुत की गई है कि नियमित जमानत मंजूर किए जाने के लिए एक जमानत याचिका, जो 2020 की एम.सी.ए. सं. 847 के रूप में है, अपीलार्थी गुड्डु कुमार सिंह जो एक किशोर है और जो बलियापुर पुलिस थाने के वर्ष 2019 के अपराध मामला सं. 151, जो भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 302/34 के अधीन रजिस्ट्रीकृत 2020 के जी.आर. मामला सं. 199 से संबंधित है, के संबंध तारीख 8 नवम्बर, 2019 से संप्रेक्षण गृह में बंद है, ने जिला और अपर सेशन न्यायाधीश-1, धनबाद के समक्ष प्रस्तुत की थी, जिसे विद्वान् न्यायाधीश द्वारा तारीख 17 जून, 2020 को पारित आदेश के माध्यम से नामंजूर कर दिया गया था ।

4. उक्त आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 और 440 के अधीन वर्तमान जमानत आवेदन फाइल किया गया है ।

5. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील प्रस्तुत की गई है कि चूंकि अपीलार्थी के जमानत आवेदन को सेशन न्यायाधीश द्वारा

नामंजूर कर दिया गया था इसलिए अपीलार्थी के पास केवल यही विकल्प बचा है कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 और 440 के अधीन जमानत आवेदन फाइल करे और किशोर अधिनियम की धारा 101 में यथाअंतर्विष्ट उपबंध इस मामले में लागू नहीं होंगे ।

अपनी दलील के समर्थन में, विद्वान् काउंसेल ने 2017 की दांडिक अपील (एस.जे.) सं. 2119 में [शाहबुद्दीन अंसारी **उर्फ** नन्नू अंसारी **उर्फ** मोहमम्द शाहबुद्दीन अंसारी **बनाम** झारखंड राज्य और अन्य वाले मामले में] दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि "…. वर्तमान मामले के निष्कर्षों को चुनौती नहीं दी गई है, इसके बजाय अपीलार्थी को जमानत मंजूर किए जाने हेतु प्रार्थना की गई है । अपीलार्थी को जमानत दिए जाने संबंधी प्रार्थना विधि के नियमित उपबंधों के अधीन की गई है । इसलिए, यह दांडिक अपील वर्तमान रूप में कायम रखे जाने योग्य नहीं है ।"

6. राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् एपीपी श्री सतीश प्रसाद और इत्तिलाकर्ता की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री रोहित ने संयुक्त रूप से यह दलील प्रस्तुत की है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के अधीन किया गया कोई आवेदन नियमित जमानत को मंजूर किए जाने के लिए लागू नहीं होगा, इसकी बजाय किशोर अधिनियम की धारा 101 की उपधारा (5) में यथाअंतर्विष्ट उपबंध वर्तमान मामले के संबंध में लागू होंगे ।

7. इस न्यायालय ने सभी पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुना और प्रश्नगत विवाद्यक का उत्तर देने से पूर्व यह न्यायालय यह उपयुक्त तथा उचित समझता है कि किशोर अधिनियम की धारा 101 में यथाअंतर्विष्ट उपबंधों का समग्र रूप से परिशीलन किया जाए ।

सुगम संदर्भ के लिए उक्त धारा के उपबंधों को नीचे प्रस्तुत किया गया है :–

> "101(1) – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम के अधीन समिति या बोर्ड द्वारा किए गए किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति, ऐसा आदेश किए जाने की तारीख

से 30 दिन के भीतर, पोषण, देखरेख और प्रवर्तकता पश्च देखरेख संबंधी समिति के ऐसे विनिश्चयों के सिवाय, जिनके संबंध में अपील जिला मजिस्ट्रेट को होगी, बालक न्यायालय में अपील कर सकेगा :

परंतु यथास्थिति, बालक न्यायालय या जिला मजिस्ट्रेट, 30 दिन की उक्त अवधि के अवसान के पश्चात् अपील ग्रहण कर सकेगा, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी को पर्याप्त कारणों से समय पर अपील करने से निवारित किया गया था और ऐसी अपील का विनिश्चय 30 दिन की अवधि के भीतर किया जाएगा ।

(2) अधिनियम की धारा 15 के अधीन किसी जघन्य अपराध का प्रारंभिक निर्धारण करने के पश्चात्, बोर्ड द्वारा पारित किसी आदेश के विरुद्ध अपील सेशन न्यायालय को होगी और वह न्यायालय अपील का विनिश्चय करते समय अनुभवी मनोचिकित्सकों और चिकित्सा विशेषज्ञों की, उनसे भिन्न जिनकी सहायता बोर्ड द्वारा उक्त धारा के अधीन आदेश पारित करने में अभिप्राप्त की जा चुकी है, सहायता ले सकेगा ।

(3)(क) ऐसे किसी बालक के संबंध में, जिसके बारे में यह अभिकथन है कि उसने ऐसा कोई अपराध किया है, जो ऐसे किसी बालक द्वारा, जिसने 16 साल की आयु पूरी कर ली है या जो 16 वर्ष से अधिक आयु का है, किए गए जघन्य अपराध से भिन्न है, बोर्ड द्वारा किए गए दोषमुक्ति के आदेश ; या

(ख) समिति द्वारा, इस निष्कर्ष के संबंध में कि वह व्यक्ति ऐसा बालक नहीं है जिसे देखरेख और संरक्षा की आवश्कता हो, किए गए किसी आदेश,

के विरुद्ध अपील नहीं होगी ।

(4) इस धारा के अधीन अपील में पारित सेशन न्यायालय के किसी आदेश के विरुद्ध द्वितीय अपील नहीं होगी ।

(5) बालक न्यायालय के आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति दंड

प्रक्रिया संहिता में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल कर सकेगा ।"

पूर्वोक्त उपबंधों के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि किशोर अधिनियम के अधीन समिति या बोर्ड द्वारा किए गए किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति, ऐसे आदेश की तारीख से 30 दिन के भीतर, बालक न्यायालय के समक्ष अपील कर सकेगा, सिवाय समिति के ऐसे निर्णयों के विरुद्ध, जो पोषण, देखरेख और प्रवर्तकता पश्च देखरेख से संबंधित हैं, जिनके विरुद्ध अपील जिला मजिस्ट्रेट को की जाएगी ।

उक्त धारा की उपधारा (2) किशोर अधिनियम की धारा 15 के अधीन पारित किसी आदेश के विरुद्ध, विधि के विरोधाभास में किसी बालक द्वारा किए गए 'जघन्य अपराध' के संबंध में किए गए प्रारंभिक निर्धारण के पश्चात् अपील किए जाने के लिए उपबंध करती है ।

उक्त धारा की उपधारा (4) यह उपबंधित करती है कि इस धारा के अधीन की गई किसी अपील में सेशन न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश के विरुद्ध कोई द्वितीय अपील नहीं की जाएगी । धारा 101 की उपाधारा (5) यह उपबंध करती है कि बालक न्यायालय के आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति दंड प्रक्रिया संहिता में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल कर सकेगा ।

8. किशोर अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन के परिशीलन से यह भी स्पष्ट होता है कि उक्त अधिनियम को यह सुनिश्चित करने हेतु अधिनियमित किया गया था कि बालकों की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है और उनके मूलभूत मानवाधिकारों को पूर्ण रूप से सुरक्षित किया जाता है ।

सुगम संदर्भ के लिए किशोर अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन को यहां नीचे उद्धृत किया गया है :–

"**उद्देश्यों और कारणों का कथन**

संविधान का अनुच्छेद 15, अन्य बातों के साथ, राज्य को बालकों के लिए विशेष उपबंध करने की शक्ति प्रदान करता है । अनुच्छेद 39(ङ) और (च), अनुच्छेद 45 और अनुच्छेद 47, राज्य

को यह सुनिश्चित करने के लिए कि बालकों की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है और उनके मूल मानव अधिकार सुरक्षित हैं, उत्तरदायी बनाते हैं ।

2. बालकों के अधिकार से संबंधित संयुक्त राष्ट्र अभिसमय, जिसका भारत द्वारा 11 दिसम्बर, 1992 को अनुसमर्थन किया गया था, राज्य पक्षकारों से यह अपेक्षा करता है कि वे शास्तिक विधि के उल्लंघन के ऐसे किसी मामले में, जिसमें बालक एक अभियुक्त है या किसी बालक को अभियुक्त के रूप में अभिकथित किया गया है, सभी उपयुक्त उपाय करेंगे, जिसके अन्तर्गत (क) बालक के साथ ऐसी रीति में व्यवहार करना, जो बालक की प्रतिष्ठा और महत्व की भावना के संवर्धन से सुसंगत हो (ख) बालक में मानव अधिकारों और अन्य व्यक्तियों की मूल स्वतंत्रताओं के लिए आदर को सुदृढ़ करने (ग) बालक की आयु को ध्यान में रखते हुए और बालक का समाज के साथ पुनः सुमेलन का संवर्धन करने और एक सकारात्मक भूमिका धारण करने की वांछा को ध्यान में रखने जैसे उपाय भी हैं ।

3. किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम को वर्ष 2000 में बालकों के संरक्षण का उपबंध करने के लिए अधिनियमित किया गया था । अधिनियम के क्रियान्वयन में कमियों को दूर करने और विधि को और अधिक बालक-मित्र बनाने के लिए वर्ष 2006 और वर्ष 2011 में अधिनियम का दो बार संशोधन किया गया था । अधिनियम के कार्यान्वयन के दौरान, अनेक मुद्दे सामने आए थे जैसेकि संस्थाओं में बालकों के साथ दुर्व्यवहार की बढती घटनाएं, अपर्याप्त सुविधाएं, गृहों में देखरेख और पुनर्वास उपायों की गुणवत्ता, अधिक संख्या में मामलों का लंबित रहना, त्रुटिपूर्ण और अपूर्ण कार्यवाहियों के कारण दत्तक में विलंब, संस्थाओं की भूमिकाओं, उत्तरदायित्व और जवाबदेही की स्पष्टता के संबंध में कमी और बालकों के विरुद्ध अपराधों को कम करने के लिए उपबंधों की अपर्याप्तता जैसे कि शरीरिक दंड, दत्तक के प्रयोजनों के लिए बालकों का विक्रय आदि, जिन्होंने विद्यमान विधि के पुनर्विलोकन की आवश्यकता को दर्शित किया है ।

4. इसके अतिरिक्त, हाल ही के वर्षों में 16-18 आयु वर्ग के बालकों द्वारा कारित किए जाने वाले अपराधों के बढ़ते मामले यह स्पष्ट करते हैं कि किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के विद्यमान उपबंध और उसके अधीन प्रणाली, इस आयु वर्ग के बालकों से संबंधित अपराधियों को दूर करने के लिए सुसज्जित नहीं हैं । राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो द्वारा संगृहीत डाटा यह सुस्थापित करता है कि 16-18 आयु वर्ग के बालकों द्वारा कारित किए जाने वाले अपराधों में वृद्धि हुई है, विशेष रूप से कतिपय प्रवर्गों के जघन्य अपराधों में ।

5. ऊपर उल्लेखित मुद्दों का समाधान करने के लिए विद्यमान किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 में अनेकों परिवर्तन अपेक्षित हैं और इसलिए, यह प्रस्ताव किया जाता है कि विद्यमान किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 को निरसित करके एक व्यापक विधान को पुनः अधिनियमित किया जाए, जो अन्य बातों के साथ, बालकों की देखरेख और संरक्षण के साधारण सिद्धान्तों, देखरेख और संरक्षण की आवश्यकता रखने वाले बालकों और ऐसे बालकों के, जो विधि का साथ विरोधाभास में हैं, मामलों में प्रक्रियाओं, ऐसे बालकों के लिए पुनर्वास और सामाजिक पुनः सुमेलन के लिए उपाय, अनाथ, परित्यक्त और अभ्यर्पित बालकों का दत्तक और बालकों के विरुद्ध किए गए अपराधों के लिए उपबंध करेगा । यह विधान, इस प्रकार बालक के सर्वोत्तम हित को ध्यान में रखते हुए एक बालक-मित्र प्रक्रिया को अपनाते हुए कठिन परिस्थितियों में फंसे बालकों के लिए उचित देखरेख, संरक्षण, विकास, व्यवहार और सामाजिक पुनः सुमेलन को सुनिश्चित करेगा ।

6. खंडों पर टिप्पण, विधेयक में अन्तर्विष्ट विभिन्न उपबंधों को ब्यौरेवार स्पष्ट करते हैं ।

7. यह विधेयक उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए है ।"

किशोर अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन का पैरा (1) राज्य को बालकों के लिए विशेष उपबंध करने की शक्ति प्रदान

करता है । इसके अतिरिक्त, वह राज्य को यह सुनिश्चित करने हेतु उत्तरदायी बनाता है कि बालकों की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है और उनके मूलभूत मानवाधिकारों की संरक्षा की जाती है । उद्देश्यों और कारणों के कथन का पैरा 2 राज्यों से यह अपेक्षा करता है कि वे शास्तिक विधि के उल्लंघन के ऐसे किसी मामले में, जिसमें बालक एक अभियुक्त है या किसी बालक को अभियुक्त के रूप में अभिकथित किया गया है, सभी उपयुक्त उपाय करेंगे, जिसके अन्तर्गत (क) बालक के साथ ऐसी रीति में व्यवहार करना, जो बालक की प्रतिष्ठा और महत्व की भावना के संवर्धन से सुसंगत हो (ख) बालक में मानव अधिकारों और अन्य व्यक्तियों की मूल स्वतंत्रताओं के लिए आदर को सुदृढ़ करने (ग) बालक की आयु को ध्यान में रखते हुए और बालक का समाज के साथ पुनः सुमेलन का संवर्धन करने और एक सकारात्मक भूमिका धारण करने की वांछा को ध्यान में रखने जैसे उपाय भी हैं । उद्देश्यों और कारणों के कथन का पैरा 4, 16-18 वर्ष की आयु समूह के किसी ऐसे बालक, जो किसी 'जघन्य अपराध' के मामले में विधि के विरोधाभास में है, के प्रति ध्यान केन्द्रित करता है । उक्त पैरा में यह कथन है कि 2000 के अधिनियम के अधीन विद्यमान उपबंध और प्रणाली 16-18 वर्ष की आयु समूह के बालक अपराधियों के संबंध में कार्यवाही करने के लिए उपयुक्त रूप से सज्जित नहीं है क्योंकि उक्त आयु समूह के बालकों द्वारा किए जाने वाले अपराधों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है, विशेष रूप से 'जघन्य अपराधों' की श्रेणी में आने वाले अपराधों के मामलों में ।

उद्देश्यों और कारणों के कथन का पैरा 5, 2000 के विद्यमान अधिनियम को निरसित करने का और साथ ही एक व्यापक विधान को पुनः अधिनियमित करने का प्रस्ताव करता है, जो अन्य बातों के साथ, बालकों की देखरेख और संरक्षण के साधारण सिद्धान्तों, देखरेख और संरक्षण की आवश्यकता रखने वाले बालकों और ऐसे बालकों के, जो विधि का साथ विरोधाभास में हैं, मामलों में प्रक्रियाओं, ऐसे बालकों के लिए पुनर्वास और सामाजिक पुनः सुमेलन के लिए उपाय, अनाथ, परित्यक्त और अभ्यर्पित बालकों का दत्तक और बालकों के विरुद्ध किए

गए अपराधों के लिए उपबंध करेगा । यह विधान, इस प्रकार बालक के सर्वोत्तम हित को ध्यान में रखते हुए एक बालक-मित्र प्रक्रिया को अपनाएगा ।

9. किशोर अधिनियम के प्रारंभिक कथन में अधिनियम के कारणों और प्रयोजनों को अंतर्विष्ट किया गया है ।

सुगम संदर्भ के लिए किशोर अधिनियम की प्रस्तावना और प्रारंभिक कथन को यहां नीचे उद्धृत किया गया है :–

> "विधि के उल्लंघन के लिए अभिकथित और उल्लंघन करते हुए पाए जाने वाले बालकों और देखरेख तथा संरक्षण की आवश्यकता वाले बालकों से संबंधित विधि का समेकन और संशोधन करने के लिए, बालकों के सर्वोत्तम हित में मामले के न्याय-निर्णयन और निपटाने में बालकों के प्रति मित्रवत अपनाते हुए समुचित देखरेख, सुरक्षा, विकास, उपचार, समाज में पुन: मिलाने के माध्यम से उनकी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करते हुए और उपबंधित प्रक्रियाओं तथा इसके अधीन स्थापित संस्थाओं और निकायों के माध्यम से उनके पुनर्वासन के लिए तथा उससे संबंधित और उसके आनुषंगिक विषयों के लिए अधिनियम ।
>
> संविधान के अनुच्छेद 15 के खंड (3), अनुच्छेद 39 के खंड (ङ) और खंड (च), अनुच्छेद 45 और अनुच्छेद 47 के उपबंधों के अधीन यह सुनिश्चित करने के लिए बालकों की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जाए और उनके मूलभूत मानव अधिकारों की पूर्णतया संरक्षा की जाए, शक्तियां प्रदान की गई हैं और कर्तव्य अधिरोपित किए गए हैं ;
>
> और, भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा द्वारा अंगीकृत बालकों के अधिकारों से संबंधित अभिसमय को, जिसमें ऐसे मानक विहित किए गए हैं जिनका बालक के सर्वोत्तम हित को सुनिश्चित करने में सभी राज्य पक्षकारों द्वारा पालन किया जाना है, 11 दिसम्बर, 1992 को अंगीकार किया था ;
>
> और विधि का उल्लंघन करने के अभिकथित और उल्लंघन करते पाए जाने वाले बालकों तथा देखरेख और संरक्षण की

आवश्यकता वाले बालकों के लिए बालक के अधिकारों से संबंधित अभिसमय, किशोर न्याय के प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम, 1985 (बीजिंग नियम), अपनी स्वतंत्रता से वंचित संयुक्त राष्ट्र किशोर संरक्षण नियम (1990), बालक संरक्षण और अंतरदेशीय दत्तकग्रहण की बाबत बालको के संरक्षण और सहयोग संबंधित हेग अभिसमय (1993) और अन्य संबद्ध अंतरराष्ट्रीय लिखतों में विहित मानकों को ध्यान में रखते हुए व्यापक उपबंध करने के लिए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (2000 का 56) को पुन: अधिनियमित करना समीचीन है ।"

किशोर अधिनियम की धारा 10 यह उपबंध करती है कि जैसे ही विधि का उल्लंघन करने वाले अभिकथित बालक को पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया जाता है तभी ऐसे बालक को विशेष किशोर पुलिस एकक या अभिहित कल्याण पुलिस अधिकारी के प्रभार के अधीन रखा जाएगा । उक्त धारा में यह भी उपबंधित है कि राज्य सरकार उन व्यक्तियों हेतु उपबंध करने के लिए जिनके द्वारा विधि का उल्लंघन करने वाले अभिकथित किसी बालक को बोर्ड के समक्ष पेश किया जा सकेगा और साथ ही वह ऐसी रीति के लिए उपबंध कर सकेगी जिससे विधि का उल्लंघन करने वाले अभिकथित बालक को, यथास्थिति, किसी संप्रेक्षण गृह या सुरक्षित स्थान में भेजा जा सकेगा । किशोर अधिनियम की धारा 12 यह उपबंध करती है कि बोर्ड कर्तव्यबद्ध रूप से किशोर अधिनियम की धारा 3 में उल्लिखित मूलभूत सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित होगा, विशेष रूप से बालक के 'सर्वोत्तम हित', 'प्रत्यावर्तन' और 'समाज की मुख्य धारा में वापस लाने' के सिद्धांतों द्वारा । किशोर अधिनियम की धारा 3(xii) में अंतर्विष्ट मूलभूत सिद्धांत यह उपबंध करते हैं कि किसी बालक को अंतिम विकल्प के उपाय के रूप में युक्तियुक्त जांच करने के पश्चात् संस्थागत देखरेख के अधीन रखा जाएगा ।

10. किशोर अधिनियम के अधीन जमानत दिए जाने के संबंध में विचार करने हेतु अपराध की गंभीरता और प्रकृति सारवान् नहीं है । किसी ऐसे व्यक्ति, जिसने 18 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है, को इस बात पर ध्यान न देते हुए कि अपराध की प्रकृति 'जमानतीय' है अथवा 'गैर-जमानतीय' है या उसे अधिनियम के अधीन तीन प्रवर्गों में से किसी

के अधीन 'छोटे-मोटे अपराधों', 'गंभीर अपराधों' और 'जघन्य अपराधों' के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है, जमानत मंजूर करने की शक्ति बोर्ड में निहित है ।

11. किशोर अधिनियम की धारा 101 से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि उसमें एक ऐसा उपबंध अंतर्विष्ट है, जो किशोर अधिनियम की धारा 101 की उपधारा (5) के उपबंधों के अधीन समिति या बोर्ड द्वारा पारित किसी आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष अपील प्रस्तुत किए जाने की अनुज्ञा प्रदान करता है । ऊपर कोट किए गए अनुसार अधिनियम में उद्देश्यों के कारणों के कथन को अंत:स्थापित करने का प्रयोजन यह है कि किशोर अधिनियम को अनन्य रूप से किसी बालक के कल्याण, उसकी उचित देखरेख, संरक्षा, विकास और उपचार से संबंधित मामलों के संबंध में कार्यवाही करने या बालकों के सर्वोत्तम हित में मामलों का निपटारा करने के लिए कार्यवाही करने हेतु अधिनियमित किया गया है । यह एक विशेष अधिनियमिति है जिसे ऐसे किसी बालक, जो विधि के विरोधाभास में है, के हितों और अधिकारों को संरक्षित रखने के लिए अधिनिमित किया गया है ।

12. विधि की यह सुस्थापित स्थिति है कि यदि किसी विशेष कानून को अधिनियमित किया गया है तो उसके अंतर्गत आने वाले मामलों के संबंध में साधारण प्रक्रिया के उपबंध लागू नहीं होंगे जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4(2) के अधीन यथाअंतर्विष्ट उपबंधों में कथन किया गया है ।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 4(2) निम्नानुसार है :–

> "(2) किसी अन्य विधि के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण, जांच, विचारण और उनके संबंध में अन्य कार्यवाही इन्हीं उपबंधों के अनुसार, किन्तु ऐसे अपराध के अन्वेषण, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही की रीति या स्थान का विनियमन करने वाली तत्समय प्रवृत्त किसी अधिनियमिति के अधीन रहते हुए, की जाएगी ।"

उपरोक्त उपबंध के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी अन्य विधि के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण, जांच, विचारण और

उनके संबंध में अन्य कार्यवाही इन्हीं उपबंधों के अनुसार, किन्तु ऐसे अपराध के अन्वेषण, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही की रीति या स्थान का विनियमन करने वाली तत्समय प्रवृत्त किसी अधिनियमिति के अधीन रहते हुए, की जाएगी । यदि ऐसे किसी कानून को ऐसे मामलों के संबंध में कार्यवाही किए जाने के लिए अधिनियमित किया गया है तो उसमें अंतर्विष्ट उपबंध लागू होंगे । इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद नहीं है कि किशोर अधिनियम को एकमात्र रूप से किशोरों के प्रयोजन के लिए अधिनियमित किया गया है, जिसमें किशोर अधिनियम की धारा 12 के अधीन जमानत और धारा 101 की उपधारा (5) के अधीन अपील प्रस्तुत करने संबंधी उपबंध अंतर्विष्ट हैं ।

13. अत: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 और 440 के अधीन, जो एक साधारण उपबंध हैं, फाइल किए गए जमानत आवेदन के संबंध में विचार किए जाने के समय उपरोक्त धाराओं के उपबंध लागू नहीं होंगे, इसकी बजाय ऐसे किसी आदेश के विरुद्ध अपील, यदि किशोर अधिनियम की धारा 101 की उपधारा (5) के अधीन की जाती है तो वह कायम रखे जाने योग्य होगी । यह स्पष्ट किया जाता है कि '...दंड प्रक्रिया संहिता में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार' पद से यह अभिप्रेत नहीं है कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध लागू होंगे इसकी बजाय इससे केवल यह प्रक्रिया अभिप्रेत है न कि सारवान् धारा ।

14. इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हम तद्नुसार विवाद्यक का उत्तर उपलब्ध करा रहे हैं ।

15. तद्नुसार, हम मामले को विद्वान् एकल न्यायाधीश को वापस भेज रहे हैं, जिससे कि वह विधि के अनुसार उस न्यायालय द्वारा किए गए प्रतिनिर्देश के उत्तर को विचार में लेते हुए इस मामले में उपयुक्त आदेश पारित करे ।

मैं सहमत हूं ।

तद्नुसार आदेश किया गया ।

पु.

उपेन्द्र राय

बनाम

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और अन्य

[2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 1923]

तारीख 13 मई, 2021

न्यायमूर्ति विभू बखरु

धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 (2003 का 15) – धारा 43, धारा 44(1)(ग) – भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) – धारा 3, धारा 4(1) और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 407 और धारा 220 – दांडिक मामले का एक विशेष न्यायालय से दूसरे विशेष न्यायालय (धन शोधन) को प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा आवेदन किए जाने पर अंतरित किया जाना – अभियुक्त के विरुद्ध भ्रष्टाचार और छल के अपराधों को करने के संबंध में आरोप लगाया जाना – दोनों मामलों को विचारण हेतु उपरोक्त दोनों विशेष न्यायालयों को भिन्न-भिन्न रूप से सौंपा जाना – प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा न्यायालय के समक्ष यह अनुरोध किया जाना कि भ्रष्टाचार से संबंधित मामले के विचारण को विशेष न्यायालय (धन शोधन) को अंतरित किया जाए – न्यायालय द्वारा मामले को अंतरित किए जाने संबंधी आदेश पारित किया जाना – अभियुक्त द्वारा उक्त अंतरण किए जाने संबंधी आक्षेपित आदेश को इस आधार पर चुनौती दिया जाना कि विशेष न्यायालय (धन शोधन) के पास भ्रष्टाचार से संबंधित अपराधों का विचारण करने की अधिकारिता विद्यमान नहीं है – उच्च न्यायालय द्वारा दोनों विशेष अधिनियमों में अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंडों, जो उक्त विशेष अधिनियमों के उपबंधों को अध्यारोही प्रभाव प्रदान करते हैं, की समीक्षा किया जाना और इस निष्कर्ष पर पहुंचना कि धन शोधन निवारण अधिनियम की धारा 44(1) के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे तथा उक्त

अधिनियम की धारा 44(1)(ग) में प्रयुक्त भाषा में किसी प्रकार की कोई अस्पष्टता नहीं है और चूंकि 2003 का उक्त अधिनियम एक पश्चात्वर्ती अधिनियमिति है इसलिए उसके उपबंध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के उपबंधों पर अभिभावी होंगे और इसलिए 1988 के अधिनियम के अधीन दंडनीय अनुसूचित अपराधों का विशेष न्यायालय (धन शोधन) द्वारा विचारण किया जा सकता है और इसलिए आक्षेपित आदेश में किसी प्रकार की त्रुटि विद्यमान नहीं है ।

वर्तमान दांडिक रिट याचिका का निपटारा करने हेतु संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थी सं. 1 केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने याची के विरुद्ध दो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्टर की । पहली प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) तथा भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) की धारा 420/120ख के अधीन रजिस्टर की गई है जो आर. सी. सं. 217/2018/ए/0003, तारीख 1 मई, 2018 के रूप में है तथा दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, जो आर. सी. सं. 217/2018/ए/0004, तारीख 5 मई, 2018 के रूप में है, जिसे पी. सी. अधिनियम की धारा 8 और दंड संहिता की धारा 348/120 के अधीन रजिस्टर किया गया है । इन प्रथम इत्तिला रिपोर्टों के आधार पर प्रत्यर्थी सं. 2 अर्थात् प्रवर्तन निदेशालय ने एक सामान्य प्रवर्तन मामला सूचना रिपोर्ट को रजिस्टर किया, जो सं. 03/एचआईयू/2018, तारीख 9 मई, 2018 के रूप में है । तारीख 31 जुलाई, 2018 को केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने आर. सी. सं. 217/2018/ए/0003 के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 173 के अधीन अंतिम रिपोर्ट फाइल की । इसके पश्चात् पी. सी. अधिनियम की धारा 13(2) और धारा 13(1)(घ) के अधीन याची के विरुद्ध आरंभ की गई कार्यवाहियों को सक्षम प्राधिकारी द्वारा अभियोजन की मंजूरी के अभाव में समाप्त कर दिया गया । अत:, उक्त मामले को विद्वान् मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, राउज एवेन्यू न्यायालय को अंतरित किया गया क्योंकि पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों से संबंधित आरोपों को वापस ले लिया गया था । उसके पश्चात् प्रवर्तन निदेशालय ने तारीख 6 अगस्त, 2018 को धन शोधन निवारण

अधिनियम, 2002 (2003 का 15) की धारा 45 के अधीन विशेष न्यायालय (पीएमएलए), पटियाला हाउस न्यायालय के समक्ष एक अभियोजन परिवाद फाइल किया । प्रवर्तन निदेशालय ने तारीख 26 अक्तूबर, 2018 को एक अनुपूरक परिवाद भी फाइल किया । विद्वान् विशेष न्यायालय (पीएमएलए) ने उक्त परिवादों का संज्ञान लिया है । तारीख 4 फरवरी, 2019 को प्रवर्तन निदेशालय ने पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) के अधीन एक आवेदन भी मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, राउज एवेन्यू न्यायालय के समक्ष फाइल किया था, जिसके माध्यम से यह अनुरोध किया गया था कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, जो आर. सी. सं. 217/2018/ए/0003, तारीख 1 मई, 2018 के रूप में है, से उद्भूत होने वाली कार्यवाहियों को उक्त न्यायालय से अपर सेशन न्यायाधीश/विशेष न्यायालय, पीएमएलए को अंतरित किया जाए । प्रवर्तन निदेशालय के उक्त आवेदन को विद्वान् मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 16 अगस्त, 2019 के एक आदेश द्वारा मंजूर किया गया है । याची ने विशेष न्यायाधीश, पी. सी. अधिनियम, राउज एवेन्यू न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका फाइल करके उक्त आदेश को चुनौती दी । उक्त पुनरीक्षण याचिका को तारीख 1 फरवरी, 2020 के एक आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने दंड संहिता की धारा 348/120 और पी. सी. अधिनियम की धारा 8 के अधीन रजिस्टर की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट आर. सी. सं. 217/2018/ए/0004, तारीख 5 मई, 2018 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट' कहा गया है) के संबंध में अपना अन्वेषण कार्य पूरा किया तथा उसके पश्चात् तारीख 6 अगस्त, 2018 को प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया । उसके पश्चात्, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तारीख 27 जुलाई, 2020 को एक अनुपूरक आरोप पत्र भी फाइल किया । तारीख 14 सितम्बर, 2020 को प्रवर्तन निदेशालय ने विद्वान् विशेष न्यायाधीश, पी. सी. अधिनियम, राउज एवेन्यू न्यायालय के समक्ष पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) के अधीन आवेदन फाइल किया । जिसके माध्यम से यह अनुरोध किया गया था कि सीसी सं. 42/2109 (प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से उद्भूत

होने वाले मामले) को विशेष न्यायालय, पीएमएलए, पटियाला हाउस न्यायालय को अंतरित किया जाए । उपयुक्त आवेदन को तारीख 5 अक्तूबर, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा मंजूर किया गया था । याची ने उक्त आदेश को उच्च न्यायालय में वर्तमान दांडिक रिट याचिका फाइल करके चुनौती दी है । उच्च न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत दलीलों और प्रतिवादों तथा निर्दिष्ट निर्णयों, सुस्थापित मामला विधियों तथा निवर्चन के स्थापित सिद्धांतों पर विचार करने के पश्चात् याचिका को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – उक्त रिट याचिका का निपटारा करते समय न्यायालय के समक्ष सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचारार्थ प्राथमिक प्रश्न यह था कि क्या पीएमएलए की धारा 43 के अधीन गठित विशेष न्यायालयों के पास पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय किसी अपराध का विचारण करने की अधिकारिता विद्यमान है अथवा नहीं । पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) में एक सर्वोपरि खंड अंतर्विष्ट है, जो अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि दंड प्रक्रिया संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, पी. सी. अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन यथाविनिर्दिष्ट अपराधों का विचारण एक विशेष न्यायाधीश द्वारा किया जाएगा । उच्च न्यायालय ने इस बात को स्वीकार नहीं किया कि पीएमएलए की धारा 44(1)(क) के उपबंधों का अर्थान्वयन ऐसी निर्बंधित रीति में किया जाना चाहिए कि वे किसी असंगतता की दशा में दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव रखेंगे, अपितु उनका तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी असंगत उपबंध पर भी अध्यारोही प्रभाव होगा । ऐसा इसलिए है क्योंकि पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के प्रारंभिक वाक्य में सम्मिलित किए गए सर्वोपरि उपबंध मूल खंड के अर्थ को नियंत्रित नहीं कर सकते । पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि खंड का अर्थान्वयन इस प्रकार नहीं किया जा सकता कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध किसी अन्य अधिनियमिति के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव नहीं रखेंगे । पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि खंड का विस्तार अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करने तक सीमित है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों का दंड प्रक्रिया

संहिता के ऐसे उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा, जिनमें उससे असंगत उपबंध सम्मिलित हैं । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों और पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन विभिन्न खंडों में अंतर्विष्ट उपबंधों में किसी विरोध या असंगतता की दशा में पीएमएलए के उपबंध प्रभावी होंगे और उपरोक्त असंगतता का समाधान पीएमएलए के पक्ष में, पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों को पूर्ण प्रभाव देते हुए किया जाएगा । तथापि, पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सम्मिलित सर्वोपरि उपबंध पीएमएलए की धारा 44(1) के अंतर्गत आने वाले विभिन्न खंडों के सामान्य अर्थ को नियंत्रित नहीं करते हैं । अत: जब पीएमएलए की धारा 44(1) के विभिन्न खंडों के उपबंधों और दंड प्रक्रिया संहिता से भिन्न किसी अन्य के उपबंधों में किसी असंगतता का प्रश्न सामने आता है तो उसका अर्थान्वयन पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि उपबंधों को निर्दिष्ट किए बिना किया जाएगा । पीएमएलए की धारा 44(1) के प्रारंभिक वाक्य में सम्मिलित किए गए सर्वोपरि खंड को एक सकारात्मक खंड के रूप में माना जाएगा, जो यह अपेक्षा करता है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध इस तथ्य के बावजूद प्रभावी होंगे कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध उनसे असंगत हैं । उक्त सर्वोपरि उपबंधों को नकारात्मक उपबंध नहीं माना जा सकता, जो पीएमएलए की धारा 44(1) के विभिन्न खंडों के उस सीमा तक लागू होने को परिसीमित करते हों, जहां तक वे दंड प्रक्रिया संहिता के सिवाय किसी अन्य विधि के उपबंधों से असंगत नहीं हैं । जब पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों और दंड प्रक्रिया संहिता से भिन्न किसी अन्य कानून के उपबंधों से असंगतता का कोई प्रश्न सामने आता है तो ऐसी दशा में पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सम्मिलित किए गए सर्वोपरि उपबंधों का कोई प्रभाव नहीं है । ऐसा इसलिए है क्योंकि उक्त सर्वोपरि उपबंधों में यह उपबंध किया गया है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे तथा इस प्रकार ये उपबंध केवल पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों तथा दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के बीच असंगतता के मुद्दे का समाधान करते हैं किन्तु इसके अलावा वे अन्य कानूनों से असंगतता के प्रश्न पर मौन हैं । यह अपेक्षित है कि इस प्रश्न की समीक्षा कि क्या पीएमएलए के अधीन विशेष न्यायालयों के पास पी. सी.

अधिनियम के अधीन अनुसूचित अपराध का विचारण करने की अधिकारिता है अथवा नहीं, पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों और साथ ही पीएमएलए की धारा 71 के उपबंधों में प्रयुक्त साधारण भाषा के प्रतिनिर्देश से की जाए । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है पीएमएलए की धारा 71 में भी एक सर्वोपरि उपबंध को अंतर्विष्ट किया गया है, जो अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि पीएमएलए के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी असंगत बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे । यह आवश्यक है कि पीएमएलए की धारा 43 और धारा 44 के विस्तार क्षेत्र की समीक्षा की जाए जिससे यह अभिनिश्चित किया जा सके कि क्या उक्त उपबंधों और पी. सी. अधिनियम के उपबंधों के बीच ऐसी कोई असंगतता विद्यमान है जिसे सुमेलित नहीं किया जा सकता । पीएमएलए की धारा 43 की उपधारा (1) केन्द्रीय सरकार को एक या अधिक सेशन न्यायालयों को ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों के लिए, जिन्हें विनिर्दिष्ट किया जाए, पीएमएलए की धारा 4 के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए विशेष न्यायालय या विशेष न्यायालयों के रूप में पदाभिहित करने हेतु सशक्त करती है । पीएमएलए की धारा 43 की उपधारा (2) अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करती है कि पीएमएलए के अधीन किसी अपराध का विचारण करते समय कोई विशेष न्यायालय धन शोधन से संबंधित अपराधों से भिन्न ऐसे किसी अपराध का भी विचारण करेगा जिसके संबंध में अभियुक्त पर दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन उसी विचारण के दौरान कोई आरोप लगाया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 ऐसे मामलों के लिए उपबंध करती है जहां एक विचारण के दौरान बहु-अपराधों का विचारण किया जा सकेगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 की उपधारा (1) में, अन्य बातों के साथ यह उपबंध किया गया है कि यदि कार्यों की कोई श्रृंखला इस प्रकार परस्पर जुड़ी है कि उससे समान संव्यवहार सामने आता है और अभियुक्त द्वारा एक से अधिक अपराध किए गए हैं तो ऐसी दशा में अभियुक्त पर एक ही विचारण के दौरान भिन्न-भिन्न अपराधों का आरोप लगाते हुए उसका विचारण किया जा सकेगा । ऐसे मामलों में, जहां धन शोधन का अपराध और प्रतिपादित अपराध समान संव्यवहार से उद्भूत होते हैं, वहां पीएमएलए के अधीन विशेष न्यायालय के पास उसका विचारण करने की अधिकारिता होगी । पीएमएलए की धारा 44(1) का

खंड (क) अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि कोई अनुसूचित अपराध तथा पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय कोई अपराध ऐसे क्षेत्र के लिए, जिसमें अपराध किया गया है, स्थापित विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय होंगे । पीएमएलए की धारा 2(म) 'अनुसूचित अपराधों' पद को परिभाषित करती है । उक्त परिभाषा में ऐसे अपराधों को सम्मिलित किया गया है, जिन्हें पीएमएलए की अनुसूची के भाग-क में विनिर्दिष्ट किया गया है । पीएमएलए की अनुसूची के भाग-क के पैरा 8 में पी. सी. अधिनियम के कतिपय उपबंधों के अधीन दंडनीय अपराधों को भी सूचीबद्ध किया गया है, जिनमें पी. सी. अधिनियम की धारा 8 के अंतर्गत आने वाले अपराध भी सम्मिलित हैं । इस प्रकार, प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के अनुसरण में याची का जिस अपराध के लिए विचारण किया जा रहा है, निर्विवाद रूप से एक अनुसूचित अपराध है । इस प्रकार पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड (क) के निबंधनानुसार उक्त अपराध विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय है । अतः, यह स्पष्ट है कि विशेष न्यायालय प्रतिपादित अपराध का विचारण करने के लिए सशक्त है और यह आवश्यक नहीं है कि उक्त अपराध का विचारण ऐसे अपराध के साथ उसी विचारण के दौरान किया जाए, जिसमें पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध का विचारण किया जा रहा है, जैसा कि पीएमएलए की धारा 43(2) के अंतर्गत अनुध्यात किया गया है । इससे स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकलता है कि धारा 44(1)(क) को केवल ऐसे प्रतिपादित अपराधों तक निर्बंधित नहीं किया जा सकता, जिनका विचारण, समान विचारण के दौरान पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध के साथ किया जा सकता है । यह भी स्पष्ट है कि प्रतिपादित अपराध के संबंध में विचारण करने की अन्य न्यायालयों की अधिकारिता अपवर्जित नहीं है किन्तु पीएमएलए के अधीन अभिहित विशेष न्यायालय के पास भी प्रतिपादित अपराध का विचारण करने की अधिकारिता होगी । इसे विचार में रखते हुए, यह स्पष्ट हो जाता है कि पीएमएलए की धारा 44(1) का खंड (क) केवल एक ऐसा समर्थकारी उपबंध है, जो किसी विशेष न्यायालय को दिए गए मामलों में अनुसूचित अपराधों का विचारण करने हेतु समर्थ बनाता है । पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण के आलोक में पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के खंड (ग) की भाषा की समीक्षा करने से यह

स्पष्ट हो जाता है कि यह आवश्यक नहीं है कि केवल ऐसे प्रतिपादित अपराधों के, जिनका पीएमएलए के अधीन किसी अपराध के साथ विचारण किया जा सकता है, विचारण को विशेष न्यायालय को अंतरित किया जाए । पीएमएलए की धारा 44(1) का खंड (ग) इस बात को भी स्पष्ट करता है कि एक बार यदि किसी मामले, जो किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित है, को विशेष न्यायालय को अंतरित कर दिया जाता है तो न्यायालय उक्त मामले के संबंध में उसी प्रक्रम से आगे कार्यवाही आरंभ करेगा, जिस प्रक्रम पर उक्त मामला उसे सौंपा गया था । साधारण भाषा में, ऐसा कोई मामला मौजूद हो सकता है जहां प्रतिपादित अपराध का विचारण और पीएमएलए के अधीन किसी अपराध का विचारण भिन्न-भिन्न प्रक्रमों पर हों । ऐसे मामलों में, यह स्पष्ट है कि अनुसूचित प्रतिपादित अपराध के लिए विचारण तथा पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विचारण एकल विचारण के रूप में न चलाते हुए उनके संबंध में पृथक् रूप से आगे की कार्यवाही की जाएगी । पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) का खंड (ग) भी पूरी तरह स्पष्ट नहीं है और न्यायालय, जिसके द्वारा अनुसूचित अपराध का संज्ञान लिया गया है, से यह अपेक्षा की जाती है कि वह ऐसे मामले को उस विशेष न्यायालय को सौंप दे, जिसने पीएमएलए के अधीन परिवाद फाइल करने के लिए प्राधिकृत किसी प्राधिकारी द्वारा प्रस्तुत किए गए परिवाद के आधार पर धन शोधन से संबंधित किसी अपराध के परिवाद का संज्ञान लिया है । यह स्पष्ट है कि धन शोधन के अपराध को, अपराध के आगमों के विद्यमान होने के आधार पर प्रतिपादित किया गया है, जो ऐसे किसी संपत्ति से संबद्ध है जिसे किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक क्रियाकलाप के परिणामस्वरूप व्युत्पित या अभिप्राप्त किया गया है । इस प्रकार किसी अनुसूचित अपराध का विद्यमान होना धन शोधन के अपराध को कारित किए जाने के किसी संभाव्य आरोप का प्रमुख आधार है । यद्यपि, पीएमएलए की धारा 3 के अधीन धन शोधन का अपराध एक स्वतंत्र अपराध है, किन्तु इसकी विद्यमानता को (क) किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक क्रियाकलाप के विद्यमान होने, और (ख) ऐसे क्रियाकलाप से किसी संपत्ति के व्युत्पन्न या अभिप्राप्त होने पर प्रतिपादित किया गया है । किसी भी व्यक्ति को उस समय पीएमएलए की धारा 4 के अधीन

दंडनीय धन शोधन अपराध के लिए सिद्धदोष नहीं ठहराया जा सकता, यदि अनुसूचित अपराध की विद्यमानता को स्थापित नहीं किया गया है । यह आवश्यक नहीं है कि धन शोधन का अपराध करने के लिए अभियुक्त व्यक्ति प्रतिपादित अनुसूचित अपराध करने के भी अभियुक्त हों । किन्तु उक्त अभियुक्त को तब तक धन शोधन का अपराध करने के लिए दोषसिद्ध नहीं ठहराया जा सकता, जब तक कि अनुसूचित अपराध की विद्यमानता को स्थापित न कर दिया जाए । ऐसे मामलों में, जहां किसी व्यक्ति के विरुद्ध धन शोधन का अपराध करने का आरोप इस आरोप पर आधारित है कि उसने कोई अनुसूचित अपराध किया है, वहां इससे यह तात्पर्यित होगा कि उसे तब तक धन शोधन के अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं ठहराया जा सकता, जब तक कि यह स्थापित न कर दिया जाए कि वह प्रतिपादित अनुसूचित अपराध करने के लिए दोषी है । धन शोधन के अपराध और प्रतिपादित अनुसूचित अपराध के बीच गहन संबंध है । ऐसी परिस्थितियों में, यह सुसंगत होगा कि किसी विशिष्ट मामले में यह तथ्य समीचीन होगा कि यदि समान न्यायालय अनुसूचित अपराध और साथ ही धन शोधन के अपराध के लिए विचारण करता है तो यह संगतता के हित में होगा और इससे राय में किसी संभाव्य विरोध से भी बचा जा सकेगा । यह स्पष्ट है कि वित्त (संख्यांक 2) अधिनियम, 2019 द्वारा यथा अंत:स्थापित स्पष्टीकरण के साथ पठित पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड (क) और खंड (ग) को सम्मिलित करने का उद्देश्य यह है कि समान न्यायालय को धन शोधन के अपराधों और साथ ही प्रतिपादित अनुसूचित अपराधों का एक साथ विचारण करने के लिए समर्थ बनाए जा सके । यह अत्यंत स्पष्ट है कि यदि उक्त उद्देश्य की पूर्ति की जानी है तो पीएमएलए की धारा 44(1)(क) और धारा 44(1)(ग) अनिवार्य रूप से पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के उपबंधों पर अभिभावी हों । पी. सी. अधिनियम – जैसा कि पी. सी. अधिनियम की धारा 28 द्वारा अभिव्यक्त रूप से उपदर्शित किया गया है – को किसी अन्य विधि के अतिरिक्त और न कि उसके अल्पीकरण में अधिनियमित किया गया है । उक्त विधि को अधिनियमित करने का उद्देश्य यह है कि भ्रष्टाचार निवारण से संबंधित विधियों का समेकन और संशोधन किया जाए और साथ ही उससे जुड़े सभी विषयों को उसमें सम्मिलित किया जाए । संसद् ने अपने विवेक से

इसे उपयुक्त समझा है कि उक्त अधिनियम के अधीन मामलों का विचारण ऐसे विशेष न्यायाधीशों द्वारा किया जाए, जो दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश या सहायक सेशन न्यायाधीश रहे हैं । स्वीकार्य रूप से, पीएमएलए के अधीन अभिहित विशेष न्यायाधीशों को भी अनिवार्य रूप से उक्त अर्हता को पूरा करना होगा । इस प्रकार पीएमएलए के निबंधनानुसार पदाभिहित विशेष न्यायाधीश पी. सी. अधिनियम के अधीन विशेष न्यायाधीश नियुक्त किए जाने के लिए अपात्र या निरर्हित नहीं हैं । पी. सी. अधिनियम के अन्य उपबधों, जो पी. सी. अधिनियम के अधीन किसी अपराध का अन्वेषण और विचारण करने की प्रक्रिया से संबंधित हैं, का भी अनुसरण किया जाएगा । इस प्रकार, यह विश्वास करने का किसी प्रकार का कोई कारण विद्यमान नहीं है कि एक विशेष अधिनियम के रूप में पी. सी. अधिनियम को अधिनियमित करने का विधायी उद्देश्य उस समय सिद्ध नहीं होगा, यदि विचारण का संचालन पीएमएलए के अधीन नियुक्त किसी विशेष न्यायाधीश द्वारा किया जाता है । दोनों कानूनों के उद्देश्यों, उनमें प्रयुक्त भाषा तथा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पीएमएलए एक पश्चात्वर्ती कानून है, पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों को पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के उपबंधों के अपवाद के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए । पीएमएलए के अधीन संबद्ध प्राधिकारी से यह अपेक्षित नहीं है कि वह प्रत्येक मामले में आवेदन प्रस्तुत करे और उसके द्वारा केवल ऐसे मामलों में ही आवेदन प्रस्तुत किया जा सकता है, जहां ऐसा करना त्वरित विचारण के हित में आवश्यक है और अन्यथा भी ऐसा करना समीचीन है । उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस प्रतिवाद को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय अनुसूचित अपराधों (जैसा कि पीएमएलए की अनुसूची के भाग-क के पैरा 8 में विनिर्दिष्ट किया गया है) से संबंधित मामलों का विचारण पीएमएलए के अधीन अभिहित ऐसे विशेष न्यायालयों द्वारा नहीं किया जा सकता, जो पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय परस्पर सहबद्ध मामलों का विचारण कर रहे हैं क्योंकि उनके पास ऐसा करने की अधिकारिता विद्यमान नहीं है । पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) की भाषा में कोई अस्पष्टता विद्यमान नहीं हैं । अनुसूचित अपराध का विचारण करने वाले संबद्ध न्यायालय से

यह अपेक्षित है कि वह ऐसे मामले को, पीएमएलए के अधीन शिकायत करने के लिए प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा आवेदन किए जाने पर पीएमएलए के अधीन अभिहित विशेष न्यायालय को अंतरित करे । यह उपबंध किया गया है कि ऐसा केवल उस समय किया जाएगा जब उक्त विशेष न्यायालय ने पीएमएलए के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान कर लिया हो । वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इस संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया गया है कि अन्य संबद्ध मामलों का विचारण विशेष न्यायालय द्वारा किया जा रहा है । विशेष न्यायालय (पीएमएलए), पटियाला हाऊस ने अपने तारीख 8 अगस्त, 2018 के एक आदेश द्वारा प्रवर्तन निदेशालय द्वारा फाइल किए गए परिवाद (2018 का सेशन मामला सं. 259) का संज्ञान लिया है । उच्च न्यायालय को उक्त आक्षेपित आदेश में कोई त्रुटि प्रतीत नहीं होती है । तद्नुसार, याचिका खारिज की जाती है । (पैरा 13, 14, 24, 25, 26, 27, 28, 30, 31, 32, 33, 48, 49, 50, 51, 52, 59, 60, 61, 62 और 63)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177 : **एस. वनीता** बनाम **उपायुक्त, बंगलुरु अर्बन डिस्ट्रिक्ट और अन्य** ;	46
[2019]	ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 केरल 902 : **पुलिस निरीक्षक, सीबीआई** बनाम **सहायक निदेशक और अन्य** ;	10, 53, 54, 58
[2008]	(2008) 9 एस. सी. सी. 763 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. (सप्ली.) 151 : **के. एस. एल. एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड** बनाम **अरिहंत थ्रेड्स लिमिटेड और अन्य** ;	35
[2008]	(2008) 8 एस. सी. सी. 148 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2361 : **बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **केतन पारेख** ;	45,46

[2006] (2006) 8 एस. सी. सी. 677 =
ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 3252 :
जे. इंजीनियरिंग वर्क्स लिमिटेड बनाम
इंडस्ट्रीज फैसिलिटेशन काउंसिल और अन्य ; 36

[2001] (2001) 3 एस. सी. सी. 71 =
ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 958 :
सॉलिडेयर इंडिया लिमिटेड बनाम **फेयर ग्रोथ**
फाइनेंशियल सर्विसेस लिमिटेड और अन्य ; 12,42

[1999] (1999) 6 एस. सी. सी. 559 =
ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 2556 :
पी. नल्लामल और अन्य बनाम **राज्य,**
जिसका प्रतिनिधित्व पुलिस निरीक्षक के
माध्यम से किया जा रहा है ; 10,15

[1997] (1997) 89 कंपनी केसेज 547 :
भोरुका स्टील लिमिटेड बनाम
फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड ; 42

[1995] (1995) 1 एस. सी. सी. 133 =
1995 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 46 :
हरियाणा राज्य और अन्य बनाम **रघुबीर दयाल** ; 11

[1993] (1993) 2 एस. सी. सी. 144 =
1993 एस. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू 991 :
महाराष्ट्र ट्यूब्स लिमिटेड बनाम **स्टेट इंडस्ट्रियल**
एंड इंवेस्टमेंट कारपोरेशन ऑफ इंडिया ; 43

[1984] (1984) अनु. एस. सी. सी. 196 :
भारत संघ और अन्य बनाम
जीएम कोकिल और अन्य ; 21

[1952] ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 369 :
अश्विनी कुमार घोष और अन्य बनाम
अरबिंदा बोस और अन्य । 22

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 1923.

याची ने वर्तमान दांडिक रिट याचिका, विशेष न्यायाधीश (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम), राउज एवेन्यू जिला न्यायालय द्वारा दांडिक मामला सं. 42/2019 में तारीख 5 अक्तूबर, 2020 को पारित आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की है ।

याची की ओर से सर्वश्री अर्जुन दीवान, अर्जुन मुखर्जी और शहरयार खान

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री निखिल गोयल, वरिष्ठ लोक अभियोजक, के.अ.ब्यू., एस. वी. राजू, अपर महासालिसिटर, अमित महाजन, के.स.स्था.काउ., सुश्री सारिका राजू, ए. वेकेंटश, गुंतुर प्रमोद कुमार और कृतज्ञ कुमार कैत के साथ

न्यायमूर्ति विभू बखरु – याची ने वर्तमान दांडिक रिट याचिका विशेष न्यायाधीश (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम), राउज एवेन्यू जिला न्यायालय द्वारा दांडिक मामला सं. 42/2019 में तारीख 5 अक्तूबर, 2020 को पारित आदेश (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'आक्षेपित आदेश' कहा गया है) को चुनौती देते हुए फाइल की है । विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने उपरोक्त आक्षेपित आदेश के माध्यम से यह निदेश दिया है कि आर. सी. सं. 217/2018/ए/0004/सीबीआई से उद्भूत होने वाले दांडिक मामला सं. 42/2019 के विचारण को पटियाला हाउस कोर्ट परिसर में स्थित विशेष न्यायालय (धन शोधन निवारण अधिनियम) को अंतरित किया जाए ।

2. याची द्वारा यह प्रतिवाद किया गया है कि चूंकि विशेष न्यायालय (धन शोधन निवारण अधिनियम) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'पी. सी. अधिनियम' कहा गया है) के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए सशक्त नहीं है अत:, ऐसे किसी न्यायालय को, जिसके पास

उक्त प्रकृति के मामलों का विनिश्चय करने की अधिकारिता विद्यमान नहीं है, मामले के विचारण को अंतरित करने वाला आक्षेपित आदेश अंतर्निहित रूप से त्रुटिपूर्ण है और अपास्त किए जाने के लिए दायी है ।

3. वर्तमान मामले में अंतर्वलित विवाद निम्नलिखित तथ्यात्मक संदर्भ से उद्भूत हुआ है ।

4. प्रत्यर्थी सं. 1 केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'के.अ.ब्यू'. कहा गया है) ने याची के विरुद्ध दो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्टर की । पहली प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(घ) के साथ पठित धारा 13(2) तथा भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 420/120ख के अधीन रजिस्टर की गई है जो आर. सी. सं. 217/2018/ए/0003, तारीख 1 मई, 2018 के रूप में है तथा दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, जो आर. सी. सं. 217/2018/ए/0004, तारीख 5 मई, 2018 के रूप में है, जिसे पी. सी. अधिनियम की धारा 8 और दंड संहिता की धारा 348/120 के अधीन रजिस्टर किया गया है । इन प्रथम इत्तिला रिपोर्टों के आधार पर प्रत्यर्थी सं. 2 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'प्रवर्तन निदेशालय' कहा गया है) ने एक सामान्य प्रवर्तन मामला सूचना रिपोर्ट को रजिस्टर किया, जो सं. 03/एचआईयू/2018, तारीख 9 मई, 2018 के रूप में है ।

5. तारीख 31 जुलाई, 2018 को के.अ.ब्यू. ने आर. सी. सं. 217/2018/ए/0003 के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 173 के अधीन अंतिम रिपोर्ट फाइल की । इसके पश्चात् पी. सी. अधिनियम की धारा 13(2) और धारा 13(1)(घ) के अधीन याची के विरुद्ध आरंभ की गई कार्यवाहियों को सक्षम प्राधिकारी द्वारा अभियोजन की मंजूरी के अभाव में समाप्त कर दिया गया । अतः, उक्त मामले को विद्वान् मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, राउज एवेन्यू न्यायालय को अंतरित किया गया क्योंकि पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों से संबंधित आरोपों को वापस ले लिया गया था । उसके पश्चात् प्रवर्तन निदेशालय ने तारीख 6 अगस्त, 2018 को धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 (2003 का 15) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में

'पीएमएलए' कहा गया है) की धारा 45 के अधीन विशेष न्यायालय (पीएमएलए), पटियाला हाउस न्यायालय के समक्ष एक अभियोजन परिवाद फाइल किया । प्रवर्तन निदेशालय ने तारीख 26 अक्तूबर, 2018 को एक अनुपूरक परिवाद भी फाइल किया । विद्वान् विशेष न्यायालय (पीएमएलए) ने उक्त परिवादों का संज्ञान लिया है ।

6. तारीख 4 फरवरी, 2019 को प्रवर्तन निदेशालय ने पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) के अधीन एक आवेदन भी मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, राउज एवेन्यू न्यायालय के समक्ष फाइल किया था, जिसके माध्यम से यह अनुरोध किया गया था कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, जो आर. सी. सं. 217/2018/ए/0003, तारीख 1 मई, 2018 के रूप में है, से उद्भूत होने वाली कार्यवाहियों को उक्त न्यायालय से अपर सेशन न्यायाधीश/विशेष न्यायालय, पीएमएलए को अंतरित किया जाए । प्रवर्तन निदेशालय के उक्त आवेदन को विद्वान् मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 16 अगस्त, 2019 के एक आदेश द्वारा मंजूर किया गया है । याची ने विशेष न्यायाधीश, पी. सी. अधिनियम, राउज एवेन्यू न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका फाइल करके उक्त आदेश को चुनौती दी । उक्त पुनरीक्षण याचिका को तारीख 1 फरवरी, 2020 के एक आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था ।

7. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने दंड संहिता की धारा 348/120 और पी. सी. अधिनियम की धारा 8 के अधीन रजिस्टर की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट आर.सी. सं. 217/2018/ए/0004, तारीख 5 मई, 2018 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट' कहा गया है) के संबंध में अपना अन्वेषण कार्य पूरा किया तथा उसके पश्चात् तारीख 6 अगस्त, 2018 को प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया । उसके पश्चात्, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने तारीख 27 जुलाई, 2020 को एक अनुपूरक आरोप पत्र भी फाइल किया ।

8. तारीख 14 सितम्बर, 2020 को प्रवर्तन निदेशालय ने विद्वान् विशेष न्यायाधीश, पी. सी. अधिनियम, राउज एवेन्यू न्यायालय के समक्ष पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) के अधीन आवेदन फाइल किया । जिसके

माध्यम से यह अनुरोध किया गया था कि सीसी सं. 42/2109 (प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से उद्भूत होने वाले मामले) को विशेष न्यायालय, पीएमएलए, पटियाला हाउस न्यायालय को अंतरित किया जाए । उपयुक्त आवेदन को तारीख 5 अक्तूबर, 2020 के आक्षेपित आदेश द्वारा मंजूर किया गया था ।

9. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री अर्जुन दीवान ने यह प्रतिवाद किया है कि तारीख 5 अक्तूबर, 2020 के आक्षेपित आदेश को इस आधार पर अपास्त किया जाना चाहिए कि पीएमएलए के अधीन गठित विशेष न्यायालय, पी. सी. अधिनियम के अधीन अधिसूचित विशेष न्यायाधीश की श्रेणी में नहीं आता है और इसलिए उक्त न्यायालय पी. सी. अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने हेतु सक्षम नहीं है ।

10. श्री दीवान ने यह दलील प्रस्तुत की है कि याची के विरुद्ध अधिसूचित मामले में ऐसे अपराधों से संबंधित आरोपों को अंतर्विष्ट किया गया है, जो पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय हैं और उनका विचाराण विशेष न्यायालय (पीएमएलए) द्वारा नहीं किया जा सकता । उन्होंने यह कथन किया है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 4 में किए गए उपबंधों की भाषा यह आज्ञापक बनाती है कि केवल पी. सी. अधिनियम की धारा 3 के अधीन नियुक्त न्यायाधीश ही पी. सी. अधिनियम के अंतर्गत आने वाले अपराधों का विचारण करने हेतु सक्षम है । इस संबंध में, उन्होंने उच्चतम न्यायालय द्वारा **पी. नल्लामल और अन्य** बनाम **राज्य, जिसका प्रतिनिधित्व पुलिस निरीक्षक के माध्यम से किया जा रहा है**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 4, पी. सी. अधिनियम की धारा 3 के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीशों को अनन्य अधिकारित प्रदान करती है और यह भी कि पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) में प्रयुक्त 'केवल' पद अधिकारिता के निबंधनानुसार इस प्रकार नियुक्त न्यायाधीशों को अनन्य अधिकारिता प्रदान करता है । इसके पश्चात्

---

[1] (1999) 6 एस. सी. सी. 559 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 2556.

उन्होंने केरल उच्च न्यायालय द्वारा **पुलिस निरीक्षक, सीबीआई** बनाम **सहायक निदेशक और अन्य**[1] वाले मामले में तारीख 8 नवम्बर, 2019 को दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया । अपने निर्णय में माननीय केरल उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि किसी मामले को, जिसमें पी. सी. अधिनियम के अंतर्गत आने वाले अपराध सम्मिलित हैं, पीएमएलए के अधीन गठित किसी विशेष न्यायालय को सौंपा जाता है तो ऐसे किसी न्यायालय के पास उसे इस प्रकार सौंपे गए मामले का विचारण करने की कोई अधिकारिता नहीं होगी ।

11. विद्वान् काउंसेल श्री दीवान ने यह भी प्रतिवाद किया कि पी. सी. अधिनियम की धारा 4 का पीएमएलए की धारा 44 के प्रति अध्यारोही प्रभाव है तथा वर्तमान मामले में पीएमएलए की धारा 71 लागू नहीं होती है । उनके द्वारा इस पक्षकथन को प्रस्तुत किया गया है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) में अंतर्विष्ट सर्वोपरि उपबंध किसी भी अन्य विधि के लागू होने की संभावना को समाप्त कर देता है और इस प्रकार, पीएमएलए के अधीन स्थापित विशेष न्यायालय के पास किसी अभियुक्त का पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों को कारित करने के आरोप से संबंधित किसी मामले का विचारण करने की अधिकारिता नहीं है । इसके पश्चात् विद्वान् काउंसेल ने यह दलील प्रस्तुत की है कि पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) आज्ञापक प्रकृति की नहीं है । उन्होंने यह दलील भी प्रस्तुत की है कि पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) में प्रयुक्त “shall” पद का अर्थान्वयन ‘may’ पद के रूप में किया जाना चाहिए, अर्थात् वैवेकिक और न कि आज्ञापक । इस संबंध में विद्वान् काउंसेल ने **हरियाणा राज्य और अन्य** बनाम **रघुबीर दयाल**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया ।

12. प्रवर्तन निदेशालय की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अपर महासालिसिटर श्री एस. वी. राजू ने पूर्वोक्त दलीलों के विरोध में

---

[1] ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 केरल 902.

[2] (1995) 1 एस. सी. सी. 133 = 1995 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 46.

अपनी दलीलें प्रस्तुत कीं । सर्वप्रथम विद्वान् अपर महासालिसिटर ने यह अभिवाक् किया कि पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) का पी. सी. अधिनियम की धारा 4 पर अध्यारोही प्रभाव है । विद्वान् अपर महासालिसिटर ने यह दलील भी प्रस्तुत की है कि चूंकि दोनों कानूनों में सर्वोपरि खंड अंतर्विष्ट हैं इसलिए यह सुस्थापित विधि है कि पश्चात्वर्ती कानून का अध्यारोही प्रभाव होगा [**सॉलिडेयर इंडिया लिमिटेड** बनाम **फेयर ग्रोथ फाइनेंसिएल सर्विसेस लिमिटेड और अन्य**[1] वाला मामला देखें] । उन्होंने यह भी अभिवाक् प्रस्तुत किया कि अन्यथा भी विशेष न्यायाधीश (पी. सी. अधिनियम) से मामले को विशेष न्यायाधीश (पीएमएलए) को स्थानांतरित किए जाने से याची पर किसी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा क्योंकि दोनों ही न्यायाधीश, सेशन न्यायाधीश हैं ।

कारण और निष्कर्ष

13. जैसा कि उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि इस न्यायालय के समक्ष सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचारार्थ प्राथमिक प्रश्न यह है कि क्या पीएमएलए की धारा 43 के अधीन गठित विशेष न्यायालयों के पास पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय किसी अपराध का विचारण करने की अधिकारिता विद्यमान है अथवा नहीं ।

14. पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) में एक सर्वोपरि खंड अंतर्विष्ट है, जो अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि दंड प्रक्रिया संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, पी. सी. अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन यथा विनिर्दिष्ट अपराधों का विचारण एक विशेष न्यायाधीश द्वारा किया जाएगा । पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) और उपधारा (2) को नीचे उद्धृत किया गया है :–

> "4. ... विशेष न्यायाधीश द्वारा विचारणीय मामले
>
> (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट अपराध विशेष न्यायाधीश द्वारा ही विचारणीय होंगे ।

---

[1] (2001) 3 एस. सी. सी. 71 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 958.

(2) धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट प्रत्येक अपराध उस क्षेत्र के विशेष न्यायाधीश द्वारा, जिसमें वह अपराध किया गया है या जहां ऐसे क्षेत्र के लिए एक से अधिक विशेष न्यायाधीश हैं, वहां उनमें से ऐसे न्यायाधीश द्वारा जो इस निमित्त केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाएगा, उस मामले के लिए नियुक्त किए गए विशेष न्यायाधीश द्वारा विचारणीय होगा ।"

15. पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) में प्रयुक्त 'केवल' शब्द का महत्व यह है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन यथाविनिर्दिष्ट अपराधों का विचारण करने की अधिकारिता किसी अन्य न्यायालय के पास नहीं होगी । **पी. नल्लामल और अन्य** बनाम **राज्य, जिसका प्रतिनिधित्व पुलिस निरीक्षक के माध्यम से किया जा रहा है** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने अधिकारपूर्वक यह अभिनिर्धारित किया है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन यथा नियुक्त किसी विशेष न्यायाधीश के पास पी. सी. अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने की अनन्य अधिकारिता होगी । उक्त निर्णय से सुसंगत उद्धरण नीचे प्रस्तुत किए गए हैं :–

"8. अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रतिवाद पर विचार करने से पूर्व यह उल्लेख करना आवश्यक है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 4, पी. सी. अधिनियम के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीशों को पी. सी. अधिनियम की धारा 3(1) में विनिर्दिष्ट अपराधों का विचारण करने की अनन्य अधिकारिता प्रदान करती है

.....

9. उपधारा में प्रयुक्त 'केवल' एकल शब्द का महत्व इस प्रकार का है कि संपूर्ण उपधारा के उद्देश्य का अर्थान्वयन इस प्रकार किया जा सकता है जिससे धारा 3(1) में उल्लिखित सभी अपराधों का विचारण करने की विशेष न्यायाधीश की अधिकारिता के संबंध में अनन्यता पर बल दिया जा सके ....."

16. पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) में अंतर्विष्ट सर्वोपरि उपबंध को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकलता है कि

उक्त उपबंध का दंड प्रक्रिया संहिता या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी अन्य असंगत उपबंध पर अध्यारोही प्रभाव होगा ।

17. पी. सी. अधिनियम की धारा 3 केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार को पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का विचारण करने के लिए विशेष न्यायाधीशों को नियुक्त किए जाने के लिए सशक्त बनाती है । पी. सी. अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (2) ऐसे विशेष न्यायाधीशों के लिए अर्हताओं को विहित करती है और अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करती है कि किसी भी व्यक्ति को तब तक विशेष न्यायाधीश के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता, जब तक वह दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन कोई सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन/या सहायक सेशन न्यायाधीश न हो । पी. सी. अधिनियम की धारा 3 को नीचे उद्धृत किया गया है :–

> "3. विशेष न्यायाधीश नियुक्त करने की शक्ति –
>
> (1) केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निम्नलिखित अपराधों के विचारण के लिए इतने विशेष न्यायाधीश नियुक्त कर सकेगी जितने ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों के लिए या ऐसे मामले या मामलों के समूह के लिए, जो आवश्यक हों और जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं, अर्थात् –
>
> (क) इस अधिनियम के अधीन दंडनीय कोई अपराध ; और
>
> (ख) खंड (क) में विनिर्दिष्ट अपराधों में से किसी को रोकने के लिए षड्यंत्र करने या करने का प्रयत्न या कोई दुष्प्रेरण ।
>
> (2) कोई व्यक्ति इस अधिनियम के अधीन विशेष न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के लिए तब तक अर्हित नहीं होगा जब तक कि वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अधीन सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश या सहायक सेशन न्यायाधीश नहीं है या नहीं रहा है ।"

18. पीएमएलए की धारा 43 केन्द्रीय सरकार को एक या अधिक सेशन न्यायालयों को, ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों के लिए विशेष न्यायालय या विशेष न्यायालयों के रूप में पदाभिहित करने हेतु सशक्त करती है, जो

पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराधों का विचारण करेगा या करेंगे । पीएमएलए की धारा 43 की उपधारा (2) में भी अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध किया गया है कि पीएमएलए के अधीन किसी अपराध का विचारण करते समय कोई विशेष न्यायालय उपधारा (1) में यथानिर्दिष्ट अपराध से भिन्न किसी ऐसे अन्य अपराध का भी विचारण करेगा जिसका आरोप उसी विचारण के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध लगाया गया है । पीएमएलए की धारा 43 निम्नानुसार है :–

"43. विशेष न्यायालय –

(1) केन्द्रीय सरकार ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों के लिए अथवा ऐसे मामले या मामलों के किसी वर्ग या समूह के लिए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं, धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध के विचारण के लिए उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के परामर्श से अधिसूचना द्वारा किसी एक या अधिक सेशन न्यायालय को विशेष न्यायालय या विशेष न्यायालयों के रूप में पदाभिहित करेगी ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा में 'उच्च न्यायालय' से उस राज्य का उच्च न्यायालय अभिप्रेत है जिसमें विशेष न्यायालय के रूप में पदाभिहित सेशन न्यायालय ऐसे पदाभिधान से ठीक पूर्व कार्य कर रहा था ।

(2) विशेष न्यायालय, इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का विचारण करते समय, उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट अपराध से भिन्न किसी ऐसे अपराध का भी विचारण करेगा जिसका अभियुक्त पर दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अधीन उसी विचारण में आरोप लगाया जा सकता है ।"

19. पीएमएलए की धारा 44, ऐसे विशेष न्यायालयों, जिन्हें पीएमएलए की धारा 43 के अधीन गठित किया गया है, द्वारा विचारणीय अपराधों को अधिकथित करती है । इसके अतिरिक्त, पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) में ऐसा एक सर्वोपरि खंड भी अंतर्विष्ट किया गया है, जो दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों से किसी प्रकार की असंगतता पर अध्यारोही प्रभाव प्रदान करता है । पीएमएलए की धारा 44 निम्नानुसार है :–

"44. विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराध

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, –

(क) धारा 4 के अधीन दंडनीय कोई अपराध और उस धारा के अधीन अपराध से संबंधित कोई अनुसूचित अपराध उस क्षेत्र के लिए जिसमें अपराध किया गया है, गठित विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय होगा :

परन्तु विशेष न्यायालय, जो इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व किसी अनुसूचित अपराध का विचारण कर रहा हो, ऐसे अनुसूचित अपराध का विचारण करता रहेगा ; या

(ख) विशेष न्यायालय, इस अधिनियम के अधीन इस निमित प्राधिकृत किसी प्राधिकारी द्वारा किए गए परिवाद पर अभियुक्त को विचारण के लिए उसे सुपुर्द किए बिना धारा 3 के अधीन अपराध का संज्ञान कर सकेगा :

परंन्तु यदि अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् ऐसा परिवाद फाइल किए जाने की अपेक्षा करने वाला धन शोधन संबंधी कोई अपराध गठित नहीं होता है तो उक्त प्राधिकारी विशेष न्यायालय के समक्ष परिवाद को बंद किए जाने संबंधी रिपोर्ट फाइल करेगा ; या

(ग) यदि ऐसा न्यायालय, जिसने अनुसूचित अपराध का संज्ञान किया है, उस विशेष न्यायालय से भिन्न है, जिसने उपखंड (ख) के अधीन धन शोधन के अपराध के परिवाद का संज्ञान किया है, तो वह इस अधिनियम के अधीन कोई परिवाद फाइल करने के लिए प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा कोई आवेदन किए जाने पर अनुसूचित अपराध से संबंधित मामला विशेष न्यायालय को सुपुर्द कर सकेगा और विशेष न्यायालय उस मामले के प्राप्त होने पर उस प्रक्रम से आगे कार्यवाही करेगा, जिस पर वह उसे सुपुर्द किया जाता है ।

(घ) कोई विशेष न्यायालय, अनुसूचित अपराध या धन शोधन के अपराध का विचारण करते समय दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

(1974 का 2) के उपबंधों के अनुसार जैसे वे सेशन न्यायालय के समक्ष किसी विचारण को लागू होते हैं, विचारण करेगा ।

स्पष्टीकरण – संदेहों को दूर करने के लिए यह स्पष्ट किया जाता है कि –

(i) इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के संबंध में कार्यवाही करते समय, इस अधिनियम के अधीन अन्वेषण, जांच-पड़ताल के दौरान विशेष न्यायालय की अधिकारिता अनुसूचित अपराध के संबंध में पारित किन्हीं आदेशों पर आधारित नहीं होगी और समान न्यायालय द्वारा अपराध के दोनों सेटों के विचारण को संयुक्त विचारण नहीं माना जाएगा ;

(ii) परिवाद के संबंध में यह समझा जाएगा कि उसमें आगे और किए गए अन्वेषण, जिसे किसी अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध, जो ऐसे किसी अपराध में संलिप्त है और जिसके लिए परिवाद पहले से फाइल कर दिया गया है, चाहे ऐसे व्यक्ति को मूल परिवाद में नामित किया गया हो अथवा नहीं, अधिक साक्ष्य, मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य को एकत्रित करने के लिए संचालित किया जाए, के संबंध में प्रस्तुत किए गए कोई पश्चात्वर्ती परिवाद भी सम्मिलित हैं ।

(2) इस धारा में किसी बात के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 439 के अधीन जमानत से संबंधित उच्च न्यायालय की विशेष शिकायत को प्रभावित करती है और उच्च न्यायालय उस धारा की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन शिकायत सहित ऐसी शिकायत का प्रयोग ऐसे कर सकेगा मानो उस धारा में 'मजिस्ट्रेट' के प्रति-निर्देश के अंतर्गत धारा 43 के अधीन पदाभिहित 'विशेष न्यायालय' के प्रति निर्देश भी है ।"

20. पीएमएलए की धारा 44(1) में यथा अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंड के अतिरिक्त पीएमएलए में धारा 71 के अधीन भी एक सर्वोपरि खंड को सम्मिलित किया गया है । उक्त धारा निम्नानुसार है :–

"71. अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होना –

इस अधिनियम के उपबंधों का तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में, उनसे असंगत किसी बात के होते हुए भी प्रभाव होगा ।"

21. सामान्य रूप से किसी सर्वोपरि खंड को ऐसी विधायी युक्ति के रूप में जाना जाता है जिसका प्रयोग कतिपय उपबंधों को अध्यारोही प्रभाव देने के लिए किया जाता है, जिससे वे उसी अधिनियम या किसी अन्य अधिनियमिति के किसी अन्य उपबंध में अंतर्विष्ट किसी असंगत बात पर अध्यारोही प्रभाव रख सकें (**भारत संघ और अन्य** बनाम **जीएम कोकिल और अन्य**[1] वाला मामला देखें) ।

22. **अश्विनी कुमार घोष और अन्य** बनाम **अरबिंदा बोस और अन्य**[2] वाले मामले में इस संबंध में एक प्रश्न सामने आया कि उच्चतम न्यायालय अधिवक्ता (उच्च न्यायालय में व्यवसाय) अधिनियम, 1951 (1951 की धारा 2) की वास्तविक रूप में संरचना क्या है, जिसमें निम्नलिखित भाषा के साथ एक सर्वोपरि खंड को अंतर्विष्ट किया गया था :–

"भारतीय विधिज्ञ परिषद् अधिनियम, 1926 या ऐसी शर्तों को, जिनके अधीन रहते हुए ऐसे किसी व्यक्ति को जिसका नाम किसी उच्च न्यायालय के अधिवक्ताओं की नामावली में प्रविष्ट नहीं है, उच्च न्यायालय में व्यवसाय करने की अनुमति दी जा सकेगी, विनियमित करने वाली किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी ...."

कलकत्ता उच्च न्यायालय ने उपरोक्त अधिनियम की धारा 2 पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि उच्चतम न्यायालय का कोई अधिवक्ता उस उच्च न्यायालय की मूल पक्ष की अधिकारिता के अधीन कार्रवाई करने के लिए हकदार नहीं था । इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए सर्वोपरि खंड द्वारा धारा के अधिनियमन भाग को परिसीमित किया गया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने उक्त निष्कर्ष को उलट दिया ।

---

[1] (1984) अनु. एस. सी. सी. 196.

[2] ए. आई. आर. 1952 एस. सी. 369.

मुख्य न्यायमूर्ति पतंजलि शास्त्री ने निर्णय देते हुए निम्नलिखित संप्रेक्षण किए :–

"23. .....हमारे विवेकानुसार धारा 2 की संरचना करने हेतु यह सही दृष्टिकोण नहीं है । सर्वप्रथम यह अभिनिश्चित किया जाना चाहिए कि धारा का अधिनियमन भाग, उसमें प्रयुक्त शब्दों की, उनके प्राकृतिक और सामान्य अर्थान्वयन को ध्यान में रखते हुए, उचित संरचना के संबंध में क्या उपबंध करता है और सर्वोपरि खंड को इस आलोक में समझना आवश्यक है कि उसका प्रवर्तन ऐसी किसी बात को अपास्त करने के लिए किया जाता है, जो सुसंगत विद्यमान विधियों में अंतर्विष्ट ऐसी किसी बात, जो नई अधिनियमिति के साथ संगत नहीं है ।

*** *** ***

26. हम न ही सर्वोपरि खंड को इस रूप में पढ़ सकते हैं कि वह केवल ऐसे विशिष्ट उपबंधों को निरसित करने वाला है, जिन्हें निचले विद्वान् न्यायाधीशों ने बड़े परिश्रम से विधिज्ञ परिषद् अधिनियम तथा कलकत्ता और बम्बई उच्च न्यायालयों के मूल पक्ष के नियमों से लिया है । यदि जैसा कि हमने उल्लेख किया है, धारा 2 के अधिनियमन भाग में उच्चतम न्यायालय के सभी अधिवक्ताओं को सम्मिलित किया गया है तो सर्वोपरि खंड को समुचित रूप से इस प्रकार पढ़ा जा सकता है कि उसका किसी विद्यमान सुसंगत विधि में 'अंतर्विष्ट किसी बात', जो नई अधिनियमिति से असंगत है, पर अध्यारोही प्रभाव होगा, यद्यपि यह प्रतीत होता है कि प्रारूपकार ने प्राथमिक रूप से विधि की ऐसी विशिष्ट किस्म की परिकल्पना की है, जो नए अधिनियम के विरोध में है । जहां यह स्पष्ट है, वहां किसी कानून के अधिनियमन भाग को सर्वोपरि खंड का नियंत्रण प्रदान किया जाना चाहिए जहां दोनों उपबंधों को एक साथ सद्भावपूर्ण रूप से रखा जा सकता है क्योंकि ऐसे खंड के अलावा भी पश्चात्वर्ती विधि ऐसी पूर्वत्तर विधियों को उत्सादित करती है, जो स्पष्ट रूप से उससे असंगत हैं । बाद में

इसके विपरीत कानूनों को निरस्त कर दिया जाता है । (ब्रूम्स लीगन मैक्सीम्स, 10वां संस्करण, पृष्ठ 347)

*** *** ***"

23. श्री दीवान ने यह अभिवाक् प्रस्तुत किया है कि चूंकि पी. सी. अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) में एक सर्वोपरि खंड अंतर्विष्ट है और जो यह आज्ञापक बनाता है कि केवल पी. सी. अधिनियम की धारा 3 के अधीन नियुक्त न्यायाधीश ही पी. सी. अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने हेतु सक्षम होंगे, इसलिए उक्त उपबंध का पीएमएलए की धारा 44(1)(क) के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । श्री दीवान ने यह अभिवाक् भी प्रस्तुत किया है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के आरंभिक शब्दों के माध्यम से यह उपबंध किया गया है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता में अंतर्विष्ट किसी उपबंध के होते हुए भी प्रभावी होंगे । चूंकि पीएमएलए की धारा 44(1) के विपरीत, पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के अधीन सम्मिलित किए गए सर्वोपरि उपबंध अधिक व्यापक प्रकृति के हैं और यह उपबंध करते हैं कि पी. सी. अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन यथा विनिर्दिष्ट अपराधों का विचारण, दंड प्रक्रिया संहिता या 'तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि' में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी कवेल विशेष न्यायाधीशों द्वारा किया जाएगा ।

24. यह न्यायालय इस बात को स्वीकार करने में असमर्थ है कि पीएमएलए की धारा 44(1)(क) के उपबंधों का अर्थान्वयन ऐसी निर्बंधित रीति में किया जाना चाहिए कि वे किसी असंगतता की दशा में दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव रखेंगे, अपितु उनका तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी असंगत उपबंध पर भी अध्यारोही प्रभाव होगा । ऐसा इसलिए है क्योंकि पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के प्रारंभिक वाक्य में सम्मिलित किए गए सर्वोपरि उपबंध मूल खंड के अर्थ को नियंत्रित नहीं कर सकते । पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि खंड का अर्थान्वयन इस प्रकार नहीं किया जा सकता कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध किसी अन्य

अधिनियमिति के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव नहीं रखेंगे । पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि खंड का विस्तार अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करने तक सीमित है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों का दंड प्रक्रिया संहिता के ऐसे उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा, जिनमें उससे असंगत उपबंध सम्मिलित हैं । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों और पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन विभिन्न खंडों में अंतर्विष्ट उपबंधों में किसी विरोध या असंगतता की दशा में पीएमएलए के उपबंध प्रभावी होंगे और उपरोक्त असंगतता का समाधान पीएमएलए के पक्ष में, पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों को पूर्ण प्रभाव देते हुए किया जाएगा । तथापि, पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सम्मिलित सर्वोपरि उपबंध पीएमएलए की धारा 44(1) के अंतर्गत आने वाले विभिन्न खंडों के सामान्य अर्थ को नियंत्रित नहीं करते हैं । अत: जब पीएमएलए की धारा 44(1) के विभिन्न खंडों के उपबंधों और दंड प्रक्रिया संहिता से भिन्न किसी अन्य के उपबंधों में किसी असंगतता का प्रश्न सामने आता है तो उसका अर्थान्वयन पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि उपबंधों को निर्दिष्ट किए बिना किया जाएगा । पीएमएलए की धारा 44(1) के प्रारंभिक वाक्य में सम्मिलित किए गए सर्वोपरि खंड को एक सकारात्मक खंड के रूप में माना जाएगा, जो यह अपेक्षा करता है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध इस तथ्य के बावजूद प्रभावी होंगे कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध उनसे असंगत हैं । उक्त सर्वोपरि उपबंधों को नकारात्मक उपबंध नहीं माना जा सकता, जो पीएमएलए की धारा 44(1) के विभिन्न खंडों के उस सीमा तक लागू होने को परिसीमित करते हों, जहां तक वे दंड प्रक्रिया संहिता के सिवाय किसी अन्य विधि के उपबंधों से असंगत नहीं हैं । जब पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों और दंड प्रक्रिया संहिता से भिन्न किसी अन्य कानून के उपबंधों से असंगतता का कोई प्रश्न सामने आता है तो ऐसी दशा में पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सम्मिलित किए गए सर्वोपरि उपबंधों का कोई प्रभाव नहीं है । ऐसा इसलिए है क्योंकि उक्त सर्वोपरि उपबंधों में यह उपबंध किया गया है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंध, दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में

किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे तथा इस प्रकार ये उपबंध केवल पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों तथा दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के बीच असंगतता के मुद्दे का समाधान करते हैं किन्तु इसके अलावा वे अन्य कानूनों से असंगतता के प्रश्न पर मौन हैं ।

25. यह अपेक्षित है कि इस प्रश्न की समीक्षा कि क्या पीएमएलए के अधीन विशेष न्यायालयों के पास पी. सी. अधिनियम के अधीन अनुसूचित अपराध का विचारण करने की अधिकारिता है अथवा नहीं, पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों और साथ ही पीएमएलए की धारा 71 के उपबंधों में प्रयुक्त साधारण भाषा के प्रतिनिर्देश से की जाए । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है पीएमएलए की धारा 71 में भी एक सर्वोपरि उपबंध को अंतर्विष्ट किया गया है, जो अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि पीएमएलए के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी असंगत बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे । यह आवश्यक है कि पीएमएलए की धारा 43 और धारा 44 के विस्तार क्षेत्र की समीक्षा की जाए जिससे यह अभिनिश्चित किया जा सके कि क्या उक्त उपबंधों और पी. सी. अधिनियम के उपबंधों के बीच ऐसी कोई असंगतता विद्यमान है जिसे सुमेलित नहीं किया जा सकता ।

26. पीएमएलए की धारा 43 की उपधारा (1) केन्द्रीय सरकार को एक या अधिक सेशन न्यायालयों को ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों के लिए, जिन्हें विनिर्दिष्ट किया जाए, पीएमएलए की धारा 4 के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए विशेष न्यायालय या विशेष न्यायालयों के रूप में पदाभिहित करने हेतु सशक्त करती है ।

27. पीएमएलए की धारा 43 की उपधारा (2) अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करती है कि पीएमएलए के अधीन किसी अपराध का विचारण करते समय कोई विशेष न्यायालय धन शोधन से संबंधित अपराधों से भिन्न ऐसे किसी अपराध का भी विचारण करेगा जिसके संबंध में अभियुक्त पर दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन उसी विचारण के दौरान कोई आरोप लगाया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 ऐसे मामलों के लिए उपबंध करती है जहां एक विचारण के दौरान बहु-अपराधों का विचारण किया जा सकेगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 220 की

उपधारा (1) में, अन्य बातों के साथ यह उपबंध किया गया है कि यदि कार्यों की कोई श्रृंखला इस प्रकार परस्पर जुड़ी है कि उससे समान संव्यवहार सामने आता है और अभियुक्त द्वारा एक से अधिक अपराध किए गए हैं तो ऐसी दशा में अभियुक्त पर एक ही विचारण के दौरान भिन्न-भिन्न अपराधों का आरोप लगाते हुए उसका विचारण किया जा सकेगा । ऐसे मामलों में, जहां धन शोधन का अपराध और प्रतिपादित अपराध समान संव्यवहार से उद्भूत होते हैं, वहां पीएमएलए के अधीन विशेष न्यायालय के पास उसका विचारण करने की अधिकारिता होगी ।

28. पीएमएलए की धारा 44(1) का खंड (क) अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि कोई अनुसूचित अपराध तथा पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय कोई अपराध ऐसे क्षेत्र के लिए, जिसमें अपराध किया गया है, स्थापित विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय होंगे । पीएमएलए की धारा 2(म) 'अनुसूचित अपराधों' पद को परिभाषित करती है । उक्त परिभाषा में ऐसे अपराधों को सम्मिलित किया गया है, जिन्हें पीएमएलए की अनुसूची के भाग-क में विनिर्दिष्ट किया गया है । पीएमएलए की अनुसूची के भाग-क के पैरा 8 में पी. सी. अधिनियम के कतिपय उपबंधों के अधीन दंडनीय अपराधों को भी सूचीबद्ध किया गया है, जिनमें पी. सी. अधिनियम की धारा 8 के अंतर्गत आने वाले अपराध भी सम्मिलित हैं । इस प्रकार, प्रश्नगत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के अनुसरण में याची का जिस अपराध के लिए विचारण किया जा रहा है, निर्विवाद रूप से एक अनुसूचित अपराध है । इस प्रकार पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड(क) के निबंधनानुसार उक्त अपराध विशेष न्यायालय द्वारा विचारणीय है ।

29. याची की ओर से यह प्रतिवाद प्रस्तुत किया गया है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड(क) को पीएमएलए की धारा 43 की उपधारा (2) के साथ संयुक्त रूप से पढ़ा जाना चाहिए और यह केवल इस बात को विनिर्दिष्ट करती है कि ऐसे क्षेत्र, जिसमें धन शोधन संबंधी अपराध किया गया है, के लिए स्थापित विशेष न्यायालय के पास अपराधों का विचारण करने की अधिकारिता होगी । पीएमएलए की धारा 43 यह उपबंध करती है कि कोई विशेष न्यायालय पीएमएलए के अधीन किसी अपराध का विचारण करते समय ऐसे अनुसूचित अपराधों का भी

विचारण करेगा, जिनके संबंध में अभियुक्त पर उसी विचारण में दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन आरोप लगाए गए हों । यह भी प्रतिवाद किया गया था कि इसलिए पीएमएलए की धारा 44(1) केवल उसी दशा में लागू होगी यदि अपराध का विचारण, समान विचारण के दौरान किया जा सकता है ।

30. उपरोक्त प्रतिवादों को प्रस्तुत करते समय पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण (i), जिसे तारीख 1 अगस्त, 2019 से वित्त (संख्यांक 2) अधिनियम, 2019 के माध्यम से अंत:स्थापित किया गया था, को विचार में नहीं लिया गया । उक्त स्पष्टीकरण अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करता है कि पीएमएलए के अधीन किसी अपराध के संबंध में कार्यवाही करते समय विशेष न्यायालय अनुसूचित अपराध के संबंध में पारित किसी आदेश पर निर्भर नहीं करेगा और 'उसी न्यायालय द्वारा अपराधों के दोनों सेटों के विचारण को संयुक्त विचारण नहीं समझा जाएगा' । अत:, यह स्पष्ट है कि विशेष न्यायालय प्रतिपादित अपराध का विचारण करने के लिए सशक्त है और यह आवश्यक नहीं है कि उक्त अपराध का विचारण ऐसे अपराध के साथ उसी विचारण के दौरान किया जाए, जिसमें पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध का विचारण किया जा रहा है, जैसाकि पीएमएलए की धारा 43(2) के अंतर्गत अनुध्यात किया गया है । इससे स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकलता है कि धारा 44(1)(क) को केवल ऐसे प्रतिपादित अपराधों तक निर्बंधित नहीं किया जा सकता, जिनका विचारण, समान विचारण के दौरान पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध के साथ किया जा सकता है ।

31. यह उल्लेख करना सुसंगत है कि पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड (क) को धन शोधन निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2013 के माध्यम से संशोधित किया गया था । उक्त संशोधन से पूर्व उक्त खंड निम्नानुसार था :–

> 'धारा 4 के अधीन दंडनीय कोई अपराध तथा उस धारा के अधीन अपराध से संबंधित कोई अनुसूचित अपराध केवल ऐसे क्षेत्र, जिसमें अपराध किया गया है, के लिए गठित विशेष न्यायालय द्वारा ही विचारणीय होगा :

परंतु यह कि इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व किसी अनुसूचित अपराध का विचारण करने वाला कोई विशेष न्यायालय ऐसे अनुसूचित अपराध के विचारण को जारी रखेगा ; या'

उक्त संशोधन अधिनियम के माध्यम से तारीख 15 फरवरी, 2013 से 'केवल' शब्द को हटा दिया गया था । उक्त संशोधन सुसंगत है क्योंकि इससे यह उपदर्शित होता है कि प्रतिपादित अपराध के संबंध में विचारण करने की अन्य न्यायालयों की अधिकारिता अपवर्जित नहीं है किन्तु पीएमएलए के अधीन अभिहित विशेष न्यायालय के पास भी प्रतिपादित अपराध का विचारण करने की अधिकारिता होगी । इसे विचार में रखते हुए, यह स्पष्ट हो जाता है कि पीएमएलए की धारा 44(1) का खंड (क) केवल एक ऐसा समर्थकारी उपबंध है, जो किसी विशेष न्यायालय को दिए गए मामलों में अनुसूचित अपराधों का विचारण करने हेतु समर्थ बनाता है ।

32. पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के स्पष्टीकरण के आलोक में पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के खंड (ग) की भाषा की समीक्षा करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह आवश्यक नहीं है कि केवल ऐसे प्रतिपादित अपराधों के, जिनका पीएमएलए के अधीन किसी अपराध के साथ विचारण किया जा सकता है, विचारण को विशेष न्यायालय को अंतरित किया जाए । पीएमएलए की धारा 44(1) का खंड (ग) इस बात को भी स्पष्ट करता है कि एक बार यदि किसी मामले, जो किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित है, को विशेष न्यायालय को अंतरित कर दिया जाता है तो न्यायालय उक्त मामले के संबंध में उसी प्रक्रम से आगे कार्यवाही आरंभ करेगा, जिस प्रक्रम पर उक्त मामला उसे सौंपा गया था । साधारण भाषा में, ऐसा कोई मामला मौजूद हो सकता है जहां प्रतिपादित अपराध का विचारण और पीएमएलए के अधीन किसी अपराध का विचारण भिन्न-भिन्न प्रक्रमों पर हों । ऐसे मामलों में, यह स्पष्ट है कि अनुसूचित प्रतिपादित अपराध के लिए विचारण तथा पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विचारण एकल विचारण के रूप में न चलाते हुए उनके संबंध में पृथक् रूप से आगे की कार्यवाही की जाएगी ।

33. पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) का खंड (ग) भी पूरी तरह स्पष्ट नहीं है और न्यायालय, जिसके द्वारा अनुसूचित अपराध का संज्ञान लिया गया है, से यह अपेक्षा की जाती है कि वह ऐसे मामले को उस विशेष न्यायालय को सौंप दे, जिसने पीएमएलए के अधीन परिवाद फाइल करने के लिए प्राधिकृत किसी प्राधिकारी द्वारा प्रस्तुत किए गए परिवाद के आधार पर धन शोधन से संबंधित किसी अपराध के परिवाद का संज्ञान लिया है ।

34. चूंकि पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के खंड (क) और खंड (ग) की भाषा पूरी तरह स्पष्ट नहीं है इसलिए केवल इस पहलू की समीक्षा किया जाना अपेक्षित है कि क्या उक्त खंडों को लागू किए जाने के संबंध में यह अपेक्षित है कि उसे पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए निर्बंधित किया जाए ।

35. **के. एस. एल. एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड** बनाम **अरिहंत थ्रेड्स लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसासर अभिनिर्धारित किया था :–

> '89. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए मेरे विवेकानुसार विधि समुचित रूप से सुस्थापित है । किसी सर्वोपरि खंड (तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी) से आरंभ होने वाले किसी उपबंध को, अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करते हुए प्रवर्तित तथा कार्यान्वित किया जाना चाहिए और ऐसा करने के लिए अन्य विधियों के उपबंधों को भी परिसीमित किया जाना चाहिए । किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि कभी-कभार ऐसी परिस्थिति सामने आती है जिसमें दो या अधिक अधिनियमितियों में समान प्रकृति का सर्वोपरि खंड विद्यमान होता है जो समान परिस्थितियों में प्रवर्तित होते हैं । स्पष्ट रूप से, ऐसे मामलों में न्यायालय को सर्वप्रथम यह पता लगाने का प्रयास करना चाहिए कि विधानमंडल का आशय क्या है और ऐसे आशय का पता लगाने के लिए विरोधाभासों की प्रकृति,

---

[1] (2008) 9 एस. सी. सी. 763 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. (सप्ली) 151.

अधिनियम के उद्देश्य, आरंभ की गई कार्यवाहियों, ईप्सित अनुतोष तथा अनेकों अन्य सुसंगत प्रतिफलों की समीक्षा की जानी चाहिए ।

90. ऊपर निर्दिष्ट मामला विधि के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि न्यायालयों ने अनेक साध्य परीक्षणों को लागू किया है । उनमें, अन्य बातों के साथ, यह तथ्य भी सम्मिलित है कि इस बात को विचार में लिया जाना चाहिए कि क्या प्रश्नगत अधिनियम "साधारण" प्रकृति का है अथवा "विशेष" प्रकृति का और साथ ही इस तथ्य को भी विचार में लिया जाना चाहिए कि क्या अधिनियम एक पश्चात्वर्ती विधान है तथा इस प्रश्न का भी उत्तर प्राप्त किया जाना चाहिए कि क्या अधिनियम में पूर्ववर्ती विधि तथा उसमें अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंड का प्रतिनिर्देश किया गया है अथवा नहीं । उपरोक्त परीक्षण केवल दृष्टांत स्वरूप हैं और किसी भी रीति में उन्हें पूर्ण नहीं माना जाना चाहिए । अंततोगत्वा, न्यायालय अपने विवेकानुसार ऐसे विरोधाभासों का, दोनों प्रतिस्पर्धी कानूनों के उपबंधों का सामंजस्यपूर्ण रूप से निर्वचन करते हुए तथा एक अधिनियम को दूसरे पर अध्यारोही प्रभाव देते हुए, समाधान करेगा ।'

36. **जे. इंजीनियरिंग वर्क्स लिमिटेड** बनाम **इंडस्ट्रीज फैसिलिटेशन काउंसिल और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट करना भी सुसंगत है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में निम्नानुसार सुसंगत संप्रेक्षण किए हैं :–

'28 दोनों अधिनियमों में सर्वोपरि खंड सम्मिलित हैं । सरंचना का सामान्य नियम यह है कि जहां दो सर्वोपरि खंड विद्यमान हों, वहां पश्चात्वर्ती सर्वोपरि खंड का अध्यारोही प्रभाव होगा । किन्तु विधि में यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि इस संबंध में अंततोगत्वा निष्कर्ष कानून के सीमित संदर्भ पर निर्भर करेगा । (इलाहाबाद बैंक (2000) 4 एस. सी. सी. 406 = ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 1535 पैरा 34) वाला मामला देखें)

---

[1] (2006) 8 एस. सी. सी. 677 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 3252.

29. मारुति उद्योग लिमिटेड **बनाम** राम लाल (2005) 2 एस. सी. सी. 638 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 851 वाले मामले में यह संप्रेक्षण किया गया था (एस. सी. सी. पृष्ठ 653 पैरा 39) –

> "39. 1947 के अधिनियम की धारा 25ञ के संबंध में श्री दास द्वारा यथा प्रतिपादित निर्वचन को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि उसके निबंधनानुसार केवल उक्त अध्याय के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि, जिसमें औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम के अधीन किए गए स्थायी आदेश भी सम्मिलित हैं, में अंतर्विष्ट किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे, किन्तु उन्हें ऐसे किसी मामले में लागू नहीं किया जाएगा जहां कानूनी स्कीम के निबंधनानुसार किसी भिन्न उपबंध को अनुध्यात किया गया है । कोई कल्याणकारी कानून उदारवादी संरचना प्राप्त कर सकता है किन्तु उसे कानूनी स्कीम से परे विस्तारित नहीं किया जा सकता ।"

30. सरवण सिंह **बनाम** कस्तूरी लाल (1977) 1 एस. सी. सी. 750 = ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 265 वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित राय अभिव्यक्त की गई थी (एस. सी. सी. पृष्ठ 760 पैरा 20) –

> "जब दो या अधिक विधियां समान क्षेत्र में प्रचालित की जाती हैं और ऐसी प्रत्येक विधि में एक सर्वोपरि खंड अंतर्विष्ट है, जिसमें यह कथन किया गया है कि उसके उपबंधों का किसी अन्य विधि के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा तो ऐसी स्थिति में निर्वचन से संबंधित वास्तविक और गहन समस्याएं उत्पन्न होती हैं । चूंकि कानूनी निर्वचन के संबंध में कोई पारंपरिक मानदंड तय नहीं किए गए है, इसलिए ऐसे विरोधाभासों से संबंधित मामलों का विनिश्चय विचाराधीन विधियों के उद्देश्यों और प्रयोजनों के प्रतिनिर्देश से किया जाएगा ।"

31. तथापि, न्यायालय इस संबंध में सदैव प्रयास करेगा कि सामंजस्यपूर्ण संरचना के नियम को अपनाया जाए ।'

37. पी. सी. अधिनियम और साथ ही पीएमएलए, दोनों ही अधिनियम विशेष अधिनियमितियां हैं । पी. सी. अधिनियम को भ्रष्टाचार के निवारण से संबंधित विधि को समेकित करने तथा उसका संशोधन करने के लिए तथा उससे सहबद्ध सभी अन्य विषयों के संबंध में उपबंध करने के लिए अधिनियमित किया गया था । यह अधिनियम ऐसे अपराधों और साथ ही ऐसी शास्तियों को विनिर्दिष्ट करता है, जिन्हें ऐसे अपराधों के लिए अधिरोपित किया जा सकता है । पी. सी. अधिनियम में भी, पी. सी. अधिनियम के अधीन मामलों के अन्वेषण के संबंध में विशेष उपबंधों को अंतर्विष्ट किया गया है और साथ ही उसमें अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया से संबंधित उपबंध भी अंतर्विष्ट हैं । पी. सी. अधिनियम की धारा 22 के निबंधनानुसार, दंड प्रक्रिया संहिता, उसमें यथाविनिर्दिष्ट उपांतरणों के अध्यधीन रहते हुए लागू होगी ।

38. पी. सी. अधिनियम की धारा 28 अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करती है कि पी. सी. अधिनियम के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट उपबंधों के अतिरिक्त हैं न कि उनके अल्पीकरण में और उक्त अधिनियम में अंतर्विष्ट कोई बात किसी लोक सेवक को ऐसे किन्हीं कार्यवाहियों से छूट प्रदान नहीं करेगी, जिन्हें इस अधिनियम के अलावा किसी अन्य अधिनियमिति के अधीन उसके विरुद्ध संस्थित किया जाए ।

39. पीएमएलए को धन शोधन का निवारण करने और धन शोधन से व्युत्पन्न संपत्ति या धन शोधन में अंतर्वलित संपत्ति को जब्त किए जाने और उससे जुड़े या उससे अनुषंगिक अन्य विषयों के संबंध में उपबंध करने के लिए अनियमित किया गया था । उक्त अधिनियम को संयुक्त राष्ट्रसंघ की साधारण सभा में फरवरी 1990 में आयोजित उसके 17वें में विशेष सत्र के दौरान अंगीकृत राजनीतिक घोषणा और वैश्विक कार्रवाई योजना को कार्यान्वित करने हेतु अधिनियमित किया गया था । पीएमएलए की धारा 3 धन शोधन से संबंधित अपराध को वर्णित करती है तथा पीएमएल की धारा 4 उक्त अपराध के लिए दंड का उपबंध करती

है । उक्त अधिनियमिति में ऐसे प्राधिकारियों के संबंध में व्यापक उपबंधों को अंतर्विष्ट किया गया है जो धन शोधन के अपराध के किसी अपराधी का अभियोजन करने के लिए हकदार हैं और साथ ही उक्त अधिनियम में अपराध के आगमों के अधिग्रहण के लिए उपबंधों को भी सम्मिलित किया गया है ।

40. यह सिद्धांत वर्तमान मामले में लागू नहीं है कि कोई विशेष अधिनियम किसी साधारण अधिनियम पर अध्यारोही प्रभाव रखेगा । पी. सी. अधिनियम और पीएमएलए अपने-अपने कार्य क्षेत्रों में विशेष कानून हैं । दोनों अधिनियम भिन्न-भिन्न प्रकृति के अपराधों से संबंधित हैं और दोनों में से किसी भी अधिनियमिति को एक-दूसरे की तुलना में साधारण या विशेष अधिनियमिति नहीं माना जा सकता । इस प्रकार, इस प्रश्न को कि क्या पीएमएलए की धारा 44(1)(क) और धारा 44(1)(ग) के उपबंधों को, उनके पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के उपबंधों से प्रतिकूल होने के बावजूद प्रभावी किया जाएगा अथवा नहीं, अन्य सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए विचार में लिया जाएगा ।

41. दो कानूनों के बीच प्रतिकूल बातों से संबंधित विवाद का समाधान करने के लिए एक स्वीकृत सिद्धांत यह है कि पश्चात्वर्ती अधिनियमिति का पूर्ववर्ती अधिनियमिति पर अध्यारोही प्रभाव होता है । इसके अतिरिक्त, इस प्रकार का विनिश्चय अधिनियमितियों के प्रयोजनों और उद्देश्यों के समीक्षा के अधीन रहते हुए किया जाएगा ।

42. **सोलिडेयर इंडिया लिमिटेड** बनाम **फेयरग्रोथ फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने विशेष न्यायालय द्वारा **भोरुका स्टील लिमिटेड** बनाम **फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है तथा माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त सिद्धांत की अभिपुष्टि की है । उक्त निर्णय से सुसंगत उद्धरण नीचे दिए गए हैं :–

> "10. हम यह देख सकते हैं कि विशेष न्यायालय ने एक अन्य मामले में भी इसी प्रकार के प्रतिवाद के संबंध में कार्यवाही

---

[1] (1997) 89 कंपनी केसेज 547.

की है । भोरुका स्टील लिमिटेड **बनाम** फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड वाले मामले में यह प्रतिवाद किया गया था कि विशेष न्यायालय अधिनियम के अधीन वसूली कार्यवाहियों को 1985 के अधिनियम के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए रोका जाना चाहिए । इस प्रतिवाद को खंडित करते हुए विशेष न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि चूंकि विशेष न्यायालय अधिनियम एक पश्चात्वर्ती अधिनियमिति है इसलिए उसका अध्यारोही प्रभाव होगा । मामले का शीर्ष टिप्पण, जिसमें संक्षिप्त रूप से उक्त निर्णय के मामला आधार को वर्णित किया गया है, निम्नानुसार है –

> 'जहां दो विशेष कानूनों में सर्वोपरि खंडों को अंतर्विष्ट किया गया है, ऐसी दशा में पश्चात्वर्ती कानून के उपबंधों का अध्यारोही प्रभाव होना चाहिए । ऐसा इसलिए है क्योंकि पश्चात्वर्ती कानून के अधिनियमन के समय विधानमंडल पूर्ववर्ती विधान और उसमें अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंड के संबंध में जानकारी रखता था । यदि विधानमंडल ने उपरोक्त जानकारी रखते हुए भी पश्चात्वर्ती अधिनियमिति में सर्वोपरि खंड को सम्मिलित किया है तो इसका तात्पर्य यह है कि विधानमंडल यह वांछा करता है कि पश्चात्वर्ती अधिनियमिति का अध्यारोही प्रभाव हो । यदि विधानमंडल पश्चात्वर्ती अधिनियमिति को अध्यारोही प्रभाव देने की वांछा नहीं रखता तो वह पश्चात्वर्ती अधिनियमिति में यह उपबंध कर सकता था कि पूर्ववर्ती अधिनियमिति के उपबंध लागू बने रहेंगे ।
>
> विशेष न्यायालय (प्रतिभूतियों में संव्यवहारों से संबंधित अपराधों का विचारण), अधिनियम 1992 की धारा 13 में यह उपबंधित है कि उसके उपबंधों का किसी भी अन्य अधिनियम पर अध्यारोही प्रभाव होगा । पश्चात्वर्ती अधिनियमिति होने के कारण उक्त अधिनियम का रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1985 पर अध्यारोही प्रभाव होगा । यदि विधानमंडल यह वांछा करता कि रुग्ण कंपनी अधिनियम के उपबंधों को उक्त अधिनियम के प्रभाव क्षेत्र से अपवर्जित

किया जाना अपेक्षित है तो विधानमंडल ने विनिर्दिष्ट रूप से इस प्रभाव का कोई उपबंध किया होता । इस तथ्य कि विधानमंडल ने विनिर्दिष्ट रूप से ऐसा कोई उपबंध नहीं किया है, से अनिवार्य रूप से यह तात्पर्यित है कि विधानमंडल का आशय यह था कि उक्त अधिनियम के उपबंध रुग्ण कंपनी अधिनियम के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव रखेंगे ।

निर्वचन का यह सुस्थापित नियम है कि यदि एक प्रकार की संरचना से कोई विरोधाभास उत्पन्न होता है, जबकि किसी अन्य संरचना से दोनों अधिनियमों को परस्पर सामंजस्यपूर्ण रीति से संरचित किया जा सकता है तो पश्चात्वर्ती संरचना के नियमों को अंगीकार किया जाना चाहिए । यदि एक निर्वचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1985 का अध्यारोही प्रभाव होगा तो इस निष्कर्ष के कारण स्पष्ट रूप से एक विरोधाभास उत्पन्न होगा । तथापि, उस समय कोई विरोधाभास सामने नहीं आएगा यदि यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि 1992 के अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होगा । इस प्रकार का निर्वचन करने से दोनों अधिनियमों के उद्देश्यों की पूर्ति होगी और इस प्रकार दोनों के बीच में कोई विरोधाभास या प्रतिकूल बात उत्पन्न नहीं होगी । यह स्पष्ट है कि विधानमंडल यह आशय रखता था कि सर्वप्रथम सार्वजनिक धनों की वसूली की जानी चाहिए और ऐसी वसूली रुग्ण कंपनियों से भी की जानी चाहिए । बशर्ते कोई रुग्ण कंपनी सार्वजनिक धन का प्रतिसंदाय करने की स्थिति में हो तो इस प्रभाव की पुन: संरचना करने में किसी प्रकार की कोई कठिनाई सामने नहीं आएगी । औद्योगिक और वित्तीय पुन: संरचना बोर्ड पुन: सरंचना की किसी स्कीम पर विचार करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखेगा कि उसे समादत किया जाना है या विशेष न्यायालय द्वारा इस संबंध में कोई निदेश दिया जाएगा । यदि विशेष न्यायालय का समाधान हो जाता है तो वह वसूली

के लिए समय प्रदान कर सकता है या किस्तों में संदाय किए जाने का विनिश्चय कर सकता है ।'"

43. **महाराष्ट्र ट्यूब्स लिमिटेड** बनाम **स्टेट इंडस्ट्रियल एंड इंवेस्टमेंट कारपोरेशन ऑफ इंडिया**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने दो विशेष विधियों, अर्थात् वित्त निगम अधिनियम, 1951 और रुग्ण औद्योगिक कंपनी (विशेष उपबंध) अधिनियम, 1985 के बीच विरोधाभासों के संबंध में विचार किया । उच्चतम न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि दोनों उक्त कानूनों में सर्वोपरि खंडों को सम्मिलित किया गया है किन्तु '1985 का अधिनियम एक पश्चात्वर्ती अधिनियमिति होने के कारण उसमें सम्मिलित किया गया सर्वोपरि खंड सामान्य रूप से तब तक 1951 के अधिनियम की धारा 46ख में अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंड पर अभिभावी होगा, जब तक कि यह न पाया जाए कि 1985 का अधिनियम 1 साधारण कानून है और 1951 का अधिनियम एक विशेष कानून है ।'

44. यह सिद्धांत कि दो कानूनों के बीच किसी प्रतिकूल बात पाए जाने की दशा में पश्चात्वर्ती अधिनियमिति पूर्ववर्ती अधिनियमों पर अध्यारोही प्रभाव रखेगी, इस तर्क पर आधारित है कि पश्चात्वर्ती अधिनियम के अधिनियमन के समय विधानमंडल पूर्ववर्ती अधिनियमितियों के संबंध में सचेत था और यदि पश्चात्वर्ती अधिनियमिति पूर्ववर्ती अधिनियमों से असंगत है तो इस तथ्य को स्वीकार किया जाना चाहिए कि विधायी आशय यह रहा होगा कि पश्चात्वर्ती अधिनियमिति का पूर्ववर्ती अधिनियमितियों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । तथापि, यह सिद्धांत केवल उसी दशा में उत्तम सिद्ध होगा यदि दो अधिनियमितियों को परस्पर सामंजस्यपूर्ण रीति में पढ़ा नहीं जा सकता है । इस उपधारणा के संबंध में भी यह अपेक्षा की जाती है कि पश्चात्वर्ती अधिनियमिति को प्रमुखता दिए जाने के विधायी आशय की अधिनियमितियों के उद्देश्यों के संदर्भ में या परस्पर असंगत पाए गए कानूनी उपबंधों के अनिवार्य प्रयोजन के संदर्भ में समीक्षा की जाए ।

---

[1] (1993) 2 एस. सी. सी. 144 = 1993 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 991.

45. **बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **केतन पारेख**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने विशेष न्यायालय (प्रतिभूतियों में संव्यवहारों से संबंधित अपराधों का विचारण) अधिनियम, 1992 तथा बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को शोध्य ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 के उपबंधों के बीच विद्यमान विसंगति के प्रश्न की समीक्षा की थी और निम्नानुसार संप्रेक्षण किया था :–

> "28. वर्तमान मामले में, दोनों अधिनियम, अर्थात् 1992 का अधिनियम तथा 1993 का अधिनियम सर्वोपरि खंड से प्रारंभ होते हैं । 1993 के अधिनियम की धारा 34 सर्वोपरि खंड से प्रारंभ होती है और इसी प्रकार 1992 के अधिनियम की धारा 9क भी एक सर्वोपरि खंड से आरंभ होती है । किन्तु इस मामले में धारा 9क को एक पश्चात्वर्ती तारीख, अर्थात् 25 जनवरी, 1994 से प्रभावी किया गया । अत:, इसे पश्चात्वर्ती विधान माना जाएगा और उक्त अधिनियम का 1993 के अधिनियम पर अध्यारोही प्रभाव होगा । किन्तु ऐसे मामले भी सामने आ सकते हैं, जहां दोनों अधिनियमितियों में सर्वोपरि खंड को सम्मिलित किया गया हो तो ऐसे किसी मामले में समुचित परिप्रेक्ष्य यह होगा कि विशेष अधिनियमिति की विषयवस्तु तथा प्रमुख प्रयोजन को विचार में लिया जाए तथा उस दशा में जहां उपर्युक्त प्रमुख प्रयोजन अत्यावश्यकताओं के अंतर्गत आता है, वहां इस बात के होते हुए भी कि अधिनियम एक पश्चात्वर्ती समय पर प्रवृत्त हुआ था, उसके आशय को उद्देश्यों और कारणों के कथन की समीक्षा करते हुए अभिनिश्चित किया जा सकता है । तथापि, जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है, यह सुस्पष्ट है कि 1992 के अधिनियम की धारा 9क को तारीख 25 जनवरी, 1994 को संशोधित किया गया था, जबकि 1993 का अधिनियम वर्ष 1993 के दौरान प्रवर्तन में लाया गया था । अत:, 1994 में धारा 9क को सम्मिलित करते हुए यथासंशोधित 1992 के अधिनियम को पश्चात्वर्ती विधान माना जाएगा और उसके उपबंध 1993 के अधिनियम के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव रखेंगे ।"

---

[1] (2008) 8 एस. सी. सी. 148 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2361.

46. **एस. वनीता** बनाम **उपायुक्त, बंगलुरु अर्बन डिस्ट्रिक्ट और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण और कल्याण अधिनियम, 2007 तथा महिलाओं का घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, 2005 के उपबंधों के बीच विद्यमान विसंगतियों के प्रश्न पर विचार किया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **केतन पारेख** (उपरोक्त) वाले मामले में पूर्व में दिए गए अपने निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :–

> "कानूनी निर्वचन के सिद्धांत यह अपेक्षा करते हैं कि सर्वोपरि खंडों को सम्मिलित करने वाले दो विशेष अधिनियमों की दशा में, साधारण रूप से पश्चात्वर्ती विधि अभिभावी होगी । वर्तमान मामले में, जैसा कि हमने देखा है वरिष्ठ नागरिकों से संबंधित 2007 के अधिनियम में एक सर्वोपरि खंड को सम्मिलित किया गया है, तथापि, विशेष अधिनियमों के बीच विरोध की दशा में यह अभिनिश्चित करने के लिए दोनों कानूनों के प्रमुख प्रयोजनों का विश्लेषण किया जाएगा कि दोनों में से कौन सा अधिनियम दूसरे पर अभिभावी होगा । निर्वचनकर्ता का प्राथमिक प्रयास यह होना चाहिए कि वह यथा साध्य रूप से दोनों अधिनियमितियों के बीच सामंजस्य स्थापित करे ।"

47. धन शोधन के अपराधों की प्रकृति की समीक्षा किए जाने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि पीएमएलए का प्रयोजन और उद्देश्य, जिसके अंतर्गत उसके उपबंध भी सम्मिलित हैं, यह सुनिश्चित करते हैं कि पीएमएलए के अधीन विशेष न्यायालयों के पास अनुसूचित अपराधों का विचारण करने की अधिकारिता भी है, उक्त अपराध को पीएमएलए की धारा 3 में वर्णित किया गया है । जो यह उपबंध करती है कि जो कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से 'अपराध के आगमों से सहबद्ध क्रियाकलाप' को करने का प्रयास करता है या जानबूझकर उसे करने में सहायता करता है या अन्यथा उसकी किसी प्रक्रिया में पक्षकार है, जिसके

---

[1] 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177.

अंतर्गत अपराध के आगमों को छिपाना, कब्जे में रखना, अर्जित करना या उपयोग में लाना और उसे अविवादित संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित करना या इस प्रभाव का दावा करना भी है, धन शोधन के अपराध को करने का दोषी होगा ।

48. 'अपराध के आगमों' पद को पीएमएलए की धारा 2(1) के खंड (प) में परिभाषित किया गया है और उससे 'ऐसी कोई संपत्ति या ऐसी संपत्ति का कोई मूल्य अभिप्रेत है जिसे किसी व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक क्रियाकलाप के परिणामस्वरूप व्युत्पित या अभिप्राप्त किया गया है' । अतः, यह स्पष्ट है कि धन शोधन के अपराध को, अपराध के आगमों के विद्यमान होने के आधार पर प्रतिपादित किया गया है, जो ऐसे किसी संपत्ति से संबद्ध है जिसे किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक क्रियाकलाप के परिणामस्वरूप व्युत्पित या अभिप्राप्त किया गया है । इस प्रकार किसी अनुसूचित अपराध का विद्यमान होना धन शोधन के अपराध को कारित किए जाने के किसी संभाव्य आरोप का प्रमुख आधार है । यद्यपि, पीएमएलए की धारा 3 के अधीन धन शोधन का अपराध एक स्वतंत्र अपराध है, किन्तु इसकी विद्यमानता को (क) किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक क्रियाकलाप के विद्यमान होने, और (ख) ऐसे क्रियाकलाप से किसी संपत्ति के व्युत्पन्न या अभिप्राप्त होने पर प्रतिपादित किया गया है । किसी भी व्यक्ति को उस समय पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय धन शोधन अपराध के लिए सिद्धदोष नहीं ठहराया जा सकता, यदि अनुसूचित अपराध की विद्यमानता को स्थापित नहीं किया गया है ।

49. यह आवश्यक नहीं है कि धन शोधन का अपराध करने के लिए अभियुक्त व्यक्ति प्रतिपादित अनुसूचित अपराध करने के भी अभियुक्त हों । किन्तु उक्त अभियुक्त को तब तक धन शोधन का अपराध करने के लिए दोषसिद्ध नहीं ठहराया जा सकता, जब तक कि अनुसूचित अपराध की विद्यमानता को स्थापित न कर दिया जाए । ऐसे मामलों में, जहां किसी व्यक्ति के विरुद्ध धन शोधन का अपराध करने का आरोप इस आरोप पर आधारित है कि उसने कोई अनुसूचित अपराध किया है, वहां इससे यह तात्पर्यित होगा कि उसे तब तक धन शोधन के

अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं ठहराया जा सकता, जब तक कि यह स्थापित न कर दिया जाए कि वह प्रतिपादित अनुसूचित अपराध करने के लिए दोषी है । धन शोधन के अपराध और प्रतिपादित अनुसूचित अपराध के बीच गहन संबंध है । ऐसी परिस्थितियों में, यह सुसंगत होगा कि किसी विशिष्ट मामले में यह तथ्य समीचीन होगा कि यदि समान न्यायालय अनुसूचित अपराध और साथ ही धन शोधन के अपराध के लिए विचारण करता है तो यह संगतता के हित में होगा और इससे राय में किसी संभाव्य विरोध से भी बचा जा सकेगा ।

50. यह स्पष्ट है कि वित्त (संख्यांक 2) अधिनियम, 2019 द्वारा यथा अंत:स्थापित स्पष्टीकरण के साथ पठित पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड (क) और खंड (ग) को सम्मिलित करने का उद्देश्य यह है कि समान न्यायालय को धन शोधन के अपराधों और साथ ही प्रतिपादित अनुसूचित अपराधों का एक साथ विचारण करने के लिए समर्थ बनाए जा सके । यह अत्यंत स्पष्ट है कि यदि उक्त उद्देश्य की पूर्ति की जानी है तो पीएमएलए की धारा 44(1)(क) और धारा 44(1)(ग) अनिवार्य रूप से पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के उपबंधों पर अभिभावी हों ।

51. पी. सी. अधिनियम – जैसा कि पी. सी. अधिनियम की धारा 28 द्वारा अभिव्यक्त रूप से उपदर्शित किया गया है – को किसी अन्य विधि के अतिरिक्त और न कि उसके अल्पीकरण में अधिनियमित किया गया है । उक्त विधि को अधिनियमित करने का उद्देश्य यह है कि भ्रष्टाचार निवारण से संबंधित विधियों का समेकन और संशोधन किया जाए और साथ ही उससे जुड़े सभी विषयों को उसमें सम्मिलित किया जाए । संसद् ने अपने विवेक से इसे उपयुक्त समझा है कि उक्त अधिनियम के अधीन मामलों का विचारण ऐसे विशेष न्यायाधीशों द्वारा किया जाए, जो दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश या सहायक सेशन न्यायाधीश रहे हैं । स्वीकार्य रूप से, पीएमएलए के अधीन अभिहित विशेष न्यायाधीशों को भी अनिवार्य रूप से उक्त अर्हता को पूरा करना होगा । इस प्रकार पीएमएलए के निबंधनानुसार पदाभिहित विशेष न्यायाधीश पी. सी. अधिनियम के अधीन विशेष न्यायाधीश नियुक्त किए जाने के लिए अपात्र या निरर्हित

नहीं हैं । पी. सी. अधिनियम के अन्य उपबधों, जो पी. सी. अधिनियम के अधीन किसी अपराध का अन्वेषण और विचारण करने की प्रक्रिया से संबंधित हैं, का भी अनुसरण किया जाएगा ।

52. इस प्रकार, यह विश्वास करने का किसी प्रकार का कोई कारण विद्यमान नहीं है कि एक विशेष अधिनियम के रूप में पी. सी. अधिनियम को अधिनियमित करने का विधायी उद्देश्य उस समय सिद्ध नहीं होगा, यदि विचारण का संचालन पीएमएलए के अधीन नियुक्त किसी विशेष न्यायाधीश द्वारा किया जाता है । दोनों कानूनों के उद्देश्यों, उनमें प्रयुक्त भाषा तथा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पीएमएलए एक पश्चात्वर्ती कानून है, पीएमएलए की धारा 44(1) के उपबंधों को पी. सी. अधिनियम की धारा 4(1) के उपबंधों के अपवाद के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए ।

53. याची के विद्वान् काउंसेल श्री दीवान ने **पुलिस निरीक्षक, सीबीआई** बनाम **सहायक निदेशक** (उपरोक्त) वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का गहन रूप से अवलंब लिया है । उक्त मामले में, माननीय उच्च न्यायालय ने यह उल्लेख किया है कि पीएमएलए के अधीन प्राधिकृत अधिकारी के लिए यह आबद्धकर नहीं है कि वह पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) के अधीन कोई आवेदन प्रस्तुत करे । न्यायालय ने इस संबंध में यह तर्क दिया कि संसद् ने इस तथ्य की अनदेखी नहीं की होगी कि कम से कम कुछ मामलों में प्रतिपादित अपराध विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत विशेष न्यायालयों द्वारा विचारणीय होंगे तथा पीएमएलए के अधीन गठित विशेष न्यायालय ऐसे अपराधों का विचारण करने हेतु समक्ष नहीं होगा । न्यायालय ने पीएमएलए की धारा 44(1) के अधीन सर्वोपरि खंड को निर्दिष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि 'चूंकि धारा 44(1) में अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंड केवल प्रक्रियात्मक विषयों के संबंध में लागू होता है, इसलिए उक्त उपबंध इस अभिवाक् का समर्थन नहीं कर सकता कि धारा 44(1) प्रतिपादित अपराध को सम्मिलित करने वाले कानूनों के संबंध में सारवान् विधि पर अभिभावी नहीं हो सकती' । जहां तक पीएमएलए की धारा 71 में अंतर्विष्ट सर्वोपरि खंड के उपबंध का संबंध है न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि 'स्वयं धारा 71 में यह स्पष्टीकरण दिया

गया है कि अधिनियम के उपबंध किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट उससे किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे । स्पष्ट रूप से, धन शोधन अधिनियम, प्रचालन के ऐसे क्षेत्र में, जिसमें वह विस्तारित होता है, प्रमुखता रखता है और उक्त अधिकार क्षेत्र में उसका किसी अन्य कानून में विद्यमान असंगत उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । धारा 71 का यह प्राकृतिक और सीमित सीमा तक विस्तार क्षेत्र है तथा वह कोई ऐसी सार्वभौमिक धारा नहीं है जिसका सभी अन्य कानूनों पर अध्यारोही प्रभाव होगा' ।

54. न्यायालय ने यह भी उल्लेख किया कि पीएमएलए और पी. सी. अधिनियम, अपने-अपने विशेष क्षेत्रों में प्रचालित होते हैं और न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) का विस्तार क्षेत्र सीमित था और वह पी. सी. अधिनियम के अधीन ऐसे अपराध पर विस्तारित नहीं होता, जो उक्त अधिनियम के अधीन गठित विशेष न्यायालयों द्वारा विचारणीय है तथा उक्त उपबंध का प्रयोग किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित मामले को उस समय पीएमएलए के अधीन गठित विशेष न्यायालय को सौंपने के लिए नहीं किया जा सकता, यदि विशेष न्यायालय के पास उक्त मामले का विचारण करने की अधिकारिता नहीं है ।

55. न्यायालय द्वारा यह तर्क दिया गया कि पीएमएलए की धारा 44 की उपधारा (1) के खंड (क) को पीएमएलए की धारा 43(2) के साथ संयुक्त रूप से पढ़ा जाना चाहिए और वह केवल ऐसे मामले में लागू होती है जहां अभियुक्त का धन शोधन के अधीन किसी अपराध के लिए विचारण किया जाना और साथ ही समान विचारण के दौरान किसी प्रतिपादित अपराध के लिए भी विचारण किया जाना अपेक्षित है । ऐसे मामलों में, यह संभव है कि अनुसूचित अपराध को किसी एक विशेष न्यायालय की अधिकारिता में कारित किया गया हो, किन्तु पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध किसी अन्य विशेष न्यायालय की अधिकारिता में कारित किया गया हो । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पीएमएलए की धारा 44(1) के खंड (क) में ऐसी किसी परिस्थिति के संबंध में समाधान उपलब्ध कराया गया है और

उसमें अभिव्यक्त रूप से यह उपबंधित किया गया है कि अभियुक्त का विचारण केवल उस क्षेत्र, जिसमें पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध किया गया है, के लिए गठित विशेष न्यायालय द्वारा किया जाएगा ।

56. यह न्यायालय विनम्र रूप से **पुलिस निरीक्षक, सीबीआई** बनाम **सहायक निदेशक और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में लिए गए मत से सहमत होने में असमर्थ है । यह प्रतीत नहीं होता है कि वित्त (संख्यांक 2) अधिनियम, 2019 द्वारा यथा अंत: स्थापित स्पष्टीकरण को माननीय उच्चतम न्यायालय के संज्ञान में लाया गया था । यदि एक बार विधानमंडल द्वारा यह स्पष्ट कर दिया गया है कि अपराधों के दोनों सेटों, अर्थात् अनुसूचित अपराध और साथ ही पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध – का विचारण समान न्यायालय द्वारा किया जाएगा और उसे एक संयुक्त विचारण के रूप में माना जाएगा तो पीएमएलए की धारा 44(1)(क) के संबंध में यह निर्वचन कि केवल ऐसे अनुसूचित अपराधों के संबंध में लागू होगा, जिनका समान विचारण के दौरान विचारण किया जाए, स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

57. यह आवश्यक नहीं है कि संबद्ध प्राधिकारी पीएमएलए के अधीन कोई शिकायत फाइल करने हेतु प्राधिकृत है और उसे ऐसे प्रत्येक मामले में परिवाद फाइल करना चाहिए, जहां प्रतिपादित अपराध का विचारण पीएमएलए के अधीन अपराध का विचारण करने वाले विशेष न्यायालय से भिन्न किसी अन्य न्यायालय द्वारा किया जा रहा है । संबद्ध प्राधिकारी ऐसा केवल उन मामलों में करेगा, जब ऐसा अंतरण त्वरित विचारण के हित में हो या अन्यथा यह समीचीन हो कि दोनों अपराधों का विचारण समान न्यायालय द्वारा किया जाए । तथापि, इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि संबद्ध प्राधिकारी को पी. सी. अधिनियम सहित विशेष अधिनियमों के अधीन अपराधों से संबंधित मामलों में पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) के अधीन कोई परिवाद प्रस्तुत करने से अपवर्जित किया गया है और यह न्यायालय केरल उच्च न्यायालय के उक्त मत को स्वीकार करने में असमर्थ है ।

58. उपरोक्त प्रभाव का कथन करने के पश्चात् यह उल्लेख करना सुसंगत है कि केरल उच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि संबद्ध प्राधिकारी से यह अपेक्षित है कि वह अपने विवेक का सावधानीपूर्वक प्रयोग करते हुए केवल उपयुक्त मामलों में ही परिवाद प्रस्तुत करे । **पुलिस निरीक्षक, सीबीआई** बनाम **सहायक निदेशक और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में न्यायालय द्वारा किए गए सुसंगत संप्रेक्षण निम्नानुसार हैं :–

> "33. अतः, धारा 44(1)(ग) का सुसंगत रूप से निर्वचन किया जाना चाहिए जिससे अधिनियम का प्रयोजन उपयुक्त रूप से सिद्ध होगा । अनिवार्य रूप से हमें यह अभिनिर्धारित करना होगा कि धारा 44(1)(ग) से यह विवक्षित नहीं होता है कि उक्त उपधारा के अधीन अनुध्यात प्रत्येक मामले में सक्षम प्राधिकारी किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित मामले को धन शोधन अधिनियम के अधीन गठित विशेष न्यायालय को सौंपने हेतु परिवाद प्रस्तुत करेगा । शिकायत प्रस्तुत करने के लिए सक्षम प्राधिकृत प्राधिकारी में एक निष्ठावान विवेकाधिकार को भी निहित किया गया है कि वह अपने विवेक का सावधानीपूर्वक प्रयोग करते हुए केवल उपयुक्त मामलों में आवेदन प्रस्तुत करे, जहां विशेष न्यायालय को इस प्रकार मामला सुपुर्द करने से अभियोजन पक्ष की पराजय नहीं होगी और दूसरी ओर मामलों के त्वरित निपटान को समर्थ बनाया जा सकेगा और साथ ही कानून का प्रयोजन भी सिद्ध होगा ... ।"

59. यह न्यायालय पूर्वोक्त मत से सहमत है । पीएमएलए के अधीन संबद्ध प्राधिकारी से यह अपेक्षित नहीं है कि वह प्रत्येक मामले में आवेदन प्रस्तुत करे और उसके द्वारा केवल ऐसे मामलों में ही आवेदन प्रस्तुत किया जा सकता है, जहां ऐसा करना त्वरित विचारण के हित में आवश्यक है और अन्यथा भी ऐसा करना समीचीन है ।

60. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस प्रतिवाद को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि पी. सी. अधिनियम के अधीन दंडनीय अनुसूचित अपराधों (जैसा कि पीएमएलए की अनुसूची के भाग-क के पैरा 8

में विनिर्दिष्ट किया गया है) से संबंधित मामलों का विचारण पीएमएलए के अधीन अभिहित ऐसे विशेष न्यायालयों द्वारा नहीं किया जा सकता, जो पीएमएलए की धारा 4 के अधीन दंडनीय परस्पर सहबद्ध मामलों का विचारण कर रहे हैं क्योंकि उनके पास ऐसा करने की अधिकारिता विद्यमान नहीं है ।

61. पीएमएलए की धारा 44(1)(ग) की भाषा में कोई अस्पष्टता विद्यमान नहीं हैं । अनुसूचित अपराध का विचारण करने वाले संबद्ध न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह ऐसे मामले को, पीएमएलए के अधीन शिकायत करने के लिए प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा आवेदन किए जाने पर पीएमएलए के अधीन अभिहित विशेष न्यायालय को अंतरित करे । यह उपबंध किया गया है कि ऐसा केवल उस समय किया जाएगा जब उक्त विशेष न्यायालय ने पीएमएलए के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान कर लिया हो ।

62. वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इस संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया गया है कि अन्य संबद्ध मामलों का विचारण विशेष न्यायालय द्वारा किया जा रहा है । विशेष न्यायालय (पीएमएलए), पटियाला हाउस ने अपने तारीख 8 अगस्त, 2018 के एक आदेश द्वारा प्रवर्तन निदेशालय द्वारा फाइल किए गए परिवाद (2018 का सेशन मामला सं. 259) का संज्ञान लिया है ।

63. इस न्यायालय को उक्त आक्षेपित आदेश में कोई त्रुटि प्रतीत नहीं होती है । तद्नुसार, याचिका खारिज की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

पु.

जॉन मैल्कीयुर

बनाम

उप-मंडलीय कार्यपालक मजिस्ट्रेट-सह-राजस्व मंडलीय अधिकारी, तिरुकोईलूर, राजस्व मंडल, कल्लाकुरिची और अन्य

(2021 का दांडिक पुनरीक्षण मामला सं. 149)

तारीख 9 अप्रैल, 2021

न्यायमूर्ति पी. वैलमुरुगन

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 122(1)(ख) – अभियुक्त के विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट जारी किया जाना – याची द्वारा यह दलील देते हुए गिरफ्तारी के वारंट को चुनौती दिया जाना कि उक्त वारंट जारी करने से पूर्व उसे उसके पक्षकथन की प्रतिरक्षा करने हेतु पर्याप्त और उचित अवसर उपलब्ध नहीं कराए गए – याची द्वारा यह भी अभिकथित किया जाना कि उसके द्वारा यथाईप्सित सुसंगत दस्तावेज भी उसे उपलब्ध नहीं कराए गए और परिणामतः उसके विरुद्ध उक्त वारंट जारी करके नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का घोर उल्लंघन किया गया है – प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत किए गए मामले के अभिलेख के परिशीलन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि याची को उसके पक्षकथन की प्रतिरक्षा करने हेतु विधि के अनुसार पर्याप्त अवसर उपलब्ध नहीं कराया गया – अतः उसके विरुद्ध जारी किया गया गिरफ्तारी का वारंट विधिपूर्ण नहीं है, इसलिए उसे अपास्त किया जाता है ।

वर्तमान पुनरीक्षण मामले का निपटारा करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि याची ने 2020 के प्रकीर्ण मामला सं. 79 में तारीख 31 अगस्त, 2020 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 110 के अधीन उत्तम व्यवहार के लिए एक बंधपत्र का निष्पादन किया था और उसके पश्चात् याची दो अन्य मामलों में अंतर्वलित हुआ, अर्थात् 2020 का अपराध सं. 1654 जिसे उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) की धारा 109 के साथ पठित धारा 341, 294(ख), 352 और धारा 506(II) के अधीन अपराध

करने हेतु रजिस्टर किया गया और 2020 का अपराध सं. 1663 जिसे उसके विरुद्ध आयुध अधिनियम, 1959 (1959 का 54) की धारा 25(1ख)(क) और 27(2) के अधीन अपराध करने हेतु रजिस्टर किया गया । चूंकि याची ने 2020 के प्रकीर्ण मामला सं. 79 में बंधपत्र का निष्पादन करने के तुरन्त पश्चात् अन्य अपराधों को कारित किया है इसलिए प्रथम प्रत्यर्थी ने उसके विरुद्ध एक आदेश पारित किया जिसके माध्यम से याची को तारीख 17 नवम्बर, 2020 से तारीख 31 जुलाई, 2021 तक की अवधि के दौरान कारागार में रखने का आदेश दिया गया । याची ने उक्त आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान पुनरीक्षण याचिका फाइल की है । दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत दलीलों को सुनने और मामले के अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – निःसंदेह रूप से बंधपत्र को रद्द किए जाने से पूर्व सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाना अनिवार्य है और यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो यह नैसर्गिक न्याय के उल्लंघन के तत्समान होगा और इस प्रकार न्यायालय का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह ऐसे किसी आदेश को रद्द करे । तथापि, अभिलेखों के परिशीलन पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि सभी कार्यवाहियों को तारीख 28 दिसम्बर, 2020 को पूरा कर दिया गया था किन्तु याची द्वारा यथाईप्सित सुसंगत दस्तावेजों को उसे दिखाए जाने के लिए प्रस्तुत किए जाने संबंधी कोई भी उल्लेख अभिलेख पर उपलब्ध नहीं हैं और यद्यपि याची/अभियुक्त को अपने मामले की प्रतिरक्षा हेतु पर्याप्त अवसर प्रदान किए गए थे और उल्लेखनीय रूप से ऐसे अवसर उस समय उपलब्ध कराए गए थे जब याची न्यायिक अभिरक्षा में था । यह दर्शित करने हेतु कोई स्पष्ट सामग्री या अभिलेख विद्यमान नहीं हैं कि सभी औपचारिकताओं को पूरा किया गया है तथा अवसर उपलब्ध कराया गया है । इन परिस्थितियों के अधीन यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि याची द्वारा यथाईप्सित सुसंगत दस्तावेज उसे उपलब्ध नहीं कराए गए और इस प्रकार याची को अपने मामले की प्रतिरक्षा हेतु पर्याप्त अवसर प्रदान नहीं किया गया । अतः प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 8 जनवरी, 2021 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है और मामले को वापस प्रथम

प्रत्यर्थी को अग्रेषित किया जाता है ताकि वह इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तारीख से दो मास की अवधि के भीतर विधि के अनुसार मामले का निपटारा कर सके । तद्नुसार, वर्तमान दांडिक पुनरीक्षण मामले का निपटारा किया जाता है । परिणामतः, संबद्ध प्रकीर्ण याचिका को समाप्त किया जाता है । (पैरा 7, 8 और 9)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2021 का दांडिक पुनरीक्षण मामला सं. 149.

वर्तमान दांडिक पुनरीक्षण मामला सं. क. ए-3/3430/2020 में विद्वान् उप-मंडलीय कार्यपालक मजिस्ट्रेट-सह-राजस्व मंडलीय अधिकारी, तिरुकोईलूर, राजस्व मंडल, कल्लाकुरिची द्वारा तारीख 8 जनवरी, 2021 को पारित निर्णय को अपास्त किए जाने का अनुरोध करते हुए फाइल किया गया है ।

याची की ओर से सर्वश्री सी. पी. पलानीकेमी और टी. के. एस. गांधी

प्रत्यर्थियों की ओर से टी. पी. सविता, सरकारी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति पी. वैलमुरुगन – यह दांडिक पुनरीक्षण मामला सं. क. ए-3/3430/2020 में विद्वान् उप-मंडलीय कार्यपालक मजिस्ट्रेट-सह-राजस्व मंडलीय अधिकारी, तिरुकोईलूर, राजस्व मंडल, कल्लाकुरिची द्वारा तारीख 8 जनवरी, 2021 को पारित निर्णय को अपास्त किए जाने का अनुरोध करते हुए फाइल किया गया है ।

2. प्रथम प्रत्यर्थी का पक्षकथन यह है कि याची ने 2020 के प्रकीर्ण मामला सं. 79 में तारीख 31 अगस्त, 2020 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 110 के अधीन उत्तम व्यवहार के लिए एक बंधपत्र का निष्पादन किया था और उसके पश्चात् याची दो अन्य मामलों में अंतर्वलित हुआ, अर्थात् 2020 का अपराध सं. 1654 जिसे उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) की धारा 109 के साथ पठित धारा 341, 294(ख), 352 और धारा 506(II) के अधीन अपराध करने हेतु रजिस्टर किया गया और 2020 का अपराध सं. 1663 जिसे उसके विरुद्ध आयुध अधिनियम, 1959 (1959 का 54) की धारा 25(1ख)(क) और 27(2) के अधीन अपराध करने हेतु रजिस्टर किया

गया । चूंकि याची ने 2020 के प्रकीर्ण मामला सं. 79 में बंधपत्र का निष्पादन करने के तुरन्त पश्चात् अन्य अपराधों को कारित किया है इसलिए प्रथम प्रत्यर्थी ने उसके विरुद्ध एक आदेश पारित किया जिसके माध्यम से याची को तारीख 17 नवम्बर, 2020 से तारीख 31 जुलाई, 2021 तक की अवधि के दौरान कारागार में रखने का आदेश दिया गया । याची ने उक्त आदेश को चुनौती देते हुए वर्तमान पुनरीक्षण याचिका फाइल की है ।

3. पुनरीक्षण याची की ओर उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील प्रस्तुत की है कि प्रथम प्रत्यर्थी ने वर्तमान मामले के संबंध में कोई जांच नहीं की है और न ही उसमें उसने याची को अपना पक्षकथन प्रस्तुत करने का कोई अवसर प्रदान किया है । यद्यपि, प्रथम प्रत्यर्थी ने यह संप्रेक्षण किया है कि आयुध अधिनियम की धारा 25(1ख)(क) और 27(2) के अधीन अपराध के संबंध में 2020 का अपराध सं. 1663 में अन्तर्वलित अपराध को कारित किए जाने के संबंध में अभिलेख पर कोई समर्थनकारी सामग्री उपलब्ध नहीं हैं, तथापि, जहां तक 2020 के अपराध सं. 1654 का संबंध है, अभियुक्त/याची द्वारा अभिकथित अपराध को कारित किए जाने संबंधी पर्याप्त सामग्री अभिलेख पर मौजूद है और तथापि, दोनों मामले अभी भी अन्वेषण के प्रक्रम पर हैं और किसी भी मामले में अभी तक कोई अंतिम रिपोर्ट फाइल नहीं की गई है और इसलिए ऐसे मामलों को, जिनमें अभी तक अन्वेषण की प्रक्रिया भी पूरी नहीं हुई है, कारावास का कोई आदेश पारित करने के लिए आधार बनाया जाना नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त का घोर उल्लंघन है ।

4. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् सरकारी अधिवक्ता (दांडिक पक्ष) ने यह दलील प्रस्तुत की है कि आदेश पारित किए जाने के पूर्व याची को पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया था, तथापि, याची ने उस अवसर का लाभ नहीं उठाया । प्रथम प्रत्यर्थी ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का समुचित मूल्यांकन करने के पश्चात् याची को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 110 के अधीन निष्पादित बंधपत्र का भंग करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 122(1) के अधीन तारीख 17 नवम्बर, 2020 से तारीख 31 जुलाई, 2021 तक की अवधि के दौरान कारावास से दंडादिष्ट किया और इस प्रकार, उक्त दंडादेश में किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

5. दोनों पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना तथा अभिलेख पर रखी गई सामग्रियों का परिशीलन किया ।

6. स्वीकार्य रूप से, याची ने 2020 के प्रकीर्ण मामला सं. 79 में तारीख 31 अगस्त, 2020 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 110 के अधीन उत्तम व्यवहार के लिए एक बंधपत्र का निष्पादन किया था । उक्त जमानत बंधपत्र के लम्बित रहने के दौरान याची दो अन्य मामलों में अंतर्वलित हुआ, अर्थात् 2020 का अपराध सं. 1654 जिसे उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित धारा 341, 294(ख), 352 और धारा 506(II) के अधीन रजिस्टर किया गया और साथ ही 2020 का अपराध सं. 1663 जिसे उसके विरुद्ध आयुध अधिनियम की धारा 25(1ख)(क) और 27(2) के अधीन अपराध करने हेतु रजिस्टर किया गया तथा याची को उक्त मामलों के संबंध में गिरफ्तार किया गया और उसे न्यायिक अभिरक्षा में भेज दिया गया । जब याची न्यायिक अभिरक्षा में था तो उस समय प्रथम प्रत्यर्थी, अर्थात् पुलिस ने याची के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 122(1)(ख) के अधीन कार्रवाई आरम्भ की तथा उसे तारीख 8 दिसम्बर, 2020 को दूसरे प्रत्यर्थी के समक्ष प्रस्तुत किया गया । सम्यक् जांच के पश्चात् दूसरे प्रत्यर्थी ने तारीख 8 जनवरी, 2021 को अंतिम आदेश पारित किया ।

7. याची के विद्वान् काउंसेल ने मुख्य रूप से यह प्रतिवाद प्रस्तुत किया है कि यद्यपि याची को अपने मामले में प्रतिरक्षा हेतु एक काउंसेल नियोजित करने की अनुमति प्रदान की गई थी फिर भी याची को, उसके मामले की प्रतिरक्षा हेतु उसके द्वारा ईप्सित सुसंगत अभिलेख उपलब्ध नहीं कराए गए थे । आदेश के परिशीलन पर यह देखा जा सकता है कि पी. टी. वारंट तारीख 8 दिसम्बर, 2020 जारी किया गया था और उसी दिन याची एक काउंसेल के साथ न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ था और उसके विद्वान् काउंसेल के अनुरोध पर मामले को तारीख 15 दिसम्बर, 2020 तक स्थगित कर दिया गया था । तारीख 15 दिसम्बर, 2020 को याची ने पुनः अतिरिक्त समयावधि का अनुरोध किया क्योंकि उसे कोई दस्तावेज प्राप्त नहीं हुए थे और उसने उत्तर फाइल करने के लिए समय प्रदान किए जाने का अनुरोध किया । विद्वान् काउंसेल के अनुरोध के अनुसार तारीख 28 दिसम्बर, 2020 को

मामले की अंतिम सुनवाई की गई, तथापि, उक्त मामले में याची द्वारा यथाईप्सित सुसंगत दस्तावेज उपलब्ध कराए बिना तारीख 8 जनवरी, 2021 को अंतिम आदेश पारित कर दिया गया । निःसंदेह रूप से बंधपत्र को रद्द किए जाने से पूर्व सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाना अनिवार्य है और यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो यह नैसर्गिक न्याय के उल्लंघन के तत्समान होगा और इस प्रकार न्यायालय का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह ऐसे किसी आदेश को रद्द करे । तथापि, अभिलेखों के परिशीलन पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि सभी कार्यवाहियों को तारीख 28 दिसम्बर, 2020 को पूरा कर दिया गया था किन्तु याची द्वारा यथा-ईप्सित सुसंगत दस्तावेजों को उसे दिखाए जाने के लिए प्रस्तुत किए जाने संबंधी कोई भी उल्लेख अभिलेख पर उपलब्ध नहीं हैं और यद्यपि याची/अभियुक्त को अपने मामले की प्रतिरक्षा हेतु पर्याप्त अवसर प्रदान किए गए थे और उल्लेखनीय रूप से ऐसे अवसर उस समय उपलब्ध कराए गए थे जब याची न्यायिक अभिरक्षा में था । यह दर्शित करने हेतु कोई स्पष्ट सामग्री या अभिलेख विद्यमान नहीं हैं कि सभी औपचारिकताओं को पूरा किया गया है तथा अवसर उपलब्ध कराया गया है ।

8. इन परिस्थितियों के अधीन यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि याची द्वारा यथाईप्सित सुसंगत दस्तावेज उसे उपलब्ध नहीं कराए गए और इस प्रकार याची को अपने मामले की प्रतिरक्षा हेतु पर्याप्त अवसर प्रदान नहीं किया गया । अतः प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 8 जनवरी, 2021 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है और मामले को वापस प्रथम प्रत्यर्थी को अग्रेषित किया जाता है ताकि वह इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तारीख से दो मास की अवधि के भीतर विधि के अनुसार मामले का निपटारा कर सके ।

9. तद्नुसार, वर्तमान दांडिक पुनरीक्षण मामले का निपटारा किया जाता है । परिणामतः, संबद्ध प्रकीर्ण याचिका को समाप्त किया जाता है ।

याचिका मंजूर की गई ।

पु.

के. तिरुपति

बनाम

राज्य, पुलिस निरीक्षक इरोड उत्तर पुलिस थाना, इरोड के माध्यम से

(2019 की दांडिक अपील सं. 744)

तारीख 9 जुलाई, 2021

न्यायमूर्ति पी. वैलमुरुगन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 306 – आत्महत्या हेतु दुष्प्रेरण – पीड़ित महिला और अभियुक्त द्वारा घर से भागकर विवाह किया जाना – विवाह के उपरांत अभियुक्त/पति द्वारा कोई रोजगार/कार्य न करना और अत्यधिक मात्रा में मदिरा का सेवन किया जाना – अभियुक्त/पति द्वारा अपनी पत्नी/पीड़ित महिला के सभी जेवरों आदि का विक्रय करके उससे प्राप्त हुए धन से मदिरा पान किया जाना – पति/अभियुक्त द्वारा बार-बार पत्नी/पीड़ित महिला से डांट-डपट करना और उसकी पिटाई करना तथा बार-बार उसे यह कहना कि 'जा और मर जा' – अभियुक्त/पति द्वारा अपने माता-पिता से उनकी संपत्ति में से अपने हिस्से की मांग करना – माता-पिता द्वारा संपत्ति में हिस्सा देने से इनकार किया जाना – अभियुक्त/पति द्वारा क्रोधवश पत्नी की बुरी तरह से पिटाई किया जाना और पुन: यह कथन किया जाना कि 'जा और मर जा' – तत्पश्चात् पत्नी द्वारा अपने शरीर पर डीजल छिड़ककर अग्निदाह करना – अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने पर पत्नी/पीड़ित महिला को अस्पताल में दाखिल किया जाना – डाक्टर द्वारा उसकी चिकित्सा परीक्षा के उपरांत उसकी मन:स्थिति सही होने संबंधी प्रमाणपत्र जारी किया जाना, जिसके उपरांत न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा उसके कथन को लेखबद्ध किया जाना – उसके थोड़े समय पश्चात् पीड़ित महिला की मृत्यु हो जाना, अत:, उक्त कथन को मृतका के मृत्युकालिक कथन के रूप में न्यायालय के अभिलेख पर रखा जाना – प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा

शिकायत/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने में हुए विलंब के संबंध में आक्षेप उठाया जाना – मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह प्रतीत होता है कि शिकायत/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराए जाने में हुए विलंब को उपयुक्त रूप से स्पष्ट किया गया है और चिकित्सीय साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अप्राकृतिक थी और उसके द्वारा आत्महत्या करने से तुरंत पूर्व अभियुक्त/पति द्वारा उसकी पिटाई की गई थी और उसे यह कहा गया था कि 'जा और मर जा', अत: विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त/पति की दोषसिद्धि का निर्णय पूर्णत: उचित प्रतीत होता है और उसमें किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

वर्तमान अपील का निपटारा करने हेतु संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी मृतका का पति है । मृतका ने अपने माता-पिता की इच्छा और मर्जी के बिना अपीलार्थी से विवाह किया था और विवाह के पश्चात् उन्होंने अपने एक स्वतंत्र कुटुम्ब की स्थापना की थी और अपीलार्थी ने अपने कुटुम्ब को आर्थिक रूप से समर्थन उपलब्ध नहीं कराया था और वह अपने कुटुम्ब की रोजमर्रा की अपेक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ था और इसलिए वह सदैव अपनी पत्नी को अपने माता-पिता से धन लाने के लिए कहता था । वह मदिरापान करता था तथा कोई कार्य/रोजगार भी नहीं करता था और इस प्रकार उसने कभी भी किसी भी रूप में अपने कुटुम्ब का समर्थन नहीं किया । इसके अतिरिक्त, उसने मृतका के सभी जेवरों को गिरवी रख दिया तथा इस प्रकार जेवरों को गिरवी रखने से प्राप्त हुए धन से मदिरा का सेवन किया । वह प्राय: अपनी पत्नी/मृतका से डांट-डपट करता था और उसकी पिटाई भी करता था । उनके जीवन में एक समय ऐसा आया जब वह अक्सर अपनी पत्नी से डांट-डपट करके उसकी पिटाई करता था और साथ ही वह उसके लिए इन शब्दों का प्रयोग करता था - 'जा और मर जा' । मृतका को पूर्व में अपीलार्थी से प्रेम हुआ था और वह उसके प्रेम में उसके साथ अपने घर से अपने माता-पिता को बिना सूचना दिए भाग गई थी और उसने अपीलार्थी से विवाह कर लिया था । किन्तु विवाह के पश्चात् अपीलार्थी ने कोई भी काम नहीं किया और उसने अपने परिवार की रोजमर्रा की जरूरतों के

प्रति भी कभी कोई योगदान नहीं दिया । उसने अपनी पत्नी को कभी भी खाना तक उपलब्ध नहीं कराया और इसके अलावा, उसने अपने पत्नी के सभी जेवरों आदि को गिरवी रख दिया । तारीख 6 जनवरी, 2015 को अपीलार्थी और पीड़िता दोनों अपीलार्थी के माता-पिता घर गए । चूंकि अपीलार्थी ने अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध मृतका से विवाह किया था, इसलिए जब उसने अपने माता-पिता से उनकी संपत्ति में अपना हिस्सा मांगा तो अपीलार्थी के माता-पिता ने उसे उसका हिस्सा देने से इनकार कर दिया । अपीलार्थी और पीड़िता तारीख 7 जनवरी, 2015 को अपने घर लौट आए । चूंकि अपीलार्थी अपने माता-पिता की संपत्ति से हिस्सा प्राप्त नहीं कर सका था, इसलिए उसने क्रोधवश अपनी पत्नी को पीटा और उसे आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया । इस प्रकार उसने मृतका को आत्महत्या करने के लिए उकसाया । पीड़िता को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने के पश्चात् अस्पताल में दाखिल कराया गया था । न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पीड़िता के कथन को लेखबद्ध किया था । उसके पश्चात् अग्निदाह के कारण आई क्षतियों के कारण पीड़िता की मृत्यु हो गई और इस प्रकार अपीलार्थी के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया । विचारण पूरा होने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने सभी सुसंगत सामग्रियों और साक्ष्यों पर विचार करने के पश्चात् अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराते हुए उसे दंडादिष्ट किया । विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और अधिरोपित दंडादेश से व्यथित होकर अभियुक्त ने वर्तमान अपील के माध्यम से उक्त निर्णय तथा आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी है । उच्च न्यायालय ने दोनों पक्षों की सुनवाई करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का उपयुक्त रूप से मूल्यांकन करने के पश्चात् अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्रस्तुत अभिसाक्ष्य और साथ ही पीड़ित महिला की जांच करने वाले और न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा उसके कथन को लेखबद्ध किए जाने के समय पीड़ित लड़की की मानसिक स्थिति को प्रमाणित करने वाले डाक्टर, जिसकी अभि. सा. 6 के रूप में परीक्षा की गई है, द्वारा प्रस्तुत अभिसाक्ष्य को एक साथ पढ़ने और साथ ही प्रदर्श पी-3 के परिशीलन से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि

अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रपीड़न तथा उत्पीड़न के कारण पीड़ित महिला ने आत्महत्या की थी । प्रदर्श पी-3 के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि घटना की तारीख से आठ माह पूर्व से अपीलार्थी और पीड़ित महिला के बीच में लड़ाई-झगड़ा चल रहा था । घटना की तारीख से पूर्व अपीलार्थी अपने माता-पिता के घर गया था और वहां से लौटने के पश्चात् वह जोर से पीड़ित महिला पर चिल्लया था और उसने उसके साथ झगड़ा किया था । घटना की तारीख को प्रात: उसने बार-बार पीड़ित महिला को यह कहा था कि 'जा और मर जा' । अत:, पीड़ित महिला ने स्वयं के शरीर पर डीजल छिड़क कर अपना अग्निदाह कर लिया । पीड़ित महिला ने अपने कथन में यह भी लेखबद्ध कराया है कि उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था, जिसके दौरान अपीलार्थी ने उसकी बुरी तरह पिटाई की थी और उसे मर जाने के लिए कहा था । पीड़ित महिला को अपीलार्थी से प्रेम हो गया था और वह अपने माता-पिता की सहमति के बिना अपीलार्थी के साथ भाग गई थी और उसने अपीलार्थी से विवाह कर लिया था, किन्तु अपीलार्थी ने एक कर्तव्यबद्ध पति के रूप में कभी भी अपने कर्तव्य का निर्वहन नहीं किया । अपीलार्थी ने कभी भी पीड़ित महिला की देखभाल नहीं की और इसके विपरीत उसने उसके सारे जेवरों को बेच दिया तथा उससे प्राप्त हुए धन से मदिरापान किया तथा इसके अतिरिक्त, पीड़ित महिला से प्राय: झगड़ा करता था और तथा उसकी पिटाई करता था । इस प्रकार उसने पीड़ित महिला को आत्महत्या करने के लिए उकसाया । अभि. सा. 1 पीड़ित महिला की माता और शव परीक्षा करने वाले डाक्टर द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अप्राकृतिक है और उसकी मृत्यु आघात और आंतरिक रक्तस्राव के कारण हुई थी । अत:, अभिलेख पर उपलब्ध साक्षियों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य तथा न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा लेखबद्ध किए गए पीड़ित महिला के कथन को संयुक्त रूप से पठन करने पर तथा दूसरी ओर न्यायिक मजिस्ट्रेट, जिसने डाक्टर द्वारा पीड़ित महिला की चिकित्सा परीक्षा के उपरांत दिए गए प्रमाणपत्र, जिसमें यह प्रमाणित किया गया था कि पीड़ित महिला पूरी तरह होश में थी और उसकी मानसिक स्थिति बिल्कुल ठीक थी, के

आधार पर पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया था, के साक्ष्य को विचार में लेने पर यह दर्शित होता है कि प्रदर्श पी-3 के रूप में चिह्नित कथन को पीड़ित महिला द्वारा समुचित मानसिक स्थिति में लेखबद्ध कराया गया है । अतः, पीड़ित महिला के कथन और चिकित्सीय साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अप्राकतिक थी और उसके द्वारा आत्महत्या करने से तुरंत पूर्व अपीलार्थी ने उसकी बुरी तरह पिटाई की थी और साथ ही उससे यह कहा था कि 'जा और मर जा' । अतः, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी द्वारा किया गया यह कथन कि 'जा और मर जा' स्पष्ट रूप से यह दर्शित करता है कि अपीलार्थी ने दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध किया है और इसलिए विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को सही रूप से सिद्धदोष ठहराया है । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में फाइल किए जाने में हुए विलंब के संबंध में प्रतिवाद किया है और जहां तक इस प्रतिवाद का संबंध है, विचारण न्यायालय द्वारा यह संप्रेक्षण किया गया है कि अपीलार्थी और पीड़ित महिला, अपने विवाह के पश्चात् अकेले और पृथक् रूप से निवास कर रहे थे तथा पीड़ित महिला के माता-पिता को इस घटना की जानकारी नहीं थी और इसके अतिरिक्त, पीड़ित महिला के माता-पिता को उसके निवास-स्थान के संबंध में भी कोई जानकारी नहीं थी । घटना के पश्चात् पीड़ित महिला के पड़ोसियों ने पीड़ित महिला को माता को इस घटना के संबंध में जानकारी उपलब्ध कराई थी । उसके पश्चात् पीड़ित महिला की माता ने शिकायत दर्ज कराई । पीड़ित महिला को अग्निदाह संबंधी क्षतियां आई थीं और उसे अस्पताल में दाखिल किया गया था । उस समय उसके आस-पास ऐसा कोई व्यक्ति मौजूद नहीं था जो शिकायत दर्ज करा सकता था । अतः, शिकायत दर्ज कराने में हुआ विलंब अभियोजन के पक्षकथन हेतु घातक नहीं है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में हुआ अतिरिक्त विलंब भी अभियोजन पक्षकथन के लिए घातक नहीं है । यदि विलंब के संबंध में विनिर्दिष्ट रूप से स्पष्टीकरण उपलब्ध करा दिया जाता है और जब विलंब असाधारण न हो तो उसे अभियोजन पक्षकथन हेतु घातक नहीं माना जा सकता । वर्तमान मामले में पीड़ित महिला की माता द्वारा

किया गया कथन ईमानदार और सुस्पष्ट प्रतीत होता है और इसलिए वर्तमान मामले में शिकायत/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में हुआ विलंब घातक नहीं है । साक्ष्य के रूप में मृत्युकालिक कथनों को स्वीकार किए जाने संबंधी सिद्धांत इस विधिक सिद्धदांत पर आधारित है कि 'कोई भी व्यक्ति झूठ बोलते हुए अपने ईश्वर के पास नहीं जाना चाहता' । वर्तमान मामले में पीड़ित महिला को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने के पश्चात् उसे उपचार हेतु अस्पताल ले जाया गया था । अन्वेषण अधिकारी ने उसके कथन को न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा लेखबद्ध किए जाने हेतु समुचित व्यवस्था की थी । न्यायिक मजिस्ट्रेट अस्पताल गया था और उसी समय डाक्टर ने पीड़ित महिला की परीक्षा की थी । पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किए जाने के समय डाक्टर ने भी इस तथ्य को प्रमाणित किया था कि रोगी पूर्णत: सचेत थी और उसकी मन:स्थिति बिल्कुल ठीक थी, जिसका तात्पर्य यह है कि वह अपना कथन प्रस्तुत करने हेतु सक्षम थी । डाक्टर ने पीड़ित महिला की स्थिति के संबंध में प्रमाणित किया था और उसके पश्चात् पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया गया । इन परिस्थितियों में यह अनिवार्य है कि मृत्युकालिक कथन को लेखबद्ध करने वाले व्यक्ति का यह समाधान होना चाहिए कि उक्त प्रकृति की घोषणा करने वाला व्यक्ति समुचित मन:स्थिति में है । सामान्यत:, मृत्यु के मुहाने पर खड़ा कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को मिथ्या रूप से फंसाने का प्रयास नहीं करेगा । वर्तमान मामले में, डाक्टर ने पीड़ित महिला की समुचित मनोस्थिति के संबंध में प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया है । उसके पश्चात् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने उक्त प्रमाणपत्र से अपना समाधान किया और उसके पश्चात् पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया गया । स्वैच्छिक रूप से सत्यता और स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत किया गया मृत्युकालिक कथन जो किसी भी संदेह से मुक्त है, दोषसिद्धि हेतु एकमात्र आधार बन सकता है । उच्च न्यायालय का न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से यह समाधान हो जाता है कि पीड़ित महिला की मन:स्थिति बिल्कुल ठीक थी । चिकित्सा परीक्षा करने वाले डाक्टर द्वारा भी इस प्रभाव का प्रमाणपत्र जारी किया गया था । अत:, इस न्यायालय को यह विश्वास है

कि न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालना होगा कि अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को सभी सुसंगत संदेहों से परे साबित किया है । अपीलार्थी वह व्यक्ति है जिसने दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध किया है और अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विश्वास न करने का कोई कारण विद्यमान नहीं है । इस प्रकार अपील में कोई गुण प्रतीत नहीं होता है । चूंकि पीड़ित महिला अपीलार्थी पर विश्वास करती थी, इसलिए उसने अपने माता-पिता के घर का त्याग करके अपीलार्थी से विवाह किया था, किन्तु अपीलार्थी एक अच्छा पति साबित नहीं हुआ और वह पीड़ित महिला को उपयुक्त समर्थन उपलब्ध कराने में असफल रहा है । इसके बजाय उसने पीड़ित महिला का उत्पीड़न किया तथा उसे आत्महत्या करने हेतु उकसाया । अतः, इस न्यायालय को ऐसी कोई परिस्थितियां प्रतीत नहीं होती हैं जिनके अधीन अपीलार्थी पर अधिरोपित दंडादेश को कम किया जाए । अतः, अपील खारिज किए जाने के लिए दायी है । तद्नुसार, दांडिक अपील खारिज की जाती है । विचारण न्यायालय को यह निदेश दिया जाता है कि वह अपीलार्थी द्वारा अपने दंडादेश की शेष अवधि को भोगने हेतु उसकी उपस्थिति को सुनिश्चित करने हेतु उपयुक्त कदम उठाए । (पैरा 13, 14, 15, 16, 17, 18 और 20)

दांडिक (अपीली) अधिकारिता : 2019 की दांडिक अपील सं. 744.

वर्तमान दांडिक अपील विद्वान् महासालिसिटर त्वरित निपटान/दूसरा अपर सेशन न्यायाधीश, इरोड द्वारा तारीख 15 मई, 2018 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है ।

अपीलार्थी की ओर से –

प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् सरकारी अधिवक्ता (दांडिक)

न्यायमूर्ति पी. वैलमुरुगन – वर्तमान दांडिक अपील विद्वान् महासालिसिटर त्वरित निपटान/दूसरा अपर सेशन न्यायाधीश, इरोड द्वारा वर्ष 2017 के एस. सी. सं. 46 में तारीख 15 मई, 2018 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है ।

2. प्रत्यर्थी पुलिस ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 174 के अधीन अपराध करने के लिए अपीलार्थी के विरुद्ध वर्ष 2015 का अपराध मामला सं. 66 को रजिस्टर किया । अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् प्रत्यर्थी पुलिस द्वारा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, इरोड के समक्ष आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया । विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने वर्ष 2017 के पी. आर. सी. सं. 8 की फाइल पर आरोप पत्र को स्वीकार किया । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 207 के अधीन औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने उपरोक्त मामले को प्रधान सेशन न्यायाधीश, इरोड के समक्ष प्रस्तुत किया जिससे वे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के अधीन मामले पर आगे और कार्यवाही कर सकें । चूंकि, अपराध अनन्य रूप से किसी सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है इसलिए विद्वान् प्रधान सेशन न्यायाधीश ने मामले को वर्ष 2017 के एस.सी. सं. 46 से संबंधित फाइल पर स्वीकार किया तथा उक्त मामले को महिला न्यायालय, इरोड को सौंप दिया ।

3. विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने अपेक्षित औपचारिकताओं को पूरा करने के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 306 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किए । आरोप विरचित करने के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध विचारण आरंभ किया गया और विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए 16 अभियोजन साक्षियों को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया और उनकी क्रमश: अभि. सा. 1 से अभि. सा. 16 के रूप में परीक्षा की गई और साथ ही अभियोजन पक्ष ने प्रदर्श पी-1 से प्रदर्श पी-23 के रूप में कुल 23 दस्तावेजों को चिह्नित करते हुए न्यायालय के अभिलेख पर रखा तथा अभियोजन पक्ष द्वारा किसी सारवान् वस्तु को चिह्नित नहीं किया गया । अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने का प्रक्रम समाप्त होने के पश्चात्, अभियोजन साक्षियों द्वारा साक्ष्य स्वरूप अपीलार्थी को अपराध में संलिप्त करने हेतु प्रस्तुत की गई परिस्थितियों को अपीलार्थी के समक्ष रखा गया और अपीलार्थी से दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन प्रश्नोत्तर किए गए । अपीलार्थी ने उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से इनकार किया और उन्हें झूठा बताया तथा उसने स्वयं के दोषी न होने का अभिवाक् प्रस्तुत किया । प्रतिरक्षा पक्ष की ओर से किसी प्रकार का कोई मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया ।

4. विचारण पूरा होने के पश्चात् तथा दोनों पक्षों की ओर से प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुनने और न्यायालय के अभिलेख पर विद्यमान सामग्रियों पर विचार करने के उपरांत विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध करने के लिए सिद्धदोष ठहराया और उसके विरुद्ध 10 वर्ष के कठोर कारावास को भोगने का दंडादेश पारित किया गया और साथ ही उस पर 10,000/- रुपए का जुर्माना भी अधिरोपित किया गया जिसके संदाय में व्यतिक्रम की दशा में अपीलार्थी को 1 वर्ष का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगना होगा । अपीलार्थी/अभियुक्त ने दोषसिद्धि के उक्त निर्णय और दंडादेश से व्यथित होकर उन्हें उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती देते हुए वर्तमान अपील फाइल की है ।

5. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील प्रस्तुत की गई है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्टर करने में विलंब हुआ है और उक्त विलंब असाधारण प्रकृति का है तथा उक्त विलंब के संबंध में कोई उचित स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं कराया गया है । अभिकथित मृत्युकालिक कथन को न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2015 को रात्रि लगभग 10.40 बजे लेखबद्ध किया गया था और अपीलार्थी की दोषसिद्धि एकमात्र रूप से मृतका के अभिकथित मृत्युकालिक कथन के आधार पर की गई है, जो विधि की दृष्टि में बनाए रखे जाने योग्य नहीं है । मृतका के भाई की अभि. सा. 13 के रूप में न्यायालय के समक्ष परीक्षा की गई है और उसने यह अभिसाक्ष्य प्रस्तुत किया है कि तारीख 9 जनवरी, 2015 को दोपहर लगभग 2.00 से 2.30 बजे तक मृतका बोलने में समर्थ थी । अत:, अभिकथित रूप से अभि. सा. 14 विशेष उप निरीक्षक द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2015 को लेखबद्ध किए गए कथन के कारण अभियोजन के पक्षकथन के संबंध में युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न होता है ।

मृतका को अभिकथित रूप से 90 प्रतिशत अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित हुई थीं और उसने अपने कथन पर अपने अंगूठे के निशान को भी अंकित नहीं किया था और उक्त कथन का अभिकथित रूप से मृतका के बाएं पैर के अंगूठे के माध्यम से पृष्ठांकन का विचारण न्यायालय द्वारा अवलंब लिया जाना विधि की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है । जांच पड़ताल करने वाली आर.डी.ओ. की अभि. सा. 5 के रूप में परीक्षा की गई है और उसकी रिपोर्ट के अनुसार मृतका का किसी प्रकार का दहेज संबंधी कोई उत्पीड़न नहीं किया गया था । मृतका के कथन का पूर्ण रूप से परिशीलन करने पर भी दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अनुध्यात अपराध के घटकों की पूर्ति नहीं होती है । अत:, विद्वान् विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय अपास्त किए जाने का दायी है ।

6. अभियोजन पक्ष के अनुसार भी अपीलार्थी ने मृतका को लगी आग को बुझाया और उसके तुरंत पश्चात् उसे अस्पताल ले जाया गया था, अत:, आत्महत्या करने हेतु दुष्प्रेरित किए जाने की घटना का प्रश्न ही नहीं उठता । मृतका की मृत्यु के पश्चात् भी अभिकथित रूप से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को मृतका द्वारा तारीख 7 जनवरी, 2015 को किए गए अभिकथित कथन के आधार पर तारीख 30 जनवरी, 2015 को रजिस्टर किया गया था और उस समय उसमें केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 को उल्लिखित किया गया था । उसके पश्चात्, बिना किसी अतिरिक्त साक्ष्य के अपराध को परिवर्तित करके उसमें दंड संहिता की धारा 306 को जोड़ा गया है । किसी भी स्वतंत्र साक्षी ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है । विचारण न्यायालय द्वारा जारी किया गया दोषसिद्धि का आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा लेखबद्ध किए गए मृतका के उस कथन पर आधारित है, जो विधि के अनुसार उचित नहीं है और इसलिए वह अपास्त किए जाने के लिए दायी है । अत:, यह प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय इस तथ्य को विचार में लेने में असफल रहा है कि अभियोजन पक्ष सभी सुसंगत संदेहों से परे अपने पक्षकथन को स्थापित करने में असफल रहा है । जिस समय मृतका अस्पताल में दाखिल थी,

उस समय लेखबद्ध किए गए उसके एकमात्र कथन को पुष्टिकारक साक्ष्य के रूप में विचार में लिया गया है और इसलिए ऐसे किसी अपुष्ट साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि के निर्णय को आधारित नहीं किया जा सकता । अत:, यह प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय मामले के विधिक और साथ ही तथ्यात्मक पहलुओं को सही परिप्रेक्ष्य में विचार में लेने में असफल रहा है और इसके परिणामस्वरूप उसने त्रुटिपूर्वक अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 306 के अधीन सिद्धदोष ठहराया है और इसलिए विचारण न्यायालय के उक्त निर्णय में हस्तक्षेप किया जाना अपेक्षित है ।

7. विद्वान् सरकारी अधिवक्ता (दांडिक पक्ष) द्वारा यह दलील प्रस्तुत की गई है कि अपीलार्थी मृतका का पति है । मृतका ने अपने माता-पिता की इच्छा और मर्जी के बिना अपीलार्थी से विवाह किया था और विवाह के पश्चात् उन्होंने अपने एक स्वतंत्र कुटुम्ब की स्थापना की थी और अपीलार्थी ने अपने कुटुम्ब को आर्थिक रूप से समर्थन उपलब्ध नहीं कराया था और वह अपने कुटुम्ब की रोजमर्रा की अपेक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ था और इसलिए वह सदैव अपनी पत्नी को अपने माता-पिता से धन लाने के लिए कहता था । वह मदिरापान करता था तथा कोई कार्य/रोजगार भी नहीं करता था और इस प्रकार उसने कभी भी किसी भी रूप में अपने कुटुम्ब का समर्थन नहीं किया । इसके अतिरिक्त, उसने मृतका के सभी जेवरों को गिरवी रख दिया तथा इस प्रकार जेवरों को गिरवी रखने से प्राप्त हुए धन से मदिरा का सेवन किया । वह प्राय: अपनी पत्नी/मृतका से डांट-डपट करता था और उसकी पिटाई भी करता था । उनके जीवन में एक समय ऐसा आया जब वह अक्सर अपनी पत्नी से डांट-डपट करके उसकी पिटाई करता था और साथ ही वह उसके लिए इन शब्दों का प्रयोग करता था – 'जा और मर जा' । मृतका को पूर्व में अपीलार्थी से प्रेम हुआ था और वह उसके प्रेम में उसके साथ अपने घर से अपने माता-पिता को बिना सूचना दिए भाग गई थी और उसने अपीलार्थी से विवाह कर लिया था । किन्तु विवाह के पश्चात् अपीलार्थी ने कोई भी काम नहीं किया और उसने अपने परिवार की रोजमर्रा की जरूरतों के प्रति भी कभी कोई योगदान नहीं दिया । उसने अपनी पत्नी को कभी भी खाना तक उपलब्ध नहीं कराया और

इसके अलावा, उसने अपने पत्नी के सभी जेवरों आदि को गिरवी रख दिया । तारीख 6 जनवरी, 2015 को अपीलार्थी और पीड़िता दोनों अपीलार्थी के माता-पिता घर गए । चूंकि अपीलार्थी ने अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध मृतका से विवाह किया था, इसलिए जब उसने अपने माता-पिता से उनकी संपत्ति में अपना हिस्सा मांगा तो अपीलार्थी के माता-पिता ने उसे उसका हिस्सा देने से इनकार कर दिया । अपीलार्थी और पीड़िता तारीख 7 जनवरी, 2015 को अपने घर लौट आए । चूंकि अपीलार्थी अपने माता-पिता की संपत्ति से हिस्सा प्राप्त नहीं कर सका था, इसलिए उसने क्रोधवश अपनी पत्नी को पीटा और उसे आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया । इस प्रकार उसने मृतका को आत्महत्या करने के लिए उकसाया । पीड़िता को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने के पश्चात् अस्पताल में दाखिल कराया गया था । न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पीड़िता के कथन को लेखबद्ध किया था । उसके पश्चात् अग्निदाह के कारण आई क्षतियों के कारण पीड़िता की मृत्यु हो गई और इस प्रकार अपीलार्थी के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया ।

8. इसके पश्चात्, विद्वान् सरकारी अधिवक्ता (दांडिक पक्ष) ने यह दलील भी प्रस्तुत की है कि अपने विवाह के पश्चात् अपीलार्थी और पीड़ित महिला दोनों पृथक् निवास कर रहे थे और कभी-कभार पीड़ित लड़की अपनी माता से संपर्क करती थी और उस समय उसने अपनी माता को अपीलार्थी के दुर्व्यवहारक के संबंध में सूचित किया था । अतः, पीड़ित महिला द्वारा प्रस्तुत किया गया कथन और साथ ही उसकी माता तथा डाक्टर द्वारा प्रस्तुत किया गया अभिसाक्ष्य यह दर्शित करता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अग्निदाह संबंधी क्षतियों के कारण हुई है और उसने स्वयं पर डीजल छिड़क कर अपने शरीर का अग्निदाह किया था और इस प्रकार उसने आत्महत्या करने का प्रयास किया था । उसे गंभीर अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित हुई थीं और उसे अस्पताल में दाखिल किया गया था । उसके कुछ समय पश्चात् उक्त क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । पीड़ित महिला के मृत शरीर की शव परीक्षा करने वाले डाक्टर ने यह राय अभिव्यक्त की है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अग्निदाह के कारण हुई क्षतियों तथा आघात के कारण हुई है । इस

प्रकार, अभियोजन पक्ष ने सभी सुसंगत संदेहों से परे अपने पक्षकथन को साबित किया है । अपीलार्थी ही वह व्यक्ति है जिसने पीड़ित महिला को आत्महत्या करने हेतु उकसाया तथा दुष्प्रेरित किया । अत:, विचारण न्यायालय ने उचित परिप्रेक्ष्य में मामले की परिस्थितियों, तथ्यों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करते हुए सही रूप से अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराया है और पीड़ित महिला द्वारा उस समय, जब वह अस्पताल में दाखिल थी, दिए गए कथन पर अविश्वास करने का कोई कारण विद्यमान नहीं है । अत:, वर्तमान अपील में कोई गुण नहीं है और इसलिए वर्तमान अपील खारिज किए जाने की दायी है ।

9. दोनों पक्षों को सुना तथा अभिलेखों का परिशीलन किया ।

10. यह न्यायालय एक अपीली न्यायालय है और साथ ही इस न्यायालय का यह दायित्व भी है कि वह मामले के तथ्यों का पता लगाए । न्यायालय को अपने स्वतंत्र निष्कर्ष प्रस्तुत करने के लिए संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना होगा ।

11. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि मृतका ने अपने माता-पिता की इच्छा और मर्जी के बिना अपीलार्थी से विवाह किया था और विवाह के पश्चात् उन्होंने अपने एक स्वतंत्र कुटुम्ब की स्थापना की थी और अपीलार्थी ने अपने कुटुम्ब को आर्थिक रूप से समर्थन उपलब्ध नहीं कराया था और वह अपने कुटुम्ब की रोजमर्रा अपेक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ था और इसलिए वह सदैव अपनी पत्नी को अपने माता-पिता से धन लाने के लिए कहता था । वह मदिरापान करता था तथा कोई कार्य/रोजगार भी नहीं करता था और इस प्रकार उसने कभी भी किसी भी रूप में अपने कुटुम्ब का समर्थन नहीं किया । इसके अतिरिक्त, उसने मृतका के सभी जेवरों को गिरवी रख दिया तथा इस प्रकार जेवरों को गिरवी रखने से प्राप्त हुए धन से मदिरा का सेवन किया । वह प्राय: अपनी पत्नी/मृतका से डांट-डपट करता था और उसकी पिटाई भी करता था । उनके जीवन में एक समय ऐसा आया जब वह अक्सर अपनी पत्नी से डांट-डपट करके उसकी पिटाई करता था और साथ ही वह उसके लिए इन शब्दों का प्रयोग करता था – 'जा और मर जा' । मृतका को

पूर्व में अपीलार्थी से प्रेम हुआ था और वह उसके प्रेम में उसके साथ अपने घर से अपने माता-पिता को बिना सूचना दिए भाग गई थी और उसने अपीलार्थी से विवाह कर लिया था । किन्तु विवाह के पश्चात् अपीलार्थी ने कोई भी काम नहीं किया और उसने अपने परिवार की रोजमर्रा की जरूरतों के प्रति भी कभी कोई योगदान नहीं किया । उसने अपनी पत्नी को कभी भी खाना तक उपलब्ध नहीं कराया और इसके अलावा उसने अपने पत्नी के सभी जेवरों आदि को गिरवी रख दिया । तारीख 6 जनवरी, 2015 को अपीलार्थी और पीड़िता दोनों अपीलार्थी के माता-पिता घर गए । चूंकि अपीलार्थी ने अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध मृतका से विवाह किया था, इसलिए जब उसने अपने माता-पिता से उनकी संपत्ति में अपना हिस्सा मांगा तो अपीलार्थी के माता-पिता ने उसे उसका हिस्सा देने से इनकार कर दिया । अपीलार्थी और पीड़िता तारीख 7 जनवरी, 2015 को अपने घर लौट आए । चूंकि अपीलार्थी अपने माता-पिता की संपत्ति से हिस्सा प्राप्त नहीं कर सका था, इसलिए उसने क्रोधवश अपनी पत्नी को पीटा और उसे आत्महत्या करने के लिए उकसाया । उसके पश्चात्, पीड़ित महिला ने अपने शरीर पर डीजल छिड़क कर स्वयं का अग्निदाह कर लिया । पीड़िता को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने के पश्चात् अस्पताल में दाखिल कराया गया था । उसके पश्चात् अग्निदाह के कारण आई क्षतियों के कारण पीड़िता की मृत्यु हो गई । न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पीड़िता के कथन को लेखबद्ध किया था ।

12. विचारण न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किए । अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी के विरुद्ध विरचित आरोपों को साबित करने के लिए कुल 16 अभियोजन साक्षियों की परीक्षा की, जिनमें से एक साक्षी न्यायिक मजिस्ट्रेट भी है, जिसने पीड़ित महिला द्वारा प्रस्तुत किए गए कथन को उस समय लेखबद्ध किया था जब अस्पताल में पीड़ित महिला को कारित हुई अग्निदाह संबंधी क्षतियों का उपचार चल रहा था और उसने अभि. सा. 4 के रूप में अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया । पीड़ित महिला की उक्त कथन

को लेखबद्ध किए जाने के थोड़े समय पश्चात् मृत्यु हो गई, इसलिए पीड़ित महिला द्वारा लेखबद्ध कराए गए उक्त कथन को मृत्युकालिक कथन के रूप में विचार में लिया जा सकता है । अभि. सा. 4 – न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्रस्तुत अभिसाक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किए जाने के समय मजिस्ट्रेट के अलावा डाक्टर ने भी उस समय पीड़ित महिला की मानसिक स्थिति को प्रमाणित करते हुए यह कथन किया था कि यद्यपि पीड़ित महिला को 90 प्रतिशत तक दाह संबंधी क्षतियां आई हैं फिर भी पीड़ित महिला बोलने-चालने में सक्षम है, जिससे स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि कथन लेखबद्ध किए जाने के समय पीड़ित महिला की मानसिक स्थिति ठीक थी । अतः, न्यायिक मजिस्ट्रेट ने डाक्टर की उपस्थिति में पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया । उक्त कथन को प्रदर्श पी-3 के रूप में चिह्नित किया गया है । प्रदर्श पी-3 के रूप में चिह्नित कथन स्वयं पीड़िता द्वारा न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया गया है और वर्तमान मामले में कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी उपलब्ध नहीं है । अतः, पीड़ित महिला ने स्वयं आत्महत्या करने के कारण को बताया है और उसने यह भी कथन किया है कि उसने स्वयं का अग्निदाह किया था ।

13. अभि. सा. 4 – न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्रस्तुत अभिसाक्ष्य और साथ ही पीड़ित महिला की जांच करने वाले और न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा उसके कथन को लेखबद्ध किए जाने के समय पीड़ित लड़की की मानसिक स्थिति को प्रमाणित करने वाले डाक्टर, जिसकी अभि. सा. 6 के रूप में परीक्षा की गई है, द्वारा प्रस्तुत अभिसाक्ष्य को एक साथ पढ़ने और साथ ही प्रदर्श पी-3 के परिशीलन से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रपीड़न तथा उत्पीड़न के कारण पीड़ित महिला ने आत्महत्या की थी ।

14. प्रदर्श पी-3 के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि घटना की तारीख से आठ माह पूर्व से अपीलार्थी और पीड़ित महिला के बीच में लड़ाई-झगड़ा

चल रहा था । घटना की तारीख से पूर्व अपीलार्थी अपने माता-पिता के घर गया था और वहां से लौटने के पश्चात् वह जोर से पीड़ित महिला पर चिल्लया था और उसने उसके साथ झगड़ा किया था । घटना की तारीख को प्रात: उसने बार-बार पीड़ित महिला को यह कहा था कि 'जा और मर जा' । अत:, पीड़ित महिला ने स्वयं के शरीर पर डीजल छिड़क कर अपना अग्निदाह कर लिया । पीड़ित महिला ने अपने कथन में यह भी लेखबद्ध कराया है कि उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था, जिसके दौरान अपीलार्थी ने उसकी बुरी तरह पिटाई की थी और उसे मर जाने के लिए कहा था । यद्यपि, पीड़ित महिला की माता की अभि. सा. 1 के रूप में परीक्षा की गई है । उसने अपने अभिसाक्ष्य में यह बताया है कि पीड़ित महिला उसकी पुत्रियों में से एक थी और उसकी अन्य पुत्रियां पृथक् रूप से निवास कर रही हैं और तथा वह स्वयं पृथक् रूप से निवास कर रही थी । पीड़ित महिला तारीख 2 जून, 2014 को गायब हो गई थी और उसके पश्चात् उसे काफी समय तक उसके बारे में कोई जानकारी नहीं थी । उसके कुछ समय पश्चात् वर्ष 2015 में पीड़ित महिला ने अपने मकान-मालिक के फोन के माध्यम से उससे संपर्क करने का प्रयास किया था । उस समय उसे यह जानकारी प्राप्त हुई थी कि पीड़ित महिला अपीलार्थी के साथ भागी थी । अपीलार्थी उनकी सहमति के बिना पीड़ित महिला को लेकर भाग गया था और उसने अपना एक पृथक् घर स्थापित कर लिया था । गायब हो जाने के समय पीड़ित लड़की के पास डेढ़ तोले की सोने की चेन और तीन-चौथाई तोले की झुमकी और दो ग्राम की एक अंगूठी मौजूद थी । विवाह के पश्चात् अपीलार्थी ने पीड़ित महिला के सारे जेवर ले लिए थे और उन्हें बेचकर उससे प्राप्त हुए धन से उसने मदिरापान किया तथा वह कभी-भी किसी प्रकार के कार्य या रोजगार हेतु नहीं गया और उसने कभी-भी अपने परिवार को चलाने हेतु रोजमर्रा की जरूरतों या अन्य अपेक्षाओं के संबंध में कोई योगदान नहीं दिया । इसके अतिरिक्त, वह बार-बार पीड़ित महिला से डांट-डपट करता था । तारीख 6 जनवरी, 2015 को अपीलार्थी और पीड़िता दोनों अपीलार्थी के माता-पिता घर गए । चूंकि अपीलार्थी ने अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध मृतका से विवाह किया था,

इसलिए जब उसने अपने माता-पिता से उनकी संपत्ति में अपना हिस्सा मांगा तो अपीलार्थी के माता-पिता ने उसे उसका हिस्सा देने से इनकार कर दिया । अपीलार्थी और पीड़िता तारीख 7 जनवरी, 2015 को अपने घर लौट आए । चूंकि अपीलार्थी अपने माता-पिता की संपत्ति से हिस्सा प्राप्त नहीं कर सका था, इसलिए उसने अपने क्रोध को अपनी पत्नी पर उतारा तथा उसे बुरी तरह पीटा और उसे कहा कि 'जा और मर जा' ।

15. पीड़ित महिला को अपीलार्थी से प्रेम हो गया था और वह अपने माता-पिता की सहमति के बिना अपीलार्थी के साथ भाग गई थी और उसने अपीलार्थी से विवाह कर लिया था, किन्तु अपीलार्थी ने एक कर्तव्यबद्ध पति के रूप में कभी भी अपने कर्तव्य का निर्वहन नहीं किया । अपीलार्थी ने कभी भी पीड़ित महिला की देखभाल नहीं की और इसके विपरीत उसने उसके सारे जेवरों को बेच दिया तथा उससे प्राप्त हुए धन से मदिरापान किया तथा इसके अतिरिक्त, पीड़ित महिला से प्राय: झगड़ा करता था और तथा उसकी पिटाई करता था । इस प्रकार उसने पीड़ित महिला को आत्महत्या करने के लिए उकसाया । अभि. सा. 1 – पीड़ित महिला की माता और शव परीक्षा करने वाले डाक्टर द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अप्राकृतिक है और उसकी मृत्यु आघात और आंतरिक रक्तस्राव के कारण हुई थी ।

16. अत:, अभिलेख पर उपलब्ध साक्षियों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य तथा न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा लेखबद्ध किए गए पीड़ित महिला के कथन को संयुक्त रूप से पठन करने पर तथा दूसरी ओर अभि. सा. 4/न्यायिक मजिस्ट्रेट, जिसने अभि. सा. 6 – डाक्टर द्वारा पीड़ित महिला की चिकित्सा परीक्षा के उपरांत दिए गए प्रमाणपत्र, जिसमें यह प्रमाणित किया गया था कि पीड़ित महिला पूरी तरह होश में थी और उसकी मानसिक स्थिति बिल्कुल ठीक थी, के आधार पर पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया था, के साक्ष्य को विचार में लेने पर यह दर्शित होता है कि प्रदर्श पी-3 के रूप में चिह्नित कथन को पीड़ित महिला द्वारा समुचित मानसिक स्थिति में लेखबद्ध कराया गया है । अत:, पीड़ित महिला के कथन और चिकित्सीय साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि पीड़ित महिला की मृत्यु अप्राकतिक थी और उसके द्वारा आत्महत्या करने से तुरंत पूर्व अपीलार्थी ने उसकी बुरी तरह पिटाई

की थी और साथ ही उससे यह कहा था कि 'जा और मर जा' । अतः, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी द्वारा किया गया यह कथन कि 'जा और मर जा' स्पष्ट रूप से यह दर्शित करता है कि अपीलार्थी ने दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध किया है और इसलिए विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को सही रूप से सिद्धदोष ठहराया है ।

17. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में फाइल किए जाने में हुए विलंब के संबंध में प्रतिवाद किया है और जहां तक इस प्रतिवाद का संबंध है, विचारण न्यायालय द्वारा यह संप्रेक्षण किया गया है कि अपीलार्थी और पीड़ित महिला, अपने विवाह के पश्चात् अकेले और पृथक् रूप से निवास कर रहे थे तथा पीड़ित महिला के माता-पिता को इस घटना की जानकारी नहीं थी और इसके अतिरिक्त, पीड़ित महिला के माता-पिता को उसके निवास-स्थान के संबंध में भी कोई जानकारी नहीं थी । घटना के पश्चात् पीड़ित महिला के पड़ोसियों ने पीड़ित महिला को माता को इस घटना के संबंध में जानकारी उपलब्ध कराई थी । उसके पश्चात् पीड़ित महिला की माता ने शिकायत दर्ज कराई । पीड़ित महिला को अग्निदाह संबंधी क्षतियां आई थीं और उसे अस्पताल में दाखिल किया गया था । उस समय उसके आस-पास ऐसा कोई व्यक्ति मौजूद नहीं था जो शिकायत दर्ज करा सकता था । अतः, शिकायत दर्ज कराने में हुआ विलंब अभियोजन के पक्षकथन हेतु घातक नहीं है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में हुआ अतिरिक्त विलंब भी अभियोजन पक्षकथन के लिए घातक नहीं है । यदि विलंब के संबंध में विनिर्दिष्ट रूप से स्पष्टीकरण उपलब्ध करा दिया जाता है और जब विलंब असाधारण न हो तो उसे अभियोजन पक्षकथन हेतु घातक नहीं माना जा सकता । वर्तमान मामले में पीड़ित महिला की माता द्वारा किया गया कथन ईमानदार और सुस्पष्ट प्रतीत होता है और इसलिए वर्तमान मामले में शिकायत/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में हुआ विलंब घातक नहीं है । साक्ष्य के रूप में मृत्युकालिक कथनों को स्वीकार किए जाने संबंधी सिद्धांत इस विधिक सिद्धदांत पर आधारित है कि 'कोई भी व्यक्ति झूठ बोलते हुए अपने ईश्वर के पास नहीं जाना चाहता' ।

18. वर्तमान मामले में पीड़ित महिला को अग्निदाह संबंधी क्षतियां कारित होने के पश्चात् उसे उपचार हेतु अस्पताल ले जाया गया था ।

अन्वेषण अधिकारी ने उसके कथन को न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा लेखबद्ध किए जाने हेतु समुचित व्यवस्था की थी । न्यायिक मजिस्ट्रेट अस्पताल गया था और उसी समय डाक्टर ने पीड़ित महिला की परीक्षा की थी । पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किए जाने के समय डाक्टर ने भी इस तथ्य को प्रमाणित किया था कि रोगी पूर्णत: सचेत थी और उसकी मन:स्थिति बिल्कुल ठीक थी, जिसका तात्पर्य यह है कि वह अपना कथन प्रस्तुत करने हेतु सक्षम थी । डाक्टर ने पीड़ित महिला की स्थिति के संबंध में प्रमाणित किया था और उसके पश्चात् पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया गया । इन परिस्थितियों में यह अनिवार्य है कि मृत्युकालिक कथन को लेखबद्ध करने वाले व्यक्ति का यह समाधान होना चाहिए कि उक्त प्रकृति की घोषणा करने वाला व्यक्ति समुचित मन:स्थिति में है । सामान्यत:, मृत्यु के मुहाने पर खड़ा कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को मिथ्या रूप से फंसाने का प्रयास नहीं करेगा । वर्तमान मामले में, डाक्टर ने पीड़ित महिला की समुचित मनोस्थिति के संबंध में प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया है । उसके पश्चात् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने उक्त प्रमाणपत्र से अपना समाधान किया और उसके पश्चात् पीड़ित महिला के कथन को लेखबद्ध किया गया । स्वैच्छिक रूप से सत्यता और स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत किया गया मृत्युकालिक कथन जो किसी भी संदेह से मुक्त है, दोषसिद्धि हेतु एकमात्र आधार बन सकता है ।

19. यद्यपि, मृत्युकालिक कथन का साक्ष्य के रूप में अत्यधिक महत्व है फिर भी यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अभियुक्त के पास ऐसे किसी कथन के संबंध में प्रतिपरीक्षा करने की कोई शक्ति नहीं होती है । इस प्रकार की शक्ति सत्य को सामने लाने के लिए अनिवार्य है जैसे कि शपथ लेने की बाध्यता । इस कारणवश न्यायालय को इस बात पर भी बल देना चाहिए कि मृत्युकालिक कथन ऐसी प्रकृति का होना चाहिए जिससे न्यायालय में उसके सही होने के प्रति पूर्ण विश्वास का संचार हो सके । न्यायालय को इस संबंध में सुरक्षोपाय अपनाने होंगे कि मृतका का कथन उसे किसी प्रकार से सिखाने-पढ़ाने के परिणामस्वरूप सामने नहीं आया है या उक्त कथन उसकी कोरी-कल्पना नहीं है । न्यायालय को स्वयं का यह भी समाधान करना चाहिए कि मृतक/मृतका हमलावर व्यक्ति की शनाख्त करने और उसे देखने का स्पष्ट अवसर

प्राप्त करने के पश्चात् समुचित मन:स्थिति में है । यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन सत्य और स्वैच्छिक है तो नि:संदेह रूप से वह बिना किसी पुष्टिकरण के उसके आधार पर अभियुक्त को सिद्धदोष ठहरा सकता है ।

20. इस न्यायालय का न्यायिक मजिस्ट्रेट/अभि. सा. 4 द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से यह समाधान हो जाता है कि पीड़ित महिला की मन:स्थिति बिल्कुल ठीक थी । चिकित्सा परीक्षा करने वाले डाक्टर द्वारा भी इस प्रभाव का प्रमाणपत्र जारी किया गया था । अत:, इस न्यायालय को यह विश्वास है कि न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालना होगा कि अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को सभी सुसंगत संदेहों से परे साबित किया है । अपीलार्थी वह व्यक्ति है जिसने दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध किया है और अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विश्वास न करने का कोई कारण विद्यमान नहीं है । इस प्रकार अपील में कोई गुण प्रतीत नहीं होता है । चूंकि पीड़ित महिला अपीलार्थी पर विश्वास करती थी, इसलिए उसने अपने माता-पिता के घर का त्याग करके अपीलार्थी से विवाह किया था, किन्तु अपीलार्थी एक अच्छा पति साबित नहीं हुआ और वह पीड़ित महिला को उपयुक्त समर्थन उपलब्ध कराने में असफल रहा है । इसके बजाय उसने पीड़ित महिला का उत्पीड़न किया तथा उसे आत्महत्या करने हेतु उकसाया । अत:, इस न्यायालय को ऐसी कोई परिस्थितियां प्रतीत नहीं होती हैं जिनके अधीन अपीलार्थी पर अधिरोपित दंडादेश को कम किया जाए । अत:, अपील खारिज किए जाने के लिए दायी है । तद्नुसार, दांडिक अपील खारिज की जाती है । विचारण न्यायालय को यह निदेश दिया जाता है कि वह अपीलार्थी द्वारा अपने दंडादेश की शेष अवधि को भोगने हेतु उसकी उपस्थिति को सुनिश्चित करने हेतु उपयुक्त कदम उठाए ।

अपील खारिज की गई ।

पु.

महेशपाल श्री मनोहर लाल

बनाम

राजस्थान राज्य और अन्य

[2015 की एकल न्यायपीठ दांडिक प्रकीर्ण (याचिका) सं. 1927]

तारीख 5 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 228 – याची के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा कतिपय अपराधों के लिए आरोप विरचित किया जाना – याची द्वारा उसके विरुद्ध आरोप विरचित करने वाले आदेश को पुनरीक्षण याचिका फाइल करके चुनौती दिया जाना – अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा उक्त पुनरीक्षण याचिका को खारिज किया जाना – याची द्वारा उपरोक्त दोनों आदेशों से व्यथित होकर उन्हें उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दिया जाना – शिकायतकर्ता द्वारा याची के विरुद्ध मुख्य रूप से यह आरोप लगाया जाना कि याची उसका देवर है और उसका संपूर्ण स्त्रीधन उसकी सास के पास था, जिसका अब निधन हो चुका है किन्तु अपने निधन से पूर्व उसकी सास ने शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की सभी वस्तुओं को उसके देवर अर्थात् याची को सौंप दिया था तथा शिकायतकर्ता द्वारा अपना स्त्रीधन वापस मांगने पर याची ने उससे धन की मांग की और उसका उत्पीड़न तथा उसका अपमान किया – चूंकि शिकायतकर्ता की सास का निधन हो चुका है और न्यायालय के अभिलेख पर ऐसी कोई भी सामग्री विद्यमान नहीं है जिससे यह तथ्य उपदर्शित होता हो कि शिकायतकर्ता की सास ने उसके स्त्रीधन की वस्तुओं को याची को सौंपा था – इसके अतिरिक्त, चूंकि शिकायतकर्ता अपने पति और सास के साथ श्री गंगानगर में निवास कर रही थी जबकि उसका देवर पदमपुर में निवास कर रहा था इसलिए इस बात की संभावना अत्यंत क्षीण प्रतीत होती है कि याची ने शिकायतकर्ता का उत्पीड़न और अपमान किया होगा, अतः, याची के विरुद्ध अभियोजन चलाया जाना अनुचित प्रतीत होता है और इसलिए उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों को अभिखंडित किया गया ।

वर्तमान याचिका का निपटारा करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और अन्वेषण अधिकारी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन लेखबद्ध किए गए प्रत्यर्थी सं. 2, अर्थात् शिकायतकर्ता के कथन के अनुसार, यह तथ्य सामने आता है कि शिकायतकर्ता का विवाह वर्ष 1991 में पदमपुर के निवासी श्री चरणजीत शर्मा के साथ अनुष्ठापित हुआ था । उक्त विवाह से शिकायतकर्ता के दो बालक भी हैं । शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि उसने विवाह के लगभग आठ माह पश्चात् सेतिया कालोनी में अपने पति के साथ निवास करना आरंभ किया था । उस समय उसकी सास श्रीमती शांति देवी उनके साथ ही निवास कर रही थी । उस समय शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की सभी वस्तुएं उसकी सास ने इस बहाने से अपने कब्जे में ले ली थी कि वह उन्हें सुरक्षित तथा संरक्षित रखेगी । शिकायतकर्ता द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि उसके पश्चात् उसका देवर महेशपाल (वर्तमान याचिका का याची) उसकी सास को पदमपुर ले गया और उसने उसकी सास के साथ षड्यंत्र करके शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की सभी वस्तुओं को हड़प लिया । शिकायतकर्ता ने अपनी सास और वर्तमान याचिका के याची से अपने गहनों को वापस मांगा जिस पर उन्होंने इस बात पर बल दिया यदि वह अपने गहने वापस प्राप्त करना चाहती है तो उसे 1,00,000/- रुपए की रकम उन्हें देनी चाहिए । इसके पश्चात्, शिकायतकर्ता ने यह कथन किया है कि जब उसने 1,00,000/- रुपए की रकम की व्यवस्था करने में अपनी असमर्थता को अभिव्यक्त किया तो उसकी सास और उसके देवर महेशपाल, जो वर्तमान याचिका का याची है, ने उसकी बुरी तरह पिटाई की । दोनों अभियुक्तों द्वारा शिकायतकर्ता का उत्पीड़न और अपमान किया गया और उन्होंने उसके स्त्रीधन की वस्तुओं को लौटाने से साफ इनकार कर दिया और इस प्रकार उन्होंने इस रीति में अभिकथित अपराध को कारित किया । याची के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध करने के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय ने अपने तारीख 13 सितम्बर, 2012 के आदेश द्वारा उक्त अपराधों के संबंध में याची के विरुद्ध आरोप विरचित किए तथा याची द्वारा इस प्रकार आरोप विरचित किए जाने के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई पुनरीक्षण याचिका को तारीख 12 जून, 2015 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिया गया ।

इसलिए, याची द्वारा वर्तमान प्रकीर्ण याचिका फाइल की गई है । उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सभी साक्ष्यों और सामग्रियों पर विचार करने तथा दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने के पश्चात् याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले का याची शिकायतकर्ता का देवर है । शिकायतकर्ता द्वारा सबसे बड़ा आरोप उसकी सास शांति देवी, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है, के विरुद्ध लगाया गया था कि उसने अपने स्त्रीधन की सभी वस्तुएं अपनी सास को सौंपी थी । अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है जिससे न्यायालय का यह समाधान हो सके कि शिकायतकर्ता की सास ने शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की वस्तुओं को वर्तमान मामले के याची को सौंपा था । चूंकि शिकायतकर्ता श्री गंगानगर में अपने पति और सास के साथ निवास कर रही थी और जैसा कि वर्तमान मामले के याची द्वारा स्वीकार किया गया है कि वह पदमपुर में निवास कर रहा था, इसलिए ऐसा कोई कारण प्रतीत नहीं होता है जिससे यह साबित होता हो कि उनके बीच परस्पर बातचीत और वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था और वह भी ऐसे समय जब दोनों पक्षकारों के बीच परस्पर संबंध तनावपूर्ण थे । यद्यपि, शिकायतकर्ता ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में इस तथ्य को दर्शित किया है कि उसका पति मानसिक रूप से कमजोर है इसलिए याची ने इस परिस्थिति का फायदा उठाया । किन्तु अन्वेषण अधिकारी ने उसके द्वारा किए गए अन्वेषण के दौरान इस कथन के समर्थन में किसी प्रकार का कोई साक्ष्य एकत्रित नहीं किया है । इसलिए, यह विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता है कि याची कभी भी शिकायतकर्ता का उत्पीड़न या उसका अपमान करने या उसके पति की उपस्थिति में उससे धन की मांग करने की स्थिति में था । इस प्रकार शिकायतकर्ता द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में याची के विरुद्ध लगाए गए आरोप मिथ्या हैं और उन्हें बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत किया गया है । न्यायालय के अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के सकल मूल्यांकन के उपरांत उच्च न्यायालय की यह सुदृढ़ राय है कि वर्तमान मामले में दंड संहिता की धारा 498क तथा धारा 406 के अधीन अपराधों के लिए वर्तमान मामले के याची के विरुद्ध अभियोजन चलाया जाना नितांत रूप से अनुचित है क्योंकि इन अपराधों का गठन करने के लिए अपेक्षित आवश्यक घटकों को अभियोजन पक्ष द्वारा सही रूप से न्यायालय के

अभिलेख पर रखे गए संपूर्ण साक्ष्य के माध्यम से प्रस्तुत नहीं किया गया है । इस प्रकार, वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका को मंजूर किया जाना अपेक्षित है । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर द्वारा तारीख 13 सितम्बर, 2012 तथा अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, श्री गंगानगर द्वारा तारीख 12 जून, 2015 को पारित आदेशों और उनके अधीन याची के विरुद्ध किए जाने हेतु ईप्सित सभी कार्यवाहियों को अभिखंडित किया जाता है । (पैरा 5, 6 और 7)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की एकल न्यायपीठ दांडिक प्रकीर्ण (याचिका) सं. 1927.

वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका को याची श्री महेशपाल द्वारा फाइल किया गया है, जिसके माध्यम से याची ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर द्वारा अपराध मामला सं. 507/2011 के संबंध में तारीख 13 सितम्बर, 2012 को पारित आदेश, जिसके माध्यम से याची के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे, को चुनौती दी थी और साथ ही उक्त याचिका के माध्यम से अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, श्री गंगानगर द्वारा पारित तारीख 12 जून, 2015 के आदेश को भी चुनौती दी गई है, जिसके माध्यम से याची की, उसके विरुद्ध आरोप विरचित करने वाले आदेश को चुनौती देने वाली पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया गया था ।

याची की ओर से श्री ए. एस. राठौड, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री फरजंद अली, सरकारी अधिवक्ता-सह-सहायक महाधिवक्ता, लोक अभियोजक ए. आर. चौधरी और निशांत मोतसारा के साथ

न्यायमूर्ति संदीप मेहता – वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका को याची श्री महेशपाल द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 482 के अधीन फाइल किया गया है, जिसके माध्यम से याची ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर द्वारा अपराध मामला सं. 507/2011 के संबंध में तारीख 13 सितम्बर, 2012 को पारित आदेश, जिसके माध्यम से याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

(जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 498क और धारा 406 के अधीन आरोप विरचित किए गए थे और साथ ही उक्त याचिका के माध्यम से अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, श्री गंगानगर द्वारा पारित तारीख 12 जून, 2015 के उस आदेश को भी चुनौती दी गई है, जिसके माध्यम से याची की, उसके विरुद्ध आरोप विरचित करने वाले आदेश को चुनौती देने वाली पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया गया था ।

2. मैंने याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल तथा शिकायतकर्ता की ओर से उसका प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई दलीलों को सुना है और मैंने आक्षेपित आदेशों तथा साथ अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों का परिशीलन भी किया है ।

3. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और अन्वेषण अधिकारी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन लेखबद्ध किए गए प्रत्यर्थी सं. 2, अर्थात् शिकायतकर्ता के कथन के अनुसार, यह तथ्य सामने आता है कि शिकायतकर्ता का विवाह वर्ष 1991 में पदमपुर के निवासी श्री चरणजीत शर्मा के साथ अनुष्ठापित हुआ था । उक्त विवाह से शिकायतकर्ता के दो बालक भी हैं । शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि उसने विवाह के लगभग आठ माह पश्चात् सेतिया कालोनी में अपने पति के साथ निवास करना आरंभ किया था । उस समय उसकी सास श्रीमती शांति देवी उनके साथ ही निवास कर रही थी । उस समय शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की सभी वस्तुएं उसकी सास ने इस बहाने से अपने कब्जे में ले ली थी कि वह उन्हें सुरक्षित तथा संरक्षित रखेगी । शिकायतकर्ता द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि उसके पश्चात् उसका देवर महेशपाल (वर्तमान याचिका का याची) उसकी सास को पदमपुर ले गया और उसने उसकी सास के साथ षड्यंत्र करके शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की सभी वस्तुओं को हड़प लिया । शिकायतकर्ता ने अपनी सास और वर्तमान याचिका के याची से अपने गहनों को वापस मांगा जिस पर उन्होंने इस बात पर बल दिया यदि वह अपने गहने वापस प्राप्त करना चाहती है तो उसे 1,00,000/- रुपए की रकम उन्हें देनी चाहिए । इसके पश्चात्, शिकायतकर्ता ने यह कथन किया है कि जब उसने 1,00,000/-

रुपए की रकम की व्यवस्था करने में अपनी असमर्थता को अभिव्यक्त किया तो उसकी सास और उसके देवर महेशपाल, जो वर्तमान याचिका का याची है, ने उसकी बुरी तरह पिटाई की । दोनों अभियुक्तों द्वारा शिकायतकर्ता का उत्पीड़न और अपमान किया गया और उन्होंने उसके स्त्रीधन के वस्तुएं को लौटाने से साफ इनकार कर दिया और इस प्रकार उन्होंने इस रीति में अभिकथित अपराध को कारित किया ।

4. याची के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध करने के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय ने अपने तारीख 13 सितम्बर, 2012 के आदेश द्वारा उक्त अपराधों के संबंध में याची के विरुद्ध आरोप विरचित किए तथा याची द्वारा इस प्रकार आरोप विरचित किए जाने के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई पुनरीक्षण याचिका को तारीख 12 जून, 2015 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिया गया । इसलिए, याची द्वारा वर्तमान प्रकीर्ण याचिका फाइल की गई है ।

5. दोनों पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेलों द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुनने और उनका मूल्यांकन करने के पश्चात्, यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान मामले का याची शिकायतकर्ता का देवर है । शिकायतकर्ता द्वारा सबसे बड़ा आरोप उसकी सास शांति देवी, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है, के विरुद्ध लगाया गया था कि उसने अपने स्त्रीधन की सभी वस्तुएं अपनी सास को सौंपी थी । अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है जिससे न्यायालय का यह समाधान हो सके कि शिकायतकर्ता की सास ने शिकायतकर्ता के स्त्रीधन की वस्तुओं को वर्तमान मामले के याची को सौंपा था । चूंकि शिकायतकर्ता श्री गंगानगर में अपने पति और सास के साथ निवास कर रही थी और जैसा कि वर्तमान मामले के याची द्वारा स्वीकार किया गया है कि वह पदमपुर में निवास कर रहा था, इसलिए ऐसा कोई कारण प्रतीत नहीं होता है जिससे यह साबित होता हो कि उनके बीच परस्पर बात-चीत और वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था और वह भी ऐसे समय में जब दोनों पक्षकारों के बीच परस्पर संबंध तनावपूर्ण थे । यद्यपि, शिकायतकर्ता ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में इस तथ्य को दर्शित किया है कि उसका पति मानसिक रूप से कमजोर है इसलिए याची ने इस

परिस्थिति का फायदा उठाया । किन्तु अन्वेषण अधिकारी ने उसके द्वारा किए गए अन्वेषण के दौरान इस कथन के समर्थन में किसी प्रकार का कोई साक्ष्य एकत्रित नहीं किया है । इसलिए, यह विश्वसनीय प्रतीत नहीं होता है कि याची कभी भी शिकायतकर्ता का उत्पीड़न या उसका अपमान करने या उसके पति की उपस्थिति में उससे धन की मांग करने की स्थिति में था । इस प्रकार शिकायतकर्ता द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में याची के विरुद्ध लगाए गए आरोप मिथ्या हैं और उन्हें बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत किया गया है । इसके परिणामस्वरूप, न्यायालय के अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री विद्यमान नहीं है जिससे न्यायालय का यह समाधान हो सके कि आरोप पत्र में यथा अधिकथित सर्वाधिक बड़े आरोपों के संबंध में याची के विरुद्ध अभिकथित अपराध के घटक साबित होते हैं, जिससे याची के विरुद्ध आरोपों को विरचित किए जाने को न्यायोचित ठहराया जा सके ।

6. न्यायालय के अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के सकल मूल्यांकन के उपरांत मेरी यह सुदृढ़ राय है कि वर्तमान मामले में दंड संहिता की धारा 498क तथा धारा 406 के अधीन अपराधों के लिए वर्तमान मामले के याची के विरुद्ध अभियोजन चलाया जाना नितांत रूप से अनुचित है क्योंकि इन अपराधों का गठन करने के लिए अपेक्षित आवश्यक घटकों को अभियोजन पक्ष द्वारा सही रूप से न्यायालय के अभिलेख पर रखे गए संपूर्ण साक्ष्य के माध्यम से प्रस्तुत नहीं किया गया है ।

7. इस प्रकार, वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका को मंजूर किया जाना अपेक्षित है । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर द्वारा तारीख 13 सितम्बर, 2012 तथा अपर सेशन न्यायाधीश सं. 1, श्री गंगानगर द्वारा तारीख 12 जून, 2015 को पारित आदेशों और उनके अधीन याची के विरुद्ध किए जाने हेतु ईप्सित सभी कार्यवाहियों को अभिखंडित किया जाता है ।

याचिका मंजूर की गई ।

पु.

सचिन शुक्ला

बनाम

राजस्थान राज्य और अन्य

[2019 की एकल खंडपीठ दांडिक प्रकीर्ण (याचिका) सं. 2092]

तारीख 5 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति संदीप मेहता

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 482 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 376] – शिकायतकर्ता द्वारा याची/अभियुक्त के विरुद्ध बलात्संग का आरोप लगाते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – अभियुक्त के विरुद्ध यह आरोप लगाया जाना कि उसने विवाह का मिथ्या वचन देकर शिकायतकर्ता के साथ बलात्संग का अपराध कारित किया – अभियुक्त द्वारा उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किए जाने की ईप्सा करते हुए वर्तमान याचिका फाइल किया जाना – इस संबंध में कोई विवाद नहीं है कि अभियुक्त और शिकायतकर्ता पड़ोसी थे और उनके बीच लगभग 12 वर्षों से प्रेम संबंध चल रहे थे और उनके बीच शारीरिक संबंध भी स्थापित हुए थे – यद्यपि, शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि उसने विवाह के मिथ्या वचन के भ्रम में शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए अपनी सम्मति प्रदान की थी, किन्तु इतने लंबे चले प्रेम संबंधों के संबंध में उक्त आरोप उचित तथा युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है – यदि शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए सभी आरोपों को सत्य भी मान लिया जाए तो भी बलात्संग के अपराध के आवश्यक घटक साबित नहीं होते हैं और इसलिए उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में अन्वेषण को जारी रखा जाना विधि की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तत्समान है – याचिका को मंजूर करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिखंडित की गई ।

वर्तमान याचिका का निपटारा करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि वर्तमान मामला उस समय उद्भूत हुआ जब अभियोक्त्री द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 376 के अधीन पुलिस

थाना सविना में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 135/2019 दर्ज कराई गई । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के माध्यम से अभियोक्त्री ने यह अभिकथन किया कि वह और अभियुक्त पड़ोसी थे और उनके बीच लगभग 12 वर्ष से प्रेम संबंध विद्यमान थे । इसके पश्चात्, उसने अभियुक्त पर यह आरोप लगाया उसने उसे विवाह करने का मिथ्या वचन दिया जिसके भ्रम में उसने उनके बीच यौन संबंध स्थापित किए जाने के लिए अपनी सम्मति प्रदान की । चूंकि उक्त सम्मति तथ्य के भ्रम के अधीन प्राप्त की गई थी इसलिए अभियुक्त उसके साथ बलात्संग करने के अपराध के लिए दायी है । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर अभियुक्त के विरुद्ध अन्वेषण कार्यवाहियां आरंभ की गईं । अभियुक्त/याची ने इस न्यायालय में एक दांडिक प्रकीर्ण याचिका फाइल करके उच्च न्यायालय से यह अनुरोध किया कि उसके उपरोक्तानुसार दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को इस आधार पर अभिखंडित किया जाए कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में लगाए गए आरोप, यदि उन्हें सत्य भी मान लिया जाए तो भी वे अभिकथित अपराध का गठन नहीं करते हैं । उच्च न्यायालय ने विभिन्न मामला विधियों के माध्यम से माननीय उच्चतम न्यायालय तथा इस उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए विभिन्न निर्णयों का परिशीलन तथा उन पर विचार करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध अन्य सामग्री पर विचार करने के पश्चात् याचिका को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले के तथ्य अत्यधिक स्पष्ट हैं क्योंकि याची और शिकायतकर्ता के बीच स्थापित हुए संबंध उनके परस्पर प्रेम संबंधों पर आधारित थे और उनका प्रेम संबंध लगभग 12 वर्ष तक निर्बाद्ध रूप से चलता रहा । इस प्रकार, उच्च न्यायालय की यह सुदृढ़ राय है कि आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में अन्वेषण को जारी रखने की अनुज्ञा दिए जाने से विधि की प्रक्रिया का घोर दुरुपयोग होगा । तद्नुसार, वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका स्वीकार किए जाने योग्य है और इसलिए उसे स्वीकार किया जाता है । आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 135/2019, जिसे सविना पुलिस थाने में रजिस्टर किया गया था और साथ ही उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के कारण याची के विरुद्ध किए जाने के लिए ईप्सित सभी कार्यवाहियों को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । (पैरा 9 तथा 10)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2020] (2020) 10 एस. सी. सी. 108 =
ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 4535 :
महेश्वर टिग्गा बनाम **झारखंड राज्य** ; 4

[2019] ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 327 :
धुववरम मुरलीधर सोनार बनाम
महाराष्ट्र राज्य और अन्य । 4, 8

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2019 की एकल खंडपीठ दांडिक प्रकीर्ण (याचिका) सं. 2092.

वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका, याची सचिन शुक्ला द्वारा पुलिस थाना सविना, जिला उदयपुर में रजिस्ट्रीकृत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 135/2019 को अभिखंडित किए जाने का अनुरोध करते हुए फाइल की गई है ।

याची की ओर से श्री दीपक मनेरिया, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री फरजंद अली, सरकारी अधिवक्ता-सह-अपर महाधिवक्ता, ए. आर. चौधरी, लोक अभियोजक और जितेन्द्र ओझा के साथ

न्यायमूर्ति संदीप मेहता – वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 482 के अधीन याची सचिन शुक्ला द्वारा फाइल की गई है, जिसके माध्यम से उसने पुलिस थाना सविना, जिला उदयपुर में भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 376 के अधीन रजिस्ट्रीकृत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 135/2019 को अभिखंडित करने की ईप्सा की है ।

2. प्रत्यर्थी सं. 2, अर्थात् शिकायतकर्ता ने निम्नलिखित आरोप लगाते हुए, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई थी :–

(देसी भाषा में लिखी गई सामग्री का लोप किया गया)

3. याची ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करने का आग्रह करते हुए उपरोक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट करने की ईप्सा की है और यह दावा किया है कि आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में लगाए गए आरोप, यदि उन्हें सत्य भी मान लिया जाए तो भी वे अभिकथित अपराध का गठन नहीं करते हैं ।

4. याची का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल श्री दीपक मनेरिया ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **धुववरम मुरलीधर सोनार** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[1] तथा **महेश्वर टिग्गा** बनाम **झारखंड राज्य**[2] वाले मामलों में दिए गए निर्णय का अवलंब लेते हुए जोर-शोर से यह दलील प्रस्तुत की है कि शिकायतकर्ता और याची के बीच संबंध, जो पिछले 12 वर्ष से लगातार चल रहे हैं, शुद्ध रूप से परस्पर सम्मतिपूर्ण संबंध हैं और इनमें किसी प्रकार के कपट का कोई अवयव अंतर्वलित नहीं है । तथापि, एक पश्चात्वर्ती समय पर दोनों के संबंधों में तनाव उत्पन्न हुआ और उसके पश्चात् याची, शिकायतकर्ता से पृथक् हो गया । आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट केवल याची को प्रताड़ित तथा उसका अपमान करने के इरादे से फाइल की गई है और उसमें पूर्णतया मिथ्या और मनगढ़ंत आरोप लगाए गए हैं इसलिए उन्होंने न्यायालय से यह आग्रह किया कि आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किया जाना चाहिए ।

5. इसके विपरीत, विद्वान् लोक अभियोजक और श्री जितेन्द्र ओझा, जो शिकायतकर्ता का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, ने याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत की गई दलीलों का जोर-शोर से विरोध किया है । दोनों विद्वान् काउंसेलों ने यह प्रतिवाद किया है कि याची ने लगभग 12 वर्ष तक शिकायतकर्ता को विवाह का पूर्णतया कपटपूर्ण वचन देकर उसका यौन उत्पीड़न किया तथा उसके पश्चात् शिकायतकर्ता में उसकी दिलचस्पी समाप्त हो गई तथा उसने एक अन्य महिला से विवाह अनुष्ठापित किया । इसलिए, दोनों विद्वान् काउंसेलों ने मिलकर इस न्यायालय से यह आग्रह किया कि न्यायालय को इस आरंभिक प्रक्रम पर

---

[1] ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 327.

[2] (2020) 10 एस. सी. सी. 108 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 4535.

आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में की जा रही कार्यवाही में हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए ।

6. मैंने दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा प्रस्तुत की गई दलीलों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है और साथ ही अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री का परिशीलन किया है ।

7. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अंतर्विष्ट अंतर्वस्तु के परिशीलन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि शिकायतकर्ता 27 वर्ष की एक परिपक्व महिला है । शिकायतकर्ता और याची निकट पड़ोस में निवास करते थे और इस प्रकार उनके बीच परस्पर अंतरंग संबंध विकसित हो गए । वे शुद्ध रूप से परस्पर सम्मति वाले संबंधों में लगभग 10 वर्षों तक एक साथ रहे । इस अवधि के दौरान दोनों ने निर्बाध रूप से परस्पर यौन संबंधी भी स्थापित किए । शिकायतकर्ता ने उसके द्वारा रजिस्टर की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह आरोप लगाया है कि याची ने उससे विवाह करने का वचन दिया था और याची के इस झूठे आश्वासन के झांसे में आकर उसने शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए सम्मति दी थी । तथापि, रिपोर्ट में इस बात का कहीं कोई उल्लेख नहीं किया गया है कि इस प्रभाव का वचन किस समय दिया गया था । शिकायतकर्ता ने यह दावा किया है कि उसे इस तथ्य का आभास उस समय हुआ कि याची ने कपटपूर्वक रूप से विवाह करने का वचन दिया था, जब उसे यह ज्ञात हुआ कि याची तारीख 19 अप्रैल, 2019 को किसी अन्य महिला से विवाह कर रहा था । पूर्व दृष्ट्या, आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का परिशीलन करने से इस न्यायालय ने यह ठोस राय तैयार की है कि शिकायतकर्ता (जो एक 27 वर्षीय परिपक्व महिला है) तथा याची के बीच एक दशक लंबा संबंध शुद्ध रूप से परस्पर और सम्मतिपूर्ण प्रकृति का था । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि दोनों लगभग 12 वर्षों तक परस्पर संबंधों में बने रहे, शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया जाना कि वह अभियुक्त या अभियुक्त के साथ यौन संबंध केवल इस प्रत्याशा से बना रही थी कि वह निश्चित रूप से उससे विवाह करेगा, उचित और युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है । इस प्रकार यदि आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अधिकथित सर्वाधिक गंभीर आरोप को भी सत्य मान

लिया जाए तो भी बलात्संग के अपराध के अनिवार्य घटकों को उनके माध्यम से स्थापित नहीं किया जा सकता ।

8. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **डा. धुववरम मुरलीधर सोनार** (उपरोक्त) वाले मामले में परस्पर सम्मति से बनाए गए लैंगिक संबंधों और विवाह के वचन के अधीन बनाए गए लैंगिक संबंधों की तुलना करते हुए उनके विभिन्न पहलुओं पर विचार किया और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :–

> "14. धारा 375 बलात्संग के अपराध को परिभाषित करती है तथा अपराध के संबंध में छह वर्णनों को उल्लिखित करती है । प्रथम खंड उस दशा में लागू होता है जहां महिला अपने होशो-हवास में है और इस प्रकार वह सम्मति देने के लिए सक्षम है किन्तु लैंगिक संबंध उसकी इच्छा के विरुद्ध स्थापित किए जाते हैं और दूसरा खंड उस दशा में लागू होता है जहां लैंगिक संबंध उसकी सम्मति के बिना स्थापित किए जाते हैं, तीसरा, चौथा और पांचवां खंड उस दशा में लागू होता है जब लैंगिक संबंधों के प्रति महिला की सम्मति विद्यमान है किन्तु वह कोई ऐसी सम्मति नहीं है जो अपराधी को उसके अपराध से बचा ले, क्योंकि उसे संबद्ध महिला या उसके शरीर या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति, जिसमें वह हितबद्ध है या दिलचस्पी रखती है, को मृत्यु या उपहति पहुंचने का भय दिखाकर अभिप्राप्त किया गया है । 'उसकी इच्छा के विरुद्ध' पद से यह अभिप्रेत है कि उक्त अपराध महिला द्वारा विरोध दर्शित किए जाने के बावजूद किया गया है । 'सम्मति' के संबंध में कोई उपधारणा केवल तभी बनाई जा सकती है यदि वह केवल मामले के साक्ष्य या संभावनाओं पर आधारित हो । 'सम्मति' पद को भी एक युक्तियुक्त कार्य के रूप में कथित किया गया है, जिसमें समुचित सोच-विचार सम्मिलित है । यह किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में एक सक्रिय इच्छा को उपदर्शित करती है जिसके माध्यम से ऐसे कार्य को करने की अनुमति दी गई हो, जिसके संबंध में शिकायत दर्ज की गई है ।
>
> 15. दंड संहिता की धारा 90 'सम्मति' पद को परिभाषित

करती है, जिसे भय या भ्रम के अधीन दिया गया है । उक्त धारा 90 नीचे उद्धृत की गई है –

> "90. सम्मति, जिसके संबंध में यह ज्ञात हो कि वह भय या भ्रम के अधीन दी गई है । कोई सम्मति ऐसी सम्मति नहीं है जैसा इस संहिता की किसी धारा से आशयित है, यदि वह सम्मति किसी व्यक्ति ने क्षतिभय के अधीन, या तथ्य के भ्रम के अधीन दी हो, और यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो या उसके पास विश्वास करने का कारण हो कि ऐसे भय या भ्रम के परिणामस्वरूप वह सम्मति दी गई थी ।"

इस प्रकार, दंड संहिता की धारा 90, यद्यपि 'सम्मति' पद को परिभाषित नहीं करती, किन्तु यह उन बातों को वर्णित करती है, जो 'सम्मति' के अंतर्गत नहीं आते हैं । सम्मति अभिव्यक्त या विवक्षित, दबाव में या भ्रमित करके प्राप्त की गई हो सकती है या उसे स्वैच्छिक या कपट के माध्यम से अभिप्राप्त किया गया हो सकता है । यदि, शिकायतकर्ता द्वारा तथ्य के किसी भ्रम के अधीन सम्मति प्रदान की जाती है तो ऐसी सम्मति को दूषित माना जाता है । दंड संहिता की धारा 375 के प्रयोजन के लिए सम्मति से बलात्संग के अपराध के महत्व और नैतिक गुणवत्ता के ज्ञान पर आधारित बुद्धिमत्ता के प्रयोग के पश्चात् न केवल लैंगिक क्रियाओं में स्वैच्छिक भागीदारी की अपेक्षा करती है अपितु, वह यह भी अपेक्षा करती है कि शिकायतकर्ता द्वारा विरोध और सहमति के बीच विकल्प का पूर्ण रूप से प्रयोग किया गया हो । इस बात को कि क्या कार्य में सम्मति विद्यमान थी अथवा नहीं, सभी सुसंगत परिस्थितियों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के पश्चात् ही अभिनिश्चित किया जा सकता है ।

16. उदय **बनाम** कर्नाटक राज्य [(2003) 4 एस. सी. सी. 46 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 1639] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा एक ऐसे मामले पर विचार किया गया था, जहां अभियोक्त्री, जिसकी आयु लगभग 19 वर्ष थी, ने अभियुक्त को, जिससे वह अटूट प्रेम करती थी, उसके द्वारा यह वचन दिए जाने

पर लैंगिक मैथुन करने के लिए सम्मति प्रदान की थी कि वह एक पश्चात्वर्ती तारीख को उससे विवाह करेगा । अभियोक्त्री ने अभियुक्त से मिलना-जुलना जारी रखा और उन्होंने अनेक बार लैंगिक मैथुन किया और इसके परिणामस्वरूप वह गर्भवती हो गई । अभियुक्त द्वारा उससे विवाह करने में असफल रहने पर अभियोक्त्री द्वारा एक शिकायत दर्ज कराई गई । मामले की सुनवाई के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह नहीं कहा जा सकता कि सम्मति तथ्य के भ्रम के अधीन दी गई थी । उक्त मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था –

"21. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि न्यायिक राय की आम सहमति इस मत के पक्ष में है कि अभियोक्त्री द्वारा ऐसे किसी व्यक्ति के साथ, जिससे वह अटूट प्रेम करती थी, इस वचन के आधार पर कि वह एक पश्चात्वर्ती तारीख को उससे विवाह करेगा, लैंगिक मैथुन के लिए दी गई सम्मति को तथ्य के भ्रम के अधीन दी गई सहमति नहीं माना जा सकता । कोई मिथ्या वचन ऐसा कोई तथ्य नहीं है जो संहिता के अर्थान्तर्गत आता हो । हम इस मत से सहमत होने की प्रवृत्ति दर्शित करते हैं किन्तु हम इसमें यह बात जोड़ना चाहते हैं कि यह बात अवधारित करने के लिए कोई प्रत्यक्ष सूत्र विद्यमान नहीं है कि क्या अभियोक्त्री द्वारा लैंगिक मैथुन के लिए दी गई सम्मति स्वैच्छिक है या उसे किसी तथ्य के भ्रम के अधीन दिया गया था । अंततोगत्वा विश्लेषण यह है कि न्यायालय द्वारा अधिकथित परीक्षण अधिकाधिक रूप से न्यायिक बोध के लिए उस समय मार्गदर्शन उपलब्ध कराते हैं, जब सम्मति से संबंधित किसी प्रश्न पर विचार किया जा रहा हो, किन्तु न्यायालय को मामले में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व आवश्यक रूप से प्रत्येक मामले में उसके समक्ष उपलब्ध साक्ष्य और मामले की परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए क्योंकि प्रत्येक मामले के अपने-अपने विशिष्ट तथ्य होते हैं, जो इस प्रश्न को प्रभावित करते हैं कि क्या दी गई सम्मति स्वैच्छिक है या उसे किसी तथ्य के भ्रम के अधीन दिया गया था । इस तथ्य को ध्यान में

रखते हुए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का भी समुचित विश्लेषण करना चाहिए कि अपराध के प्रत्येक घटक, जिसके अंतर्गत सम्मति की अनुपस्थिति भी है, को साबित करने का दायित्व अभियोजन पक्ष पर है ।

23. उस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, जिसे न्यायालय को ऐसे मामलों में अपनाना चाहिए, हम अब अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करेंगे । वर्तमान मामले में, अभियोक्त्री एक परिपक्व लड़की है जो महाविद्यालय में पढ़ाई कर रही है । वह अपीलार्थी से अटूट प्रेम करती थी । तथापि, वह इस तथ्य से भी सुभिज्ञ थी कि चूंकि वे दोनों भिन्न-भिन्न जातियों से संबंध रखते थे इसलिए उन दोनों का विवाह संभव नहीं था । किसी भी दशा में उनके विवाह के प्रस्ताव का उनके कुटुम्ब के सदस्यों के द्वारा गंभीरता से विरोध किया जाना तय था । उसने स्वीकार किया है कि उसने यह तथ्य उस समय अपीलार्थी के समक्ष प्रकट किया था जब अपीलार्थी ने पहली बार उसके समक्ष प्रेम का इजहार किया था । उसके पास, उस कार्य, जिसके संबंध में वह सम्मति दे रही थी, के महत्व और उसकी नैतिक गुणवत्ता को समझने के लिए पर्याप्त बुद्धिमत्ता मौजूद थी । इसलिए उसने अपने प्रेम को तब तक गोपनीय रखा जब तक कि यह उसके वश में था । इसके बावजूद वह अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रेमालापों का विरोध नहीं कर सकी और वस्तुतः, उसने अपीलार्थी के साथ लैंगिक संबंध स्थापित कर लिए । इस प्रकार उसने स्वतंत्रतापूर्वक विरोध और सहमति के बीच अपने विकल्प का प्रयोग किया । उस समय उसे उसके द्वारा किए जाने वाले कार्य के परिणामों का भली-भांति ज्ञान था, विशिष्ट रूप से उस समय जब वह इस तथ्य के प्रति सचेत थी कि जाति में भिन्न के कारण उनका विवाह न होने की पूरी संभावना थी । ये सभी परिस्थितियां हमें इस निष्कर्ष की ओर ले जाती हैं कि उसने निर्मुक्त रूप से, स्वैच्छिक और सचेत रूप से अपीलार्थी के साथ लैंगिक मैथुन करने के लिए सम्मति प्रदान की थी और उसकी सम्मति तथ्य के किसी भ्रम का परिणाम नहीं थी ।"

17. दीलीप सिंह **उर्फ** दिलीप कुमार **बनाम** बिहार राज्य [(2005) 1 एस. सी. सी. 88 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 203] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने सम्मति से संबंधित निम्नलिखित दो प्रश्नों को विरचित किया है –

> "(1) क्या यह मामला, अभियुक्त द्वारा दिए गए मौखिक प्रलोभनों द्वारा डाले गए मनोवैज्ञानिक दबाव के कारण निष्क्रिय आत्मसमर्पण का मामला है अथवा यह अभियोक्त्री की ओर से लिया गया एक सचेत निर्णय है, जिसे लिए जाने के दौरान उसे पूर्ण रूप से उस कार्य, जिसे करने के लिए उसे कहा जा रहा था, के परिणामों और प्रकृति का ज्ञान था ? (2) क्या अभियोक्त्री द्वारा दी गई सम्मति, अभियुक्त द्वारा उससे विवाह किए जाने के आशय को उपदर्शित किए जाने के परिणामस्वरूप उसके मन में उत्पन्न भ्रम के परिणामस्वरूप दी गई थी ?"

इस मामले में, लड़की ने पुलिस थाने में यह कथन करते हुए यह शिकायत दर्ज कराई कि वह और अभियुक्त पड़ोसी थे और उन्हें एक दूसरे से प्रेम हो गया । फरवरी, 1988 के दौरान एक दिन अभियुक्त ने बलपूर्वक उसके साथ बलात्संग किया और उसके पश्चात् उसे यह कहकर सांत्वना प्रदान की कि वह उससे विवाह करेगा । वह अभियुक्त की बातों में आ गई और उसने इस वचन पर विश्वास करके कि अभियुक्त उसके साथ विवाह करेगा, अभियुक्त के साथ यौन संबंध स्थापित किए तथा इस प्रकार उन्होंने अनेक अवसरों पर लैंगिक मैथुन किया । उसके पश्चात् जब वह गर्भवती हो गई तो उसने इस पूरे मामले को अपने माता-पिता के समक्ष प्रकट किया । उसके पश्चात् भी अभियुक्त और उसके बीच यौन संबंध बने रहे, जिनके संबंध में उसके माता-पिता और अन्य नातेदारों को भी जानकारी थी और उन्हें यह प्रतीत हो रहा था कि अभियुक्त उससे विवाह करेगा, किन्तु अभियुक्त ने उससे विवाह नहीं किया और विवाह को टालने के लिए अभियुक्त के

पिता उसे गांव से बाहर ले गए । लड़की के पिता द्वारा हर संभव प्रयास किया गया कि उसका और अभियुक्त का विवाह अनुष्ठापित हो जाए, किन्तु उनके सभी प्रयास असफल रहे । अतः, अभियोक्त्री ने कुछ समय तक प्रतिक्षा करने के पश्चात् हताश होकर वर्तमान शिकायत फाइल की । इस प्रकार की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि अभियोक्त्री ने सभी घटनाओं पर सक्रिय रूप से सोच-विचार करने के पश्चात् एक सचेत निर्णय लिया । यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि अधिक से अधिक इस मामले को विवाह के मिथ्या वचन के मामले के बजाय विवाह के वचन भंग का मामला माना जा सकता है, जिसके लिए अभियुक्त प्रथमदृष्ट्या रूप से सिविल विधि के अधीन नुकसान की भरपाई के लिए उत्तरदायी है । अत: उक्त मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया –

> "अब यह प्रश्न शेष रह जाता है कि क्या अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर यह युक्तियुक्त रूप से संभव है कि अभियुक्त के संबंध में यह अभिनिर्धारित किया जाए कि उसने अभियोक्त्री के साथ लैंगिक मैथुन करने हेतु उसे राजी करने के कपटपूर्ण इरादे से उसे विवाह का झूठा वचन दिया था । हमें इस बात के संबंध में कोई संदेह नहीं है कि अभियुक्त ने उसे विवाह करने का वचन दिया था और यह एक प्रमुख कारण था जिसके परिणामस्वरूप पीड़ित लड़की उसके साथ लैंगिक मैथुन करने के लिए सहमत हो गई । अभि. सा. 12 भी उसके साथ विवाह करने के लिए अत्यधिक इच्छुक थी, जैसा कि स्वयं उसके द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से स्वीकार किया गया है । किन्तु हमें ऐसा कोई साक्ष्य अभिलेख पर दिखाई नहीं देता है, जिससे सभी सुसंगत संदेहों से परे यह निष्कर्ष निकल सके कि अभियुक्त का प्रारंभ से ही उससे विवाह करने का कोई इरादा नहीं था और उसने जानते बुझते हुए उससे विवाह करने का झूठा वचन दिया था । अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किसी भी परिस्थितिजन्य साक्ष्य से इस

तथ्य की पुष्टि नहीं होती है । दूसरी ओर, अभि. सा. 12 द्वारा किए गए इस कथन से कि उसके पश्चात् अभियुक्त उससे विवाह करने हेतु तैयार हो गया था, किन्तु अभियुक्त के पिता और अन्य व्यक्ति उसे गांव से बाहर ले गए, यह उपदर्शित होता है कि अभियुक्त का उससे विवाह करने का इरादा वास्तविक था किन्तु उसके कुटुम्ब के बड़े बुजुर्गों द्वारा डाले गए दबाव के कारण यह विवाह संभव नहीं हो सका । इस प्रकार यह मामला विवाह के झूठे वचन के मामले के बजाय विवाह के वचनभंग का मामला प्रतीत होता है । इस पहलू पर भी इस न्यायालय द्वारा उदय वाले मामले के पैरा 24 में किए गए संप्रेक्षण अपीलार्थी के पक्ष में हैं और वे उसकी सहायता करते हैं ।"

18. दीपक गुलाटी **बनाम** हरियाणा राज्य [(2013) 7 एस. सी. सी. 675 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2071] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने बलात्संग और सम्मतिपूर्वक किए गए लैंगिक मैथुन में अंतर को स्पष्ट किया है । यह एक ऐसी अभियोक्त्री से संबंधित मामला है जिसकी आयु घटना के समय लगभग 19 वर्ष थी । उसका अभियुक्त के प्रति झुकाव था । अभियुक्त निरंतर उसे इस तथ्य के प्रति आश्वासन दे रहा था कि वह उससे विवाह करेगा । अतः, अभियोक्त्री ने स्वैच्छिक रूप से अपने घर का त्याग किया और अपनी स्वतंत्र इच्छा के अनुसार अभियुक्त से विवाह करने के लिए उसके साथ चली गई । उसने अभियुक्त द्वारा उसे दिए गए एक फोन नम्बर पर कॉल करके अभियुक्त से यह पूछा कि वह उनके द्वारा पूर्व निश्चित किए गए स्थान पर उससे मिलने क्यों नहीं आया था । उसने काफी लंबे समय तक अभियुक्त की प्रतीक्षा की थी और जब वह अंततः वहां पहुंचा तो अभियोक्त्री उसके साथ कर्ण झील नामक एक स्थान पर गई जहां उन्होंने लैंगिक मैथुन किया । उसने इस प्रक्रम पर लैंगिक मैथुन के संबंध में कोई आक्षेप नहीं उठाया और न ही इस संबंध में कोई शिकायत की । उसके पश्चात् वह अभियुक्त के साथ कुरूक्षेत्र

गई, जहां उसने अभियुक्त के नातेदारों के साथ निवास किया । वहां भी अभियोक्त्री ने स्वैच्छिक रूप से अभियुक्त के साथ यौन संबंध स्थापित किए । उसके पश्चात् किसी कारणवश वह निवास करने के लिए कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय के एक छात्रावास में चली गई, जहां उसने अवैध रूप से निवास किया और उसके पश्चात् पुन: उसने अभियुक्त के साथ बिड़ला मंदिर में मुलाकात की । उसके पश्चात्, वह उसके साथ कुरूक्षेत्र के पुराने बस स्टैंड गई और वहां से वे अंबाला जाना चाहते थे ताकि वे दोनों अंबाला न्यायालय में विवाह कर सकें । किन्तु, बस स्टैंड पर अभियुक्त को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दोनों पक्षकारों के बीच स्पष्ट रूप से शारीरिक संबंध अभियोक्त्री की सम्मति के साथ स्थापित हुए थे, क्योंकि उक्त संबंध स्थापित करते समय अभियोक्त्री की तरफ से न तो कोई विरोध किया गया और न ही उसने किसी भी समय किसी भी स्थान पर किसी के समक्ष कोई शिकायत दर्ज की, इस तथ्य के बावजूद कि वह अनेक दिनों तक अभियुक्त के साथ निवास कर रही थी और उसने उसके साथ एक स्थान से अन्य स्थानों तक यात्रा भी की थी । न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि ऐसी किसी परिस्थिति के संबंध में अनुमान लगाना संभव नहीं है, जिसमें अभियुक्त के विरुद्ध धोखे/बलात्संग का आरोप लगाया जा सके ।

19. हाल ही में, इस न्यायालय ने वर्ष 2018 की दांडिक अपील सं. 504 से संबंधित शिवशंकर **उर्फ** शिवा **बनाम** कर्नाटक राज्य और अन्य (ए. आई. आर. ऑनलाइन 2018 एस. सी. 499) वाले मामले में, जिसका निपटारा तारीख 6 अप्रैल, 2018 को किया गया था, यह संप्रेक्षण किया है कि किसी ऐसे संबंध के अनुक्रम में, जो आठ वर्षों से चल रहा है, हुए लैंगिक मैथुन को 'बलात्संग' ठहराना कठिन हो जाता है, विशेष रूप से उस समय जब शिकायतकर्ता ने अपने आरोप में स्वयं इस बात को स्वीकार किया हो कि वे पति और पत्नी के रूप में निवास कर रहे थे । उक्त मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था –

"वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को कायम रखना कठिन है, संभवतः, अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता से विवाह करने का वचन दिया होगा । तथापि, किसी ऐसे संबंध के अनुक्रम में, जो आठ वर्षों से चल रहा है, हुए लैंगिक मैथुन को 'बलात्संग' ठहराना कठिन हो जाता है, विशेष रूप से उस समय जब शिकायतकर्ता ने अपने आरोप में स्वयं इस बात को स्वीकार किया हो कि वे पति और पत्नी के रूप में निवास कर रहे थे ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

20. इस प्रकार, बलात्संग और सम्मतिपूर्वक लैंगिक मैथुन के बीच स्पष्ट अंतर विद्यमान है । ऐसे मामलों में न्यायालय को ध्यानपूर्वक इस तथ्य की समीक्षा करनी चाहिए कि क्या शिकायतकर्ता वास्तविक रूप से पीड़ित लड़की से विवाह करना चाहता था या उसका आशय असद्भावपूर्ण था और उसने केवल अपनी वासना की पूर्ति के लिए इस प्रभाव का मिथ्या वचन दिया था । यह मामला धोखे या कपट के परिधि क्षेत्र के अंतर्गत आता है । इसी प्रकार, केवल वचनभंग और किसी मिथ्या वचन को पूरा न करने में भी एक स्पष्ट अंतर विद्यमान है । यदि अभियुक्त ने, अभियोक्त्री का शील भंग करने और उससे लैंगिक मैथुन करने के लिए सम्मति प्राप्त करने के एकमात्र इरादे से उसे विवाह करने का वचन नहीं दिया था तो ऐसा कार्य बलात्संग के तत्समान नहीं होगा । ऐसा कोई मामला हो सकता है जहां अभियोक्त्री, अभियुक्त के प्रति अपने प्रेम और काम वासना के कारण लैंगिक मैथुन करने हेतु सहमति प्रदान करती है और उक्त सहमति केवल अभियुक्त द्वारा सृजित भ्रम के कारण नहीं है या जहां कोई अभियुक्त, किन्हीं ऐसी परिस्थितियों, जिनका वह पूर्वानुमान नहीं लगा सकता था या जो उसके नियंत्रण के परे थी, के कारण अभियोक्त्री से विवाह करने का सच्चा इरादा रखते हुए भी विवाह करने में असफल

रहता है । यदि शिकायतकर्ता का कोई असद्भावपूर्वक आशय था और यदि उसके उद्देश्य दुर्भावनापूर्ण थे तो स्पष्ट रूप से यह एक बलात्संग का मामला है । पक्षकारों के बीच स्वीकृत रूप से सम्मति प्राप्त शारीरिक संबंध दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध का गठन नहीं करते हैं ।

21. वर्तमान मामले में, यह एक स्वीकृत स्थिति है कि अपीलार्थी एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में चिकित्सा अधिकारी के रूप में कार्य कर रहा था और शिकायतकर्ता उसी स्वास्थ्य केन्द्र में सहायक नर्स के रूप में कार्य कर रही थी और शिकायतकर्ता एक विधवा है । उसके द्वारा यह आरोप लगाया गया था कि अपीलार्थी ने उसे यह जानकारी दी थी कि वह एक विवाहित व्यक्ति है और उसके अपनी पत्नी के साथ कुछ मतभेद चल रहे हैं । स्वीकार्य रूप से, वे भिन्न-भिन्न समुदायों से संबंध रखते हैं । यह भी आरोप लगाया गया है कि अभियुक्त/अपीलार्थी को अपने विवाह को रजिस्टर कराने के लिए एक मास की समय की आवश्यकता थी । शिकायतकर्ता द्वारा यह भी कथन किया गया है कि उसे अपीलार्थी के साथ प्रेम हो गया था और चूंकि वह एक विधवा थी तो ऐसे में उसे एक साथी की भी आवश्यकता थी । उसने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया है कि "चूंकि मैं एक विधवा हूं तो इसलिए मुझे भी एक साथ की आवश्यकता थी और इसलिए मैं उसके प्रस्ताव से सहमत हो गई और उसके पश्चात् से हमारा प्रेम संबंध चल रहा है और तद्नुसार हमने एक साथ निवास करना आरंभ कर दिया । कभी-कभार हम दोनों, मेरे घर में एक साथ निवास करते थे और कभी-कभी अभियुक्त के घर में" । इस प्रकार, वे एक साथ निवास कर रहे थे, कभी शिकायतकर्ता के घर में और कभी अपीलार्थी के निवास-स्थान पर । वे काफी समय तक एक-दूसरे के साथ संबंधों में रहे और उन्होंने एक-दूसरे के साथ का आनंद लिया । यह भी स्पष्ट है कि उन्होंने काफी लंबे समय तक एक-साथ निवास भी किया है । जब शिकायतकर्ता को यह ज्ञात हुआ कि अपीलार्थी ने

किसी अन्य महिला से विवाह कर लिया था तो उसने वर्तमान शिकायत दर्ज की । उसका पक्षकथन यह नहीं है कि शिकायतकर्ता ने बलपूर्वक उसके साथ बलात्संग किया है । उसने संपूर्ण घटनाक्रम के संबंध में गहन विचार करने के पश्चात् सचेत निर्णय लिया है । यह मनोवैज्ञानिक दबाव के डाले जाने के कारण उत्पन्न हुआ निष्क्रिय आत्मसमर्पण का मामला नहीं है और इस मामले में स्पष्ट सम्मति प्रतीत होती है और उसके द्वारा उपरोक्तानुसार दी गई स्पष्ट सम्मति उसके मष्तिष्क में सृजित किसी भ्रम का परिणाम नहीं थी । हमारा मत यह है कि चूंकि शिकायतकर्ता प्रथमदृष्ट्या रूप से बलात्संग के अपराध को दर्शित करने में असफल रही है इसलिए दंड संहिता की धारा 376(2)(ख) के अधीन रजिस्टर की गई शिकायत को कायम नहीं रखा जा सकता ।"

9. वर्तमान मामले के तथ्य और अधिक स्पष्ट हैं क्योंकि याची और शिकायतकर्ता के बीच स्थापित हुए संबंध उनके परस्पर प्रेम संबंधों पर आधारित थे और उनका प्रेम संबंध लगभग 12 वर्ष तक निर्बाद्ध रूप से चलता रहा । इस प्रकार, मेरी यह सुदृढ़ राय है कि आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में अन्वेषण को जारी रखने की अनुज्ञा दिए जाने से विधि की प्रक्रिया का घोर दुरुपयोग होगा ।

10. तद्नुसार, वर्तमान दांडिक प्रकीर्ण याचिका स्वीकार किए जाने योग्य है और इसलिए उसे स्वीकार किया जाता है । आक्षेपित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 135/2019, जिसे सविना पुलिस थाने में रजिस्टर किया गया था और साथ ही उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के कारण याची के विरुद्ध किए जाने के लिए ईप्सित सभी कार्यवाहियों को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ।

याचिका मंजूर की गई ।

पु.

शजल राय उर्फ **एड्रिन**

बनाम

सिक्किम राज्य

(2020 की दांडिक अपील सं. 7)

तारीख 24 मार्च, 2021

मुख्य न्यायमूर्ति जितेन्द्र कुमार महेश्वरी और न्यायमूर्ति भास्कर राज प्रधान

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376 – अपीलार्थी पर अभियोक्त्री के साथ बलात्संग करने का आरोप लगाया जाना – अपीलार्थी पर यह आरोप लगाया जाना कि अभियोक्त्री और अपीलार्थी पूर्व परिचित थे और अपीलार्थी ने किसी बहाने से अभियोक्त्री को किसी एकांत स्थान पर मिलने के लिए बुलाया और वहां उसने उसके साथ बलात्संग किया और उसकी गर्दन पर चाकू रखकर यह धमकी भी दी कि यदि उसने किसी को इस घटना के बारे में जानकारी दी तो उसके परिणाम अच्छे नहीं होंगे – विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दोषसिद्ध ठहराकर उसके विरुद्ध दंडादेश पारित किया जाना – अपीलार्थी द्वारा उक्त दोषसिद्धि को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दिया जाना – वर्तमान मामले में इत्तिलाकर्ता अभियोक्त्री का पिता है और उसके द्वारा न्यायालय के समक्ष यह कथन किया जाना कि उसे घटना के संबंध में कोई जानकारी नहीं दी गई थी और न ही उसे अभियुक्त का नाम बताया गया था – अभियोक्त्री द्वारा न्यायालय के समक्ष लेखबद्ध कराए गए कथन में अनेक विसंगतियों का पाया जाना – अन्वेषण अधिकारी द्वारा तैयार किए गए स्थल-नक्शे से घटनास्थल के सटीक अवस्थान का पता न चलना – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब होना और उसके संबंध में कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण उपलब्ध न कराया जाना – चिकित्सा रिपोर्ट और न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट के माध्यम से अभियोक्त्री द्वारा लगाए गए आरोपों की पुष्टि न होना – इस प्रकार एकमात्र अभियोक्त्री के कथन, जो कि ठोस और

अकाट्य प्रकृति का प्रतीत नहीं होता है, के आधार पर अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराया जाना उचित नहीं है और इसलिए अपील को मंजूर करते हुए दोषसिद्धि को अपास्त किया गया ।

वर्तमान मामले का निपटान करने के लिए संक्षेप में तथ्य इस प्रकार है कि अभियुक्त (अपीलार्थी) शजल राय **उर्फ** एड्रिन की आयु 22 वर्ष है और वह ज़ूम बस्ती पश्चिमी सिक्किम का निवासी है तथा वर्तमान में वह 6 मील, ताडोंग पूर्वी सिक्किम में निवास कर रहा है । वह पेशे से यान चालक है, जो देवराली, पूर्वी सिक्किम के निवासी डंबेर बहादुर छेत्री के स्वामित्व वाले एक पर्यटक यान, जिसका रजिस्ट्रीकरण सं. एस के 01 जेड 0702 है, का चालन करता था । तारीख 17 अप्रैल, 2019 को रात्रि के लगभग 8.30 बजे जब पीड़िता की बहिन पीड़िता का मोबाइल फोन देख रही थी तो उसी समय उसे अभियुक्त का फोन कॉल आया और उसने पीड़िता की बहिन को पुताली बाग, पूर्वी सिक्किम में आकर मिलने के लिए आग्रह किया । पीड़िता ने अपनी बहिन से अपना फोन छीन लिया और फोन को स्पीकर पर रखने के पश्चात् अभियुक्त को उत्तर दिया कि "मैं क्यों आऊं" । अभियुक्त ने पीड़िता से पूछा कि "क्या वह उससे प्रेम करती है या नहीं" । पीड़िता ने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया । पीड़िता की बहिन ने अभियुक्त से 500/- रुपए इस वचन के साथ मांगे कि अगले दिन गंगटोक जाने के पश्चात् लौटा देगी । अभियुक्त मांग किए गए अनुसार धन देने के लिए तैयार हो गया, लेकिन पीड़िता या फिर उसकी बहिन, किसी को भी अकेले आने के लिए कहा । इस कहानी में आगे यह प्रकट होता है कि पीड़िता का अभियुक्त से परिचय एक माह पूर्व तब हुआ था जब उसकी बहिन ने अभियुक्त को अपनी सहेली के प्रेमी के रूप में मिलवाया था । पीड़िता ने अभियुक्त को उसके घर के समीप स्थित गिरिजाघर में भी जाते हुए देखा था । एक अवसर पर अभियुक्त पीड़िता की बहिन से मिला और उसका मोबाइल नंबर मांगा । पीड़िता की बहिन के पास स्वयं का कोई मोबाइल फोन नहीं था, फिर भी उसने अपनी बहिन का मोबाइल नंबर उसे दे दिया, जिसके उपरांत अभियुक्त ने उस नंबर को अपने फोन में सेव कर लिया । अभियुक्त पीड़िता के मोबाइल पर उसकी बहिन को फोन करता था ।

घटना वाले दिन अभियुक्त से बातचीत करने के पश्चात् पीड़िता मुख्य मार्ग अर्थात् पुताली बाग, 32 मील पूर्वी सिक्किम की ओर जाकर अभियुक्त से मिली । अभियुक्त ने पीड़िता को बलपूर्वक पकड़ लिया और उसे अपने यान, रजिस्ट्रीकरण सं. एस के 01 जेड 0702 में बैठा लिया तथा यान को सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली के द्वारा अंदर से बंद कर दिया । पीड़िता अत्यधिक प्रयास करने के पश्चात् भी यान का दरवाजा खोलने में सफल नहीं हुई । अभियुक्त ने पीड़िता का मोबाइल फोन भी छीनकर अपने पास रख लिया । इसके उपरांत कुछ देर तक यान चलाने के पश्चात् अभियुक्त ने रेडोंग, नया मार्ग, पूर्वी सिक्किम में यान को रोका, तथा यान के संगीत वादक यंत्र को उसकी अधिकतम ध्वनि पर चालू कर दिया । तत्पश्चात्, अभियुक्त ने यान की उस सीट को पीछे धकेल दिया जिस पर पीड़िता बैठी थी और उसने बलपूर्वक पीड़िता के वस्त्र उतार दिए । उसने पीड़िता की गर्दन पर चाकू रखकर उसे धमकी दी कि अगर वह चीखी-चिल्लाई या फिर उसने प्रतिरोध किया तो वह उसकी गर्दन काट देगा । पीड़िता उसे दुर्वचन बोलती और कोसती रही, लेकिन अभियुक्त ने तब तक उसे अपने काबू में कर लिया था । इसके पश्चात् उसने पीड़िता के साथ बलात्संग किया । उसके पश्चात् अभियुक्त ने यह धमकी दी कि यदि उसने किसी से इस घटना की शिकायत की तो उसे गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे । इस घटना के कुछ समय पश्चात् अभियुक्त को झपकी आ गई जिसके पश्चात् पीड़िता किसी प्रकार से चालक की सीट का बटन दबाकर और अपना मोबाइल फोन लेकर यान से भागने में सफल हो गई । अभी पीड़िता कुछ ही दूर चली थी कि अभियुक्त पुन: वहां आ गया तथा पीड़ता को यान के अंदर बैठाकर उसे पुताली बाग, 32 मील, पूर्वी सिक्किम पर छोड़कर चला गया । जब पीड़िता अपने घर पहुंची तब तक रात्रि के 9.30-10.30 बज चुके थे । इसके पश्चात् पीड़िता ने तारीख 17 अप्रैल, 2019 को रात्रि के लगभग 11 बजे अपने प्रेमी (अभि. सा. 4) को फोन कॉल की और इस घटना के विषय में बताया । अगले दिन अर्थात् तारीख 18 अप्रैल, 2019 की प्रात: को अभियुक्त ने पुन: पीड़िता को फोन किया और उसकी देखभाल करने का आश्वासन दिया । अभियुक्त ने यह भी कहा कि अब उनके साथ

प्रेमी युगल जैसा व्यवहार होगा । तदुपरांत जब पीड़िता घर पहुंची तब उसके प्रेमी ने अभियुक्त व्यक्ति को उसी स्थान पर बुलाने का सुझाव दिया जहां से उसका व्यपहरण करके उसके साथ बलात्संग किया गया था । अगले दिन जब अभियुक्त उसी स्थान पर पहुंचा तो पीड़िता के प्रेमी, एक राहुल नामक व्यक्ति, पीड़िता और पीड़िता की बहिन ने अभियुक्त को पकड़ लिया । अगले दिन अर्थात् तारीख 18 अप्रैल, 2019 को पीड़िता के पिता ने रात्रि के लगभग 10.30 बजे रानीपूल पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । रानीपूल पुलिस थाना के थाना अधिकारी प्रभारी ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 161 के अधीन पीड़िता के द्वारा किए गए कथन को अभिलिखित करके उसे चिकित्सा परीक्षा के लिए भेज दिया । चिकित्सा परीक्षा के पश्चात् डाक्टर द्वारा कुछ वस्तुओं को अभिगृहीत कर लिया गया था और जिसे उन्होंने न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला में परीक्षा कराने हेतु पुलिस को सौंप दिया । पुलिस के द्वारा इस यान को भी अभिगृहीत कर लिया गया । वर्तमान मामले में यह पाए जाने पर कि घटनास्थल रानीपूल पुलिस थाने की अधिकारिता के अंतर्गत नहीं आता है, इस मामले के तारीख 19 अप्रैल, 2019 को पुलिस थाना सिंगतम को अंतरित कर दिया गया । उप निरीक्षक ने घटनास्थल का स्थल-नक्शा तैयार किया तथा अभिगृहीत वस्त्रों, स्लाइडों और यान को परीक्षा हेतु न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेज दिया और रिपोर्ट प्राप्त की जो प्रदर्श-17 के रूप में है । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् दंड संहिता की धारा 376/365 के अधीन अभिकथित अपराध कारित करने के लिए चालान फाइल किया गया । चूंकि वर्तमान मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है इसलिए इसे सक्षम न्यायालय को सौंपा गया । इसके उपरांत उक्त मामले को गंगटोक स्थित त्वरित निपटान न्यायालय, पूर्वी एवं उत्तरी सिक्किम को विचारण हेतु सौंपा गया । दंड संहिता की धारा 376(1), धारा 365 एवं धारा 506 के अधीन सेशन न्यायालय के द्वारा आरोप विरचित किए गए । अभियुक्त ने दोषी होने से इनकार किया तथा अपनी प्रतिरक्षा में उसने मामले में मिथ्या रूप से फंसाए जाने का अभिवाक् करते हुए विचारण का दावा किया । अभियोजन पक्ष के द्वारा 14 साक्षियों की

परीक्षा की गई, जबकि अभियुक्त ने अपनी प्रतिरक्षा के समर्थन में किसी भी साक्षी की परीक्षा नहीं की है । विद्वान् विचारण न्यायालय के द्वारा यह पाया गया कि दंड संहिता की धारा 365 और धारा 506 के अधीन आरोप, अभियोजन पक्ष के द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों से साबित नहीं हो सके हैं । तथापि, अभियोक्त्री के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य का अवलंब लेते हुए विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप साबित होता है । तद्नुसार, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त/अपीलार्थी को उक्त आरोप के लिए दोषसिद्ध ठहराया तथा अभियुक्त को दंडादेश को भोगने का निदेश दिया । अपीलार्थी ने उपरोक्त दोषसिद्धि और उस पर दंडादेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में उन्हें चुनौती देते हुए वर्तमान अपील फाइल की है । उच्च न्यायालय ने साक्षियों द्वारा प्रस्तुत कथनों का परिशीलन तथा अभिलेख पर उपलब्ध अन्य सामग्रियों पर विचार करने तथा अनेक सुसंगत मामला विधियों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी की दोषसिद्धि को अपास्त किया तथा उसके द्वारा प्रस्तुत अपील को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोजन पक्ष के पक्षकथन में अनेक खामियां हैं । अभियोजन पक्ष के अनुसार अभियुक्त ने पीड़िता के साथ उसकी बहिन के मोबाइल पर फोन करके उसे भी बुलाया था । अभियुक्त और पीड़िता के मोबाइल का सीडीआर मंगाकर मोबाइल फोन कॉल्स का ब्यौरा एकत्र नहीं किया गया । बलात्संग के पश्चात् पीड़िता ने अपने मित्र अर्थात् राहुल को सूचना भेजी थी । राहुल की सीडीआर और संदेश संबंधी ब्यौरे भी पेश नहीं किए गए । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार पीड़िता के पति ने भी उसी दिन रात्रि को पीड़िता को फोन किया था, लेकिन उसका भी सीडीआर पेश नहीं किया गया है । अभियोक्त्री का आचरण अस्वाभाविक था । घटना के पश्चात् वापस आने पर वह अपनी बहिन से मिली, उस समय उनके पिता भी घर पर मौजूद थे, लेकिन उसने उन दोनों से घटना के विषय में कुछ नहीं कहा । यह भी अभिकथन किया गया है कि बलात्संग के समय यान के अंदर अभियोक्त्री की गर्दन पर चाकू रखकर धमकी दी गई थी, लेकिन अभियोजन पक्ष ने चाकू को भी

अभिगृहीत नहीं किया है और न ही उसे पेश किया है । अभियोजन पक्ष की कहानी यह है कि जब अभियोक्त्री ने यान में प्रवेश किया तभी सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली द्वारा यान के सभी दरवाजों को बंद कर दिया गया था । लेकिन यान की कोई तकनीकी रिपोर्ट पेश नहीं की गई जिससे यह साबित हो सके कि यान में सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली थी । इस मामले में डीएनए परीक्षण भी नहीं किया गया है, प्रमुख रूप से तब जब न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला परीक्षण से अभियोजन पक्ष की कहानी के अनुसार अपराध का कारण प्रकट नहीं हो सका था । इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के उपबंधों के अनुपालन में भी 24 घंटे के भीतर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट नहीं भेजी गई । अभियुक्त के शरीर पर क्षतियां पाई गई थीं, जैसा कि उसकी चिकित्सीय रिपोर्ट प्रदर्श-15 से ज्ञात होता है, लेकिन इसका कोई स्पष्टीकरण अभिलेख पर मौजूद नहीं है । ये सभी तथ्य अभियोजन के पक्षकथन तथा अन्वेषण की रीति के संबंध में भी संदेह उत्पन्न करते हैं । ये सभी कमियां सामूहिक रूप से अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक हैं, जो कि अभियुक्त के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन किए गए अपराध के संबंध में आरोप के लिए अभियुक्त के दोष को साबित करने में असफल रहा है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा दंड संहिता की धारा 365 तथा 506 के अधीन अभियुक्तों को दोषमुक्त करते समय इन सभी पहलुओं पर विचार किया गया है । उपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय की राय है कि अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत किया गया परिसाक्ष्य ठोस प्रकृति का नहीं है, इसलिए अभियुक्त के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप साबित करने के लिए पीड़िता के द्वारा दिए गए परिसाक्ष्य का अवलंब लेना सुरक्षित नहीं है । इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष के साक्षियों के द्वारा किए गए कथनों से अभियोजन का पक्षकथन साबित नहीं होता है । अभियोजन पक्ष के साक्षियों ने न्यायालय में अभियोजन के पक्षकथन से अलग कहानी को प्रकट किया है । जैसा कि चर्चा की गई है कि अभियोक्त्री का एकमात्र परिसाक्ष्य विश्वस्त प्रकृति का नहीं है तथा चिकित्सा और वैज्ञानिक साक्ष्यों से भी वह मिथ्या साबित हुआ है । अभिलेख पर लाई गई सामग्री के अनुसार वर्तमान मामला या तो सम्मति का या फिर मिथ्या

रूप से फंसाने का मामला प्रतीत होता है । उक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह संप्रेक्षण किया गया कि विद्वान् विचारण न्यायालय साक्ष्यों को सही परिप्रेक्ष्य में समझने में विफल रहा है और मूल सिद्धांतों के प्रतिकूल, बिना ठोस साक्ष्य के दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोपों को सही ठहराया है । इसलिए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि बलात्संग के आरोप को साबित करने के लिए विचारण न्यायालय के निष्कर्ष और निर्णय विकारग्रस्त एवं अविधिपूर्ण है और इसलिए वे अपास्त किए जाने के दायी हैं । तद्नुसार, विचारण न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया जाता है । पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप का दोषी ठहराए जाने के निर्णय तथा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित किए गए दंडादेश को अपास्त किया जाता है । तद्नुसार, यह अपील सफल होती है तथा इसे मंजूर किया जाता है । अभियुक्त को संदेह का लाभ देते हुए दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन दोषमुक्त किया जाता है । इसके परिणामस्वरूप, यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है और यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है तो उसे तुरंत कारागार से छोड़ दिया जाए । (पैरा 22, 23 और 24)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	(2015) 7 एस. सी. सी. 272 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू 1711 : **मोहम्मद अली** उर्फ **गुड्डू** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	6,10
[2013]	2013 क्रिमिनल ला जर्नल 1634 (एस. सी.) : **राजस्थान राज्य** बनाम **बाबू मीना** ;	6,10
[2010]	ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1540 : **दिनेश जायसवाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	6,10
[2007]	(2007) 13 एस. सी. सी. 501 = 2007 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6475 : **रमेश बाबूराव देवस्कर और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	6,13

[2007] (2007) 12 एस. सी. सी. 122 =
2007 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4857 :
बी. सी. देवा उर्फ **द्यावा** बनाम **कर्नाटक राज्य** ; 7,11

[2006] (2006) 9 एस. सी. सी. 713 =
ए. आई. आर. ऑनलाइन 2006 एस. सी. 409 :
येरूमाल्ला लटचय्या बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 6,13

[2002] (2002) 10 एस. सी. सी. 743 =
ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2136 :
सुधांशु शेखर साहू बनाम **उड़ीसा राज्य** । 6,7,11

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2020 की दांडिक अपील सं. 7.

वर्तमान अपील न्यायाधीश, गंगटोक स्थित त्वरित निपटान न्यायालय, पूर्वी एवं उत्तरी सिक्किम द्वारा 2019 के सेशन विचारण (एफ.टी.) सं. 04 में तारीख 17 फरवरी, 2020 के निर्णय और आदेश तथा तारीख 18 फरवरी, 2020 को पारित किए गए दंडादेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

अपीलार्थी की ओर से श्री एन राय, विधिक सहायता काउंसेल और सुश्री सुधा सेवा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री यादेव शर्मा, अपर लोक अभियोजक

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति जितेन्द्र कुमार महेश्वरी ने दिया ।

मु. न्या. महेश्वरी – वर्तमान अपील, न्यायाधीश, गंगटोक स्थित त्वरित निपटान न्यायालय, पूर्वी एवं उत्तरी, सिक्किम द्वारा 2019 के सेशन विचारण (एफ.टी.) सं. 04 में पारित तारीख 17 फरवरी, 2020 के निर्णय और आदेश तथा तारीख 18 फरवरी, 2020 को पारित किए गए दंडादेश की विधिमान्यता को प्रश्नगत करते हुए तथा भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'दंड संहिता' कहा गया है) की धारा 376(1) के अधीन अपराध कारित करने के लिए

अभियुक्त/अपीलार्थी की दोषसिद्धि के लिए अभिलिखित निष्कर्षों को चुनौती देते हुए तथा उस पर अधिरोपित 10 वर्ष के कठोर कारावास के दंडादेश और 50,000/- (पचास हजार) रुपए के जुर्माने की राशि, जिसके संदाय में व्यतिक्रम होने पर तीन माह का अतिरिक्त कारावास भोगना होगा, को चुनौती देते हुए अभियुक्त/अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई है ।

2. संक्षिप्त रूप से अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अभियुक्त (अपीलार्थी) शजल राय **उर्फ** एड्रिन की आयु 22 वर्ष है और वह जूम बस्ती पश्चिमी सिक्किम का निवासी है तथा वर्तमान में वह 6 मील, ताडोंग पूर्वी सिक्किम में निवास कर रहा है । वह पेशे से यान चालक है, जो देवराली, पूर्वी सिक्किम के निवासी डंबेर बहादुर छेत्री के स्वामित्व वाले एक पर्यटक यान, जिसका रजिस्ट्रीकरण सं. एस के 01 जेड 0702 है, का चालन करता था । तारीख 17 अप्रैल, 2019 को रात्रि के लगभग 8.30 बजे जब पीड़िता की बहिन पीड़िता का मोबाइल फोन देख रही थी तो उसी समय उसे अभियुक्त का फोन कॉल आया और उसने पीड़िता की बहिन को पुताली बाग, पूर्वी सिक्किम में आकर मिलने के लिए आग्रह किया । पीड़िता ने अपनी बहिन से अपना फोन छीन लिया और फोन को स्पीकर पर रखने के पश्चात् अभियुक्त को उत्तर दिया कि "मैं क्यों आऊं" । अभियुक्त ने पीड़िता से पूछा कि "क्या वह उससे प्रेम करती है या नहीं" । पीड़िता ने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया । पीड़िता की बहिन ने अभियुक्त से 500/- रुपए इस वचन के साथ मांगे कि अगले दिन गंगटोक जाने के पश्चात् लौटा देगी । अभियुक्त मांग किए गए अनुसार धन देने के लिए तैयार हो गया, लेकिन पीड़िता या फिर उसकी बहिन, किसी को भी अकेले आने के लिए कहा । इस कहानी में आगे यह प्रकट होता है कि पीड़िता का अभियुक्त से परिचय एक माह पूर्व तब हुआ था जब उसकी बहिन ने अभियुक्त को अपनी सहेली के प्रेमी के रूप में मिलवाया था । पीड़िता ने अभियुक्त को उसके घर के समीप स्थित गिरिजाघर में भी जाते हुए देखा था । एक अवसर पर अभियुक्त पीड़िता की बहिन से मिला और उसका मोबाइल नंबर मांगा । पीड़िता की बहिन के पास स्वयं का कोई मोबाइल फोन नहीं था, फिर भी उसने अपनी बहिन का मोबाइल नंबर उसे दे दिया, जिसके उपरांत अभियुक्त ने उस

नंबर को अपने फोन में सेव कर लिया । अभियुक्त पीड़िता के मोबाइल पर उसकी बहिन को फोन करता था । घटना वाले दिन अभियुक्त से बातचीत करने के पश्चात् पीड़िता मुख्य मार्ग अर्थात् पुताली बाग, 32 मील पूर्वी सिक्किम की ओर जाकर अभियुक्त से मिली । अभियुक्त ने पीड़िता को बलपूर्वक पकड़ लिया और उसे अपने यान, रजिस्ट्रीकरण सं. एस के 01 जेड - 0702 में बैठा लिया तथा यान को सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली के द्वारा अंदर से बंद कर दिया । पीड़िता अत्यधिक प्रयास करने के पश्चात् भी यान का दरवाजा खोलने में सफल नहीं हुई । अभियुक्त ने पीड़िता का मोबाइल फोन भी छीनकर अपने पास रख लिया । इसके उपरांत कुछ देर तक यान चलाने के पश्चात् अभियुक्त ने रेडोंग, नया मार्ग, पूर्वी सिक्किम में यान को रोका, तथा यान के संगीत वादक यंत्र को उसकी अधिकतम ध्वनि पर चालू कर दिया । तत्पश्चात्, अभियुक्त ने यान की उस सीट को पीछे धकेल दिया जिस पर पीड़िता बैठी थी और उसने बलपूर्वक पीड़िता के वस्त्र उतार दिए । उसने पीड़िता की गर्दन पर चाकू रखकर उसे धमकी दी कि अगर वह चीखी-चिल्लाई या फिर उसने प्रतिरोध किया तो वह उसकी गर्दन काट देगा । पीड़िता उसे दुर्वचन बोलती और कोसती रही, लेकिन अभियुक्त ने तब तक उसे अपने काबू में कर लिया था । इसके पश्चात् उसने पीड़िता के साथ बलात्संग किया । उसके पश्चात् अभियुक्त ने यह धमकी दी कि यदि उसने किसी से इस घटना की शिकायत की तो उसे गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे । इस घटना के कुछ समय पश्चात् अभियुक्त को झपकी आ गई जिसके पश्चात् पीड़िता किसी प्रकार से चालक की सीट का बटन दबाकर और अपना मोबाइल फोन लेकर यान से भागने में सफल हो गई । अभी पीड़िता कुछ ही दूर चली थी कि अभियुक्त पुन: वहां आ गया तथा पीड़ता को यान के अंदर बैठाकर उसे पुताली बाग, 32 मील, पूर्वी सिक्किम पर छोड़कर चला गया । जब पीड़िता अपने घर पहुंची तब तक रात्रि के 9.30 - 10.30 बज चुके थे । इसके पश्चात् पीड़िता ने तारीख 17 अप्रैल, 2019 को रात्रि के लगभग 11 बजे अपने प्रेमी (अभि. सा. 4) को फोन कॉल की और इस घटना के विषय में बताया । अगले दिन अर्थात् तारीख 18 अप्रैल, 2019 की प्रात: को अभियुक्त ने पुन: पीड़िता

को फोन किया और उसकी देखभाल करने का आश्वासन दिया । अभियुक्त ने यह भी कहा कि अब उनके साथ प्रेमी युगल जैसा व्यवहार होगा । तदुपरांत जब पीड़िता घर पहुंची तब उसके प्रेमी ने अभियुक्त व्यक्ति को उसी स्थान पर बुलाने का सुझाव दिया जहां से उसका व्यपहरण करके उसके साथ बलात्संग किया गया था । अगले दिन जब अभियुक्त उसी स्थान पर पहुंचा तो पीड़िता के प्रेमी, एक राहुल नामक व्यक्ति, पीड़िता और पीड़िता की बहिन ने अभियुक्त को पकड़ लिया । अगले दिन अर्थात् तारीख 18 अप्रैल, 2019 को पीड़िता के पिता ने रात्रि के लगभग 10.30 बजे रानीपूल पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । रानीपूल पुलिस थाना के थाना अधिकारी प्रभारी ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 161 के अधीन पीड़िता के द्वारा किए गए कथन को अभिलिखित करके उसे चिकित्सा परीक्षा के लिए भेज दिया । चिकित्सा परीक्षा के पश्चात् डाक्टर द्वारा कुछ वस्तुओं को अभिगृहीत कर लिया गया था और जिसे उन्होंने न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला में परीक्षा कराने हेतु पुलिस को सौंप दिया । पुलिस के द्वारा इस यान को भी अभिगृहीत कर लिया गया । वर्तमान मामले में यह पाए जाने पर कि घटनास्थल रानीपूल पुलिस थाने की अधिकारिता के अंतर्गत नहीं आता है, इस मामले के तारीख 19 अप्रैल, 2019 को पुलिस थाना सिंगतम को अंतरित कर दिया गया । उप निरीक्षक ने घटनास्थल का स्थल-नक्शा तैयार किया तथा अभिगृहीत वस्त्रों, स्लाइडों और यान को परीक्षा हेतु न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेज दिया और रिपोर्ट प्राप्त की जो प्रदर्श-17 के रूप में है । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् दंड संहिता की धारा 376/365 के अधीन अभिकथित अपराध कारित करने के लिए चालान फाइल किया गया ।

3. यह पाते हुए कि वर्तमान मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, इसे सक्षम न्यायालय को सौंपा गया । इसके उपरांत उक्त मामले को गंगटोक स्थित त्वरित निपटान न्यायालय, पूर्वी एवं उत्तरी सिक्किम को विचारण हेतु सौंपा गया । दंड संहिता की धारा 376(1), धारा 365 एवं धारा 506 के अधीन सेशन न्यायालय के द्वारा आरोप विरचित किए गए । अभियुक्त ने दोषी होने से इनकार किया तथा

अपनी प्रतिरक्षा में उसने मामले में मिथ्या रूप से फंसाए जाने का अभिवाक् करते हुए विचारण का दावा किया । अभियोजन पक्ष के द्वारा 14 साक्षियों की परीक्षा की गई, जबकि अभियुक्त ने अपनी प्रतिरक्षा के समर्थन में किसी भी साक्षी की परीक्षा नहीं की है ।

4. विद्वान् विचारण न्यायालय के द्वारा यह पाया गया कि दंड संहिता की धारा 365 और धारा 506 के अधीन आरोप, अभियोजन पक्ष के द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों से साबित नहीं हो सके हैं । तथापि, अभियोक्त्री के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य का अवलंब लेते हुए विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप साबित होता है । तद्नुसार, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त/अपीलार्थी को उक्त आरोप के लिए दोषसिद्ध ठहराया तथा अभियुक्त को यहां ऊपर वर्णित दंडादेश को भोगने का निदेश दिया ।

5. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से यह दलील दी है कि यह अपीलार्थी को मिथ्या रूप से फंसाए जाने का मामला है । अभियोक्त्री प्राप्तवय है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तु के अनुसार लैंगिक हमले के संबंध में कुछ भी आरोप नहीं लगाया गया है । अभियोजन पक्ष के द्वारा तैयार की गई कहानी मनगढ़ंत है । तारीख 18 अप्रैल, 2019 को रानीपुल पुलिस थाने द्वारा रजिस्ट्रीकृत की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के उपबंधों का अनुपालन न करते हुए और विलंब के कारण को स्पष्ट न करके तारीख 20 अप्रैल, 2019 को संबंधित मजिस्ट्रेट को अग्रेषित किया गया था । अभियोजन पक्ष की कहानी में यथा अभिकथित आरोप पीड़िता और साक्षियों के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य के आलोक में या फिर पुलिस के समक्ष अभिलिखित किए गए उसके कथन भी विश्वास का संचार नहीं करते हैं । अभियोक्त्री के द्वारा प्रस्तुत किया गया परिसाक्ष्य विश्वसनीय प्रकृति का नहीं है जिसका अपीलार्थी को दोषसिद्ध ठहराने के लिए अवलंब लिया जा सके । बलात्संग के आरोप की चिकित्सा साक्ष्य या फिर वैज्ञानिक साक्ष्य के द्वारा अभिपुष्टि नहीं हो सकी है, जिससे कि आरोप सिद्ध हो सके ।

6. अभियोजन पक्ष ने वर्तमान मामले में कई खामियां छोड़ दी हैं । डीएनए परीक्षण भी नहीं कराया गया था हालांकि यान को अभिगृहीत करके न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला परीक्षा हेतु भेज दिया गया था, लेकिन रिपोर्ट में बलात्संग की पुष्टि नहीं हुई है । यद्यपि, अभियोजन पक्ष द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि अभियुक्त ने यान के दरवाजे को सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली के द्वारा भीतर से बंद करने के पश्चात् बलात्संग किया था लेकिन यान की कोई भी तकनीकी रिपोर्ट प्राप्त नहीं की गई थी । स्थल-नक्शे में घटना के स्थान को विनिर्दिष्ट नहीं किया गया तथा इस संबंध में अन्वेषण अधिकारी द्वारा कोई स्पष्टीकरण भी नहीं दिया गया है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में एक दिन की देरी हुई है, हालांकि घटना की सूचना उसी दिन उसके प्रेमी मित्र और पीड़िता की बहिन को दे दी गई थी जो पूरे समय उसके साथ ही मौजूद थे । पीड़िता के पिता को वर्तमान घटना की जानकारी नहीं थी हालांकि वह पीड़िता के साथ एक ही घर में निवास कर रहे थे । पीड़िता के पिता को केवल उस समय बुलाया गया जब पुलिस ने संरक्षक को बुलाने का अनुदेश दिया । पीड़िता के पिता को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तु के विषय में जानकारी नहीं थी लेकिन उन्होंने बताया कि इस घटना के बारे में उन्हें अपने दामाद से जानकारी प्राप्त हुई थी । उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि वह बलात्संग करने वाले अभियुक्त को नहीं जानते हैं । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, अभियुक्त ने पीड़िता की गर्दन पर चाकू रखकर उसे धमकाया तथा उसे काबू में करने के पश्चात् उसके साथ बलात्संग किया । तथापि, अभियोजन पक्ष द्वारा अभिकथित चाकू की बरामदगी नहीं की गई है । यद्यपि, अभिकथित कहानी अभियुक्त, अभियोक्त्री, उसके प्रेमी और राहुल शर्मा, अभि. सा. 5 के मध्य टेलीफोन पर वार्तालाप तथा संदेशों के आदान-प्रदान से प्रारंभ हुई थी, लेकिन पुलिस के द्वारा वार्तालाप से संबंधित सीडीआर को प्राप्त करके प्रस्तुत नहीं किया गया है । पूर्वगामी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि या तो यह आपसी-सहमति का मामला हो सकता है अन्यथा मामले में मिथ्या रूप से फंसाए जाने का इसलिए इन कारणों से पुलिस थाने को त्वरित सूचना नहीं दी गई थी । उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए **सुधांशु शेखर साहू** बनाम **उड़ीसा**

राज्य[1], **येरूमाल्ला लटचय्या** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[2], **रमेश बाबूराव देवस्कर और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[3], **दिनेश जायसवाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[4], **राजस्थान राज्य** बनाम **बाबू मीना**[5], तथा **मोहम्मद अली** उर्फ **गुड्डू** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[6] के निर्णयों का अवलंब लिया गया है और यह दलील प्रस्तुत की गई है कि विचारण न्यायालय द्वारा निर्दिष्ट किए गए अनुसार दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन दोषसिद्धि कायम रखे जाने योग्य नहीं है तथा यथानिर्दिष्ट पारिणामिक दंडादेश को भी अपास्त किया जाए ।

7. दूसरी ओर, विद्वान् अपर लोक अभियोजक ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों का समर्थन करने के लिए जोरदार रूप से प्रयास किया है जिसके अंतर्गत अन्य बातों के साथ-साथ, यह तर्क प्रस्तुत किया है कि बलात्संग के अपराध के मामले में दोषसिद्धि एकमात्र अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य से ही साबित की जा सकती है । इसलिए, दोषी पाए जाने के संबंध में यथा अभिलिखित निष्कर्षों तथा विचारण न्यायालय द्वारा निदेशित दंडादेश में कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । इसके अतिरिक्त, प्रस्तुत की गई इस दलील में भी कोई सार नहीं है कि बलात्संग के आरोप को चिकित्सीय साक्ष्यों द्वारा मिथ्या बताया गया है क्योंकि इस संबंध में अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत परिसाक्ष्य पर्याप्त है, जो विश्वसनीय है और विश्वास की भावना का संचार करता है । इस प्रकार वर्तमान अपील को खारिज किया जाना चाहिए तथा अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि की जानी चाहिए । अपने प्रतिवाद के समर्थन में विद्वान् लोक अभियोजक ने **बी. सी. देवा** उर्फ **द्यावा** बनाम **कर्नाटक राज्य**[7] तथा **सुधांशु शेखर साहू**

---

[1] (2002) 10 एस. सी. सी. 743 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2136.

[2] (2006) 9 एस. सी. सी. 713 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2006 एस. सी. 409.

[3] (2007) 13 एस. सी. सी. 501 = 2007 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6475.

[4] ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1540.

[5] 2013 क्रिमिनल ला जर्नल 1634 (एस. सी.).

[6] (2015) 7 एस. सी. सी. 272 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 1711.

[7] (2007) 12 एस. सी. सी. 122 = 2007 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4857.

बनाम **उड़ीसा राज्य** (उपरोक्त) वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है ।

8. दोनों पक्षकारों की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल को सुनने के पश्चात् हमने विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों का परिशीलन किया है । इससे यह प्रकट होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य का अवलंब लेते हुए इस आरोप को स्वीकार किया कि अभियुक्त पीड़िता को अपने यान में बैठाकर एक निर्जन स्थान पर ले गया तथा वहां उसने उसके वस्त्रों को उतारकर उसके साथ बलात्संग किया । अभियोक्त्री ने न्यायालय में अभियुक्त की शिनाख्त की है क्योंकि वह उससे अपनी बहिन के मित्र के माध्यम से परिचित थी । इसके अतिरिक्त, विद्वान् विचारण न्यायालय ने उच्चतम न्यायालय के निर्णयों को निर्दिष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य पर विश्वास किया जा सकता है । इसके अतिरिक्त, यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि अभि. सा. 2 (अभियोक्त्री के पिता), अभि. सा. 5 (अभियोक्त्री का मित्र), अभि. सा. 6 (अभियोक्त्री की बहिन), अभि. सा. 8 (अभियोक्त्री की बहिन का मित्र) द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य तथा विभिन्न दस्तावेज भी विश्वसनीय थे । परिसाक्ष्यों एवं प्रतिपरीक्षा के कुछ अंशों को निर्णय में पुन: प्रस्तुत किया गया है । इसके अतिरिक्त, यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि अभियोक्त्री अपने पिता और छोटी बहिन के साथ निवास कर रही थी तथा अभियुक्त के साथ उसकी जान-पहचान थी । तथापि, पीड़िता ने उस समय अभियुक्त पर विश्वास किया जब उसने उससे कुछ सहायता मांगी और वह उससे मिलने के लिए पुताली बाग पहुंच गई । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में हुए विलंब का कारण मानसिक आघात अथवा अपराधबोध या शर्म की भावना हो सकता है, क्योंकि ऐसे समय पर उसकी लज्जा भंग की गई थी जब उसका विवाह शीघ्र ही अभि. सा. 4 के साथ होने वाला था । इसके पश्चात् यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि प्रतिरक्षा पक्ष ऐसा कोई अकाट्य और ठोस कारण बताने में असमर्थ रहा है जिसके कारण पीड़िता ने अभियुक्त को अपराध कारित करने के लिए अपराधी के रूप में नामित्त किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने

अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 365 एवं 506 के अधीन आरोप से दोषमुक्त कर दिया है लेकिन उसे दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप के लिए सिद्धदोष ठहराया गया है ।

9. न्यायालय में अभियुक्त के द्वारा कारित अपराध साबित करने के मामले में यह कहना अनुचित नहीं होगा कि आपराधिक विधि का मूल सिद्धांत यह है कि अभियोजन पक्ष को अपना मामला स्वयं साबित करना होता है तथा अभियोजन पक्ष प्रतिरक्षा पक्ष की कमियों का लाभ नहीं उठा सकता है । किसी अभियुक्त द्वारा न्यायालय में अपने अपराध को स्वीकार करने के मामले को छोड़कर, अभियोजन पक्ष द्वारा भार के निर्वहन के पश्चात् जब यह भार स्थानांतरित हो जाता है तो उसकी प्रतिरक्षा पर विचार किया जा सकता है । न्यायालय को यह निष्कर्ष अभिलिखित करना होता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोप को सभी सुसंगत संदेहों से परे साबित कर दिया गया है । इसके पश्चात्, अभियुक्त पर यह भार अंतरित होता है तथा न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध ठहराते हुए या दोषमुक्त करते समय अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत प्रतिरक्षा पर विचार कर सकता है । अपीली प्रक्रम पर उच्च न्यायालय विधि के उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों के न्यायोचित्य की परीक्षा कर सकता है तथा यदि साक्ष्य के मूल्यांकन अथवा पुनर्मूल्यांकन के आधार पर निष्कर्ष अनुचित या अवैध हुए तो वह उन निष्कर्षों को उलट सकता है । अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत प्रतिरक्षा पर तभी विचार किया जा सकता है जब अभियोजन पक्ष मामले को उचित संदेह से परे साबित कर दे । उक्त आधारिक मापदंडों के आधार पर आक्षेपित निर्णय की वैधता तथा औचित्य की परीक्षा की जानी अपेक्षित है ।

10. अभिलेख पर रखे गए तथ्यों और साक्ष्यों का मूल्यांकन करने से पूर्व पक्षकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेलों द्वारा अवलंबित निर्णयों पर चर्चा की जा सकती है । **दिनेश जायसवाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में अपीलार्थी काउंसेल के अनुसार, उच्चतम न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया था कि अभियोक्त्री का

एकमात्र परिसाक्ष्य विश्वसनीय नहीं था । अभियोक्त्री के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य की अभिपुष्टि नहीं हुई थी तथा उसकी कहानी में असंभावनाओं को ध्यान में रखते हुए अपील को स्वीकार करके दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया गया था । **राजस्थान राज्य** बनाम **बाबू मीना** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि अभियोक्त्री द्वारा किया गया कथन कदापि भी विश्वसनीय नहीं है या पूर्ण रूप से अविश्वसनीय है तथा बलात्संग के आरोप का समर्थन करने हेतु कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है तो अपीलार्थी को अभियोक्त्री के द्वारा प्रस्तुत किए गए एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध ठहराना युक्तियुक्त नहीं होगा । उच्चतम न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य को तीन प्रवर्गों में रखा जा सकता है, प्रथम, पूर्ण रूप से विश्वसनीय, द्वितीय, पूर्ण रूप से अविश्वसनीय तथा तृतीय, न तो पूर्ण रूप से विश्वसनीय और न ही पूर्ण रूप से अविश्वसनीय । इसकी व्याख्या करते हुए यह संप्रेक्षण किया गया कि यदि परिसाक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय है तो एकमात्र परिसाक्ष्य का अवलंब लिया जा सकता है अन्यथा अभियोजन पक्ष के अन्य साक्षियों से इसकी अभिपुष्टि की ईप्सा की जानी चाहिए । **मोहम्मद अली** उर्फ **गुड्डु** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इस बात में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि हो सकती है, यहां तक कि अभिपुष्टि के बिना भी दोषसिद्धि की जा सकती है ऐसा उस समय किया जा सकता है जहां उक्त परिसाक्ष्य स्पष्ट प्रकृति का, संदेहों से मुक्त तथा आलोचना से परे हो । यह संप्रेक्षण किया गया कि अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य को किसी आहत साक्षी की तुलना में उच्चस्तरीय माना जाता है । किन्तु यदि परिसाक्ष्य विश्वसनीय नहीं है तथा संदेहास्पद है तो अभिपुष्टि की अपेक्षा की जानी चाहिए ।

11. प्रतिरक्षा पक्ष के विद्वान् अपर लोक अभियोजक ने **बी. सी. देवा** उर्फ **द्यावा** बनाम **कर्नाटक राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए

गए निर्णय का अवलंब लिया है, जिसमें उच्चतम न्यायालय ने अभियोक्त्री का एकमात्र परिसाक्ष्य और उसके पश्चात्वर्ती आचरण के आधार पारित दोषसिद्धि के निर्णय की अभिपुष्टि की है और साथ ही यह अभिनिर्धारित किया है कि उक्त परिसाक्ष्य दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध कारित करने के लिए अभियुक्त की दोषसिद्धि का आधार बनाने हेतु पर्याप्त था । **सुधांशु शेखर साहू** बनाम **उड़ीसा राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि यदि अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत एकमात्र परिसाक्ष्य सुरक्षित, विश्वसनीय और स्वीकार्य है तो वह अभियुक्त को दोषसिद्ध ठहराने के लिए पर्याप्त है ।

12. अपीलार्थी और साथ ही प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेलों द्वारा जिन उपरोक्त निर्णयों का अवलंब लिया गया है उसको ध्यान में रखते हुए यह सुस्पष्ट है कि यदि अभियोजन पक्ष का एकमात्र परिसाक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय, सुरक्षित तथा दोषसिद्धि का आधार बनने हेतु योग्य है तो दंड संहिता की धारा 376 के अंतर्गत अपराध कारित के लिए उसका सुरक्षित रूप से अवलंब लिया जा सकता है किन्तु यदि परिसाक्ष्य कुटुम्ब के अस्वाभाविक आचरण तथा साक्ष्य के संदेह और अस्पष्टता अंतर्निहित होने के कारण अभियोजन के पक्षकथन पर संदेह उत्पन्न करता है तो अन्य साक्ष्यों की अभिपुष्टि के बिना उसका अवलंब नहीं लिया जा सकता है, विशेषकर तब जब यह अभियोजन पक्ष की कहानी में कतिपय असंभावनाओं को उपदर्शित करते हुए उसके संबंध में संदेह उत्पन्न करता है ।

13. **येरूमाल्ला लटचय्या** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने 8 वर्ष की एक अभियोक्त्री के मामले पर कार्यवाही करते हुए पीड़िता के शरीर पर बलात्संग किए जाने संबंधी कोई चिह्न नहीं पाया था । उक्त मामले में चिकित्सा साक्ष्य प्रासंगिक पाया गया था तथा यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि अभियोक्त्री के द्वारा किया गया कथन चिकित्सा साक्ष्य के माध्यम से मिथ्या साबित होता है तो दोषसिद्धि सुरक्षित नहीं है । **रमेश बाबूराव देवस्कर और अन्य**

बनाम **महाराष्ट्र राज्य** (उपरोक्त) वाले मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में हुई देरी तथा मजिस्ट्रेट को प्रति भेजने में हुई देरी के महत्व की परीक्षा की गई और यह अभिनिर्धारित किया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 की अपेक्षा का अनुपालन नहीं किया गया है । उक्त दो निर्णयों को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में हुए विलंब के साथ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 का अनुपालन न करना सारवान् त्रुटि है और इससे किसी मामले में अभियुक्त की दोषसिद्धि प्रभावित हो सकती है । इसके साथ ही अगर अभियोक्त्री के द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य के आधार पर बलात्संग का आरोप चिकित्सा साक्ष्य के समर्थन के अभाव में विश्वसनीय नहीं पाया जाता है तो यह दोषसिद्धि को अपास्त करने का आधार हो सकता है माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि तथा पक्षकारों द्वारा अवलंबित विधि को ध्यान में रखते हुए वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करना अपेक्षित है ।

14. वर्तमान मामले में घटना तारीख 17 अप्रैल, 2019 को रात्रि 8.30 से 9.30 बजे के मध्य घटित हुई । अभियोक्त्री के पिता अभि. सा. 2 द्वारा तारीख 18 अप्रैल, 2019 को रात्रि 10.30 बजे रानीपूल पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ, यह कथन किया गया था कि जब पीड़िता घर पर थी तब अभियुक्त ने मोबाइल फोन के माध्यम से उसकी पुत्री को पुताली बाग, 32 मील पर बुलाया तथा उसके पश्चात् उसने बलपूर्वक उसका इनोवा यान सं. एस. के. 01 जेड 0702 में व्यपहरण कर लिया । अभियुक्त ने यान को सेंट्रेल लॉक करने के पश्चात् यान का चालन रेडोंग, नई सड़क की तरफ किया तथा उसने तेज संगीत बजाना शुरू कर दिया । अभियुक्त ने उसके शरीर को स्पर्श किया तथा उसके साथ गलत कृत्य किया जो उसकी जानकारी में आया, इसलिए वह अभियुक्त को दंडित करने तथा विधि के अनुरूप अपनी पुत्री को सुरक्षा देने के लिए रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहा है । न्यायालय में अभि. सा. 2 के कथन के अनुसार यह स्पष्ट है कि उसका दामाद उसके घर आया और उसे रानीपूल पुलिस

थाने जाने के लिए कहा । जब उन्होंने उससे पूछा तो उसने बताया कि अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ बलात्संग किया था । हालांकि उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-1) पर विद्यमान अपने हस्ताक्षरों को स्वीकार किया है किन्तु प्रतिपरीक्षा के दौरान उसने यह कथन किया कि अभियोक्त्री (पुत्री) ने उसे घटना के बारे में कुछ नहीं बताया था । उसके द्वारा प्रस्तुत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अर्थात् प्रदर्श पी-1 उसके द्वारा नहीं लिखी गई थी । उसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तु के बारे में जानकारी नहीं थी । उसने यह भी स्वीकार किया कि उसके दामाद (अभि. सा. 4) ने घटना के बारे में जानकारी दिए जाने के समय उसे अभियुक्त व्यक्ति का नाम नहीं बताया था । उसने यह भी स्वीकार किया कि उसका दामाद (अभि. सा. 4) कभी-कभी उसके घर पर निवास करता था क्योंकि उस सुसंगत समय में उसकी सगाई उसकी पुत्री के साथ हुई थी तथा अभियोक्त्री का विवाह (अभि. सा. 4) के साथ हुआ है । इस प्रकार से यह स्पष्ट है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट पिता द्वारा नहीं लिखी गई थी तथा उसे अभियुक्त का नाम और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की अंतर्वस्तु के संबंध में जानकारी नहीं थी । यद्यपि, अभियोक्त्री उसके साथ निवास कर रही थी, इसके बावजूद भी घटना के बारे में उसने उसे कुछ नहीं बताया । अभि. सा. 4 ने अपने द्वारा न्यायालय में प्रस्तुत किए गए अभिसाक्ष्य में यह कथन किया कि पुलिस कर्मियों ने उसे अभिभावक को बुलाने का अनुदेश दिया था, इसलिए उसने और राहुल (अभि. सा. 5) ने पिता (अभि. सा. 2) को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए घटना के संबंध में सूचित किया । राहुल शर्मा (अभि. सा. 5) के अभिसाक्ष्य में केवल यह कथन किया गया है कि पीड़िता के अभिभावक ने रानीपूल पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई थी, जिसे सिंगताम पुलिस थाने को अग्रेषित किया गया था । इसलिए, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने वाले व्यक्ति को यह ज्ञात नहीं था कि अभियुक्त कौन है और क्या घटना घटी है । इसके अतिरिक्त उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में दिए गए विवरण को उस रीति से साबित नहीं किया है जैसा कि उसमें कथन किया गया है ।

15. बलात्संग की कहानी के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा यह कथन किया गया है कि तारीख 17 अप्रैल, 2019 को रात्रि लगभग 8.30 बजे जब पीड़िता की बहिन (अभि. सा. 6) पीड़िता के मोबाइल फोन की जांच कर रही थी उसी समय अभियुक्त का फोन आया और उसने पीड़िता की बहिन को पुताली बाग में आकर मिलने के लिए कहा । उनका पक्षकथन यह है कि पीड़िता ने अपना फोन उससे छीन लिया और अभियुक्त को यह कहते हुए उत्तर दिया कि "मैं क्यों आऊं" । अभियोजन पक्ष का यह भी पक्षकथन है कि उसने मोबाइल फोन का स्पीकर ऑन किया था, और तभी अभियुक्त ने पूछा कि क्या वह उससे प्रेम करती है या नहीं । लेकिन अभियोक्त्री ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया । उसी समय अभियोक्त्री की बहिन (अभि. सा. 6) ने अभियुक्त को चिढ़ाते हुए 500/- रुपए की मांग की और उसे वापस करने का वचन भी दिया । इस पर अभियुक्त ने सहमति जताई लेकिन दोनों में से किसी एक को व्यक्तिगत रूप से आकर राशि ले जाने के लिए कहा । वर्तमान घटना से एक माह पूर्व अभियोक्त्री और अभियुक्त के मध्य जान-पहचान हुई थी । उस समय पीड़िता की बहिन ने अभियोक्त्री को अभियुक्त का परिचय अपनी सहेली के प्रेमी के रूप में कराया था । उस समय अभियोक्त्री का मोबाइल फोन नम्बर अभियुक्त को दे दिया गया था, क्योंकि पीड़िता की बहिन के पास मोबाइल फोन नहीं था । ऐसी परिस्थिति में घटना वाले दिन अभियुक्त ने अभियोक्त्री के मोबाइल पर फोन किया और पीड़ित तथा पीड़िता की बहिन, दोनों ने उससे बात की ।

16. इस संबंध में, अभियोक्त्री की बहिन (अभि. सा. 6) का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन किया गया कथन भी प्रासंगिक है, जिससे यह पता चलता है कि अभियोजन पक्ष ने वर्तमान मामले को किस प्रकार से प्रस्तुत किया है । इससे यह भी उपदर्शित होता है कि अभियुक्त पूर्व में उससे मिल चुका था । पीड़िता की बहिन ने उसे अभियुक्त से अपनी सहेली के प्रेमी के रूप में मिलवाया था । उसने आगे यह भी कथन किया है कि उसकी अभियुक्त से बातचीत चल रही थी चूंकि पीड़िता की बहिन के पास मोबाइल फोन नहीं था, इसलिए पीड़िता

का मोबाइल फोन नंबर अभियुक्त को दिया गया था । पीड़िता की बहिन की सहेली (अभि. सा. 8) ने उस दिन हुई मुलाकात के बारे में अपना अभिसाक्ष्य प्रस्तुत किया है । उसने यह कथन किया कि अभियुक्त उसका प्रेमी था । उसने पीड़िता का मोबाइल नंबर अभियुक्त को देने के बारे में कुछ नहीं कहा । इस संबंध में अभियोक्त्री ने यह कथन किया है कि अभियुक्त ने उससे निमतार गिरजाघर में मुलाकात की । न्यायालय में अभिलिखित किए गए कथन के अनुसार अभि. सा. 6 ने यह कहा है कि अभि. सा. 8 ने अभियुक्त का मोबाइल नंबर पीड़िता के मोबाइल में सुरक्षित कर दिया था तथा किसी भी आपात स्थिति में पीड़िता से सम्पर्क करने को कहा था । यद्यपि, पुलिस के समक्ष (अभि. सा. 1, अभि. सा. 6 तथा अभि. सा. 8 किसी का भी) में से किसी का भी पक्षकथन यह नहीं है । इसलिए पीड़िता की बहिन की सहेली के माध्यम से मोबाइल नंबर मांगने की कहानी को भिन्न रूप से उपवर्णित किया गया है क्योंकि अभियुक्त पीड़िता की बहिन की सहेली का प्रेमी था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन लेखबद्ध किए गए तथा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए उनके कथनों के अनुसार यह पता चलता है कि पीड़िता की बहिन अभियुक्त के सम्पर्क में थी तथा बाद में पीड़िता भी अभियुक्त के सम्पर्क में आई थी और वे दोनों अभियुक्त के साथ बातचीत कर रही थी । ऐसा प्रतीत होता है कि अभियुक्त पीड़िता की बहिन की सहेली का प्रेमी था, यह एक मनगढ़ंत कहानी है । इसलिए जैसा कि अभियोजन पक्ष ने कथन किया है अभियुक्त का मोबाइल नम्बर पीड़िता के पास कैसे आया, इस तथ्य को अभियोजन पक्ष द्वारा संदेह से परे साबित नहीं किया गया है ।

17. पीड़िता की बहिन द्वारा पीड़ित के मोबाइल फोन की जांच करने और पुलिस द्वारा बताई गई अभियुक्त या पीड़िता के साथ उसकी बातचीत की कहानी भी न्यायालय में साबित नहीं हुई है । पीड़िता की बहिन (अभि. सा. 6) ने यह कथन किया है कि उसे अभियुक्त का फोन आया था और उसने उसे किसी काम के लिए बटरफ्लाई उद्यान में मिलने के लिए कहा था, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया था । अभियुक्त द्वारा बार-बार फोन करने के कारण पीड़िता ने मोबाइल

उठाया और अभियुक्त से बात करते-करते वह घर से बाहर चली गई । अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) ने यह कथन किया है कि उसे अभियुक्त ने बटरफ्लाई उद्यान में बुलाया था क्योंकि उसे सहायता की आवश्यकता थी । तत्पश्चात्, वह जब वहां पहुंची तो उसने अभियुक्त को नशे की हालत में देखा । इस प्रकार अभियोजन पक्ष की कहानी जिसमें अभियुक्त द्वारा पीड़िता को मोबाइल पर फोन करना, पीड़िता की बहिन अभि. सा. 6 द्वारा मोबाइल फोन की जांच करना, अभियुक्त द्वारा उससे यह पूछना कि क्या "वह उससे प्यार करती है या नहीं" तथा पीड़िता की बहिन द्वारा उसे चिढ़ाते हुए 500/- रुपए की मांग करना तथा पीड़िता द्वारा उक्त राशि प्राप्त करने हेतु जाने की कहानी, अभि. सा. 1 (पीड़िता) तथा अभि. सा. 6 (पीड़िता की बहिन) के परिसाक्ष्यों से साबित नहीं हुई है । इसलिए अभियोजन पक्ष के द्वारा प्रस्तुत साक्षियों के कथन से अभियोजन का पक्षकथन ठोस रूप से साबित नहीं हुआ है ।

18. अब पीड़िता के इस कथन की परीक्षा की जा सकती है कि पुताली बाग पहुंचने के पश्चात् अभियुक्त ने उसे यान में बैठने को कहा था या फिर वह स्वयं अपनी इच्छा से यान की अगली सीट पर बैठ गई थी । इसके पश्चात् अभियुक्त ने यान के चारों दरवाजों को सेंट्रली लॉक कर दिया तथा पीड़िता को बलपूर्वक अपने कब्जे में लेकर उसके साथ बलात्संग किया । अभियोक्त्री (अभि. सा. 1) ने अपने द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य में इस पक्षकथन को स्थापित करने का प्रयास किया है कि अभियुक्त उस समय नशे की हालत में था और उसने उसे यान की अगली सीट पर बैठने के लिए कहा, लेकिन उसने मना कर दिया और उसने उससे वहां बाग में बुलाने का कारण पूछा । हालांकि अभियुक्त के आग्रह पर वहां स्वयं यान की अगली सीट पर बैठ गई । इसके पश्चात्, अभियुक्त ने यान का दरवाजा बंद कर दिया और उसने तेज आवाज में संगीत बजाना शुरू कर दिया । वह यान को नवनिर्मित सड़क मार्ग से रानीपूल की ओर ले गया और वहां पहुंचकर उसके यान को एक एकांत स्थान पर खड़ा करने के पश्चात् पीड़िता से चुंबन मांगा । पीड़िता द्वारा इनकार करने तथा उसकी प्रेमिका (अभि. सा. 8) को यह सब बताने की

धमकी देने पर अभियुक्त ने सीट को पीछे करके पीड़िता का मोबाइल फोन ले लिया । इसके पश्चात्, उसके वस्त्रों को उतारकर उसके साथ बलात्संग किया । इसके पश्चात् अभियुक्त चालक वाली सीट पर ही सो गया । पीड़िता, जो गहरे आघात में थी, ने किसी तरह से अपने वस्त्र पहने और यान का दरवाजा खोलकर बाहर आई और अपना मोबाइल फोन लेकर घटनास्थल से भागने की कोशिश की । कुछ देर पश्चात्, अभियुक्त फिर से वहां पहुंचा और उसने पीड़िता से कहा कि वह उसे उसी स्थान पर छोड़ देगा जहां से उसने उसे यान में बैठाया था । अभियुक्त ने पीड़िता को धमकी दी कि अगर उसने यह कहानी किसी को भी बताई तो वह उसे जान से मार देगा । इस प्रकार न्यायालय में अभिलिखित कथन के माध्यम से वास्तव में अभियोजन पक्ष की कहानी में सुधार किए गए हैं । उसने यह कथन नहीं किया था कि बलात्संग करते समय अभियुक्त ने पीड़िता की गर्दन पर चाकू रखा था ।

19. अभियोक्त्री की बहिन अभि. सा. 8 जो उसके साथ थी, उसने इस संबंध में अलग कहानी बताई है । जैसा कि उसके द्वारा कथन किया गया है कि उसे अभियुक्त ने बुलाया था लेकिन अभियुक्त का फोन पीड़िता ने उठाया था और उससे बात करते हुए वह पुताली बाग की ओर चली गई थी । अभि. सा. 6 ने अपने पिता के मोबाइल फोन से उसे बार-बार फोन करने का प्रयास किया लेकिन उसने फोन नहीं उठाया । अंतत: रात्रि के लगभग 9.15 बजे अभियुक्त ने पीड़िता के मोबाइल फोन से कॉल का जवाब दिया । अभियुक्त ने क्या उत्तर दिया था वह उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य में नहीं बताया गया है । इसके पश्चात् अभि. सा. 6 स्वयं पीड़िता को देखने और उससे मिलने बटरफ्लाई उद्यान पहुंची । उसने देखा कि एक सफेद रंग की इनोवा कार आ रही है, जिसमें पीड़िता बैठी हुई है । यान का दरवाजा खोलने के पश्चात् वह बाहर आई लेकिन वह सामान्य स्थिति में नहीं थी । वह तनावग्रस्त दिख रही थी । अभि. सा. 6 ने अपनी बहिन से कुछ भी नहीं पूछा । उपरोक्त वर्णन न तो अभियोजन का पक्षकथन है और न ही यह अभियोक्त्री के कथन के अनुसार है । पीड़िता के साथ क्या घटित हुआ

और घटना से पूर्व या पश्चात् की परिस्थितियों के बारे में आरोप पत्र में अभियोजन पक्ष द्वारा जो कहानी उपदर्शित की गई है, वह सारवान् रूप से अभियोजन पक्ष के साक्षियों द्वारा न्यायालय में प्रस्तुत किए गए कथनों से भिन्न है । अभियोक्त्री की बहिन (अभि. सा. 6) जो अभियुक्त द्वारा फोन किए जाने के समय से ही अभियोक्त्री के साथ थी, उसने ऊपरवर्णित किए गए अनुसार एक अलग कहानी सुनाई है । इसलिए अभियोजन के पक्षकथन को ध्यान में रखते हुए अभियोक्त्री का एकमात्र परिसाक्ष्य ठोस प्रतीत नहीं होता है यहां तक कि बलात्संग के आरोप की रीति भी अत्यधिक ठोस प्रतीत नहीं होती है । उपरोक्त के अतिरिक्त, न्यायालय में किए गए कथन में घटनास्थल रेडोंग नया मार्ग की बजाय रानीपूल मार्ग की ओर बताया गया था । स्थल-नक्शे (प्रदर्श पी-25) के अनुसार घटनास्थल को निर्दिष्ट नहीं किया गया है । स्थल-नक्शे का परिशीलन करने से यह स्पष्ट होता है कि पुताली बाग से एक ओर की सड़क रानीपूल की ओर जाती है तथा दूसरी सिंगताम की ओर, लेकिन घटनास्थल अर्थात् रेडोंग नया मार्ग को इसमें कहीं भी विनिर्दिष्ट नहीं किया गया है । इस प्रकार स्थल-नक्शे में घटनास्थल भी स्पष्ट नहीं है ।

20. उपरोक्त चर्चा के अनुसार अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य का अवलंब लेना सुरक्षित नहीं है तथा चिकित्सीय साक्ष्य के माध्यम से इसकी अभिपुष्टि बलात्संग के अभिकथन को साबित करने के लिए प्रासंगिक हो सकती है । उपलब्ध सामग्रियों के अनुसार, अभियोक्त्री की चिकित्सीय परीक्षा डॉ. मधु श्वेता शर्मा (अभि. सा. 13) द्वारा की गई थी जो प्रदर्श पी-5 के रूप में चिह्नित है । उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए परिसाक्ष्य के अनुसार यह स्पष्ट है कि पीड़िता की चिकित्सा परीक्षा घटना घटित होने के समय से 48 घंटे के भीतर की गई थी । परीक्षा के समय पीड़िता के गुप्तांगों पर कोई क्षति दिखाई नहीं दी थी । डॉ. मधु श्वेता शर्मा ने अपनी यह राय प्रस्तुत की कि अगर बलात्संग 48 घंटे के भीतर हुआ है तो पीड़िता के गुप्तांगों पर कुछ क्षतियों के निशान मिलने चाहिए थे । पीड़िता की आंतरिक परीक्षा के दौरान उसका योनिच्छद भंग

पाया गया जो लगभग एक महीने पुराना हो सकता था । पीड़िता के शरीर पर संघर्ष का कोई चिह्न विद्यमान नहीं था । अभि. सा. 13 ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह यह नहीं बता सकती है कि परीक्षा के समय से 48 घंटे पूर्व पीड़िता किसी लैंगिक मैथुन की क्रिया में शामिल हुई थी या नहीं । अभि. सा. 13 ने दो योनिक लोप, अर्थात् एक मुख और एक लार का नमूना, दो नाखून के कतरन, जघन बाल का नमूना, सिर के बाल का नमूना तथा रक्त के नमूनों की तीन शीशियां अभिगृहीत की । इन सभी को न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला परीक्षा हेतु भेज दिया गया । तथापि, परीक्षा के दौरान कोई भी आपत्तिजनक सामग्री नहीं मिली । इसलिए, बलात्संग के आरोप को चिकित्सीय साक्ष्य से समर्थन प्राप्त नहीं हुआ है ।

21. श्री प्रेम कुमार शर्मा (अभि. सा. 11) जो कनिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी थे, न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला सरमसा से आए थे । उन्होंने चिकित्सा रिपोर्ट प्रदर्श पी-16 को साबित किया है और उक्त रिपोर्ट के अनुसार बलात्संग किए जाने के विषय में कोई अभिपुष्टि नहीं है । यह भी प्रासांगिक है कि यान को भी परीक्षा के लिए भेजा गया था, क्योंकि अभियोजन का पक्षकथन यह था कि बलात्संग के पश्चात् शुक्राणु बाहर स्खलित हुए थे, तथापि, यह स्खलन यान में हुआ हो सकता है लेकिन यान की रिपोर्ट में भी कुछ आपत्तिजनक नहीं पाया गया । उनके कथन के अनुसार पीड़िता के पिछले भाग से लिए गए योनिक लेप स्लाइड को प्रयोगशाला बीआईओ 471(बी) के रूप में चिह्नित किया गया है । आगे के भाग से लिए गए योनिक लेप स्लाइड को प्रयोगशाला में बीआईओ 471(सी) के रूप में चिह्नित किया गया है । पीड़िता के कपोल लेप स्लाइड को प्रयोगशाला में बीआईओ 471(डी) के रूप में चिह्नित किया गया है । पीड़िता के मूत्र के नमूने को प्रयोगशाला में बीआईओ 471(ई) के रूप में चिह्नित किया गया है । पीड़िता के मुख लेप को प्रयोगशाला में बीआईओ 471(एफ) के रूप में चिह्नित किया गया है । रिपोर्ट में दर्शाए गए नमूनों (प्रदर्शों) में न तो रक्त और न ही वीर्य पाया गया । पीड़िता के दाहिने हाथ के नाखून की कतरनों को प्रयोगशाला में

बीआईओ 471(जी) के रूप में चिह्नित किया गया । पीड़िता के बाएं हाथ के नाखून की कतरनों को प्रयोगशाला में बीआईओ 471(एच) के रूप में चिह्नित किया गया तथा पीड़िता के जघन बालों के नमूने को प्रयोगशाला में बीआईओ 471(आई) के रूप में चिह्नित किया गया है, जिस पर रिपोर्ट के अनुसार कोई बाहरी सामग्री नहीं पाई गई । पीड़िता के अंत:वस्त्रों जिन्हें बीआईओ 471(क्यू) के रूप में चिह्नित किया गया था रक्त या वीर्य नहीं पाया गया । इनोवा यान जिसे प्रयोगशाला में बीआईओ 471(आर) के रूप में चिह्नित किया गया था, उसमें न तो रक्त और न ही वीर्य या कोई अन्य बाहरी सामग्री अर्थात् बाल पाया गया । रिपोर्ट के अनुसार बीआईओ 471(ए) और 471(के) जो कि अभियुक्त का रक्त नमूना है, में रक्त समूह मेल खाता पाया गया । प्रदर्श बीआईओ 471(पी) जो अभियुक्त का जांघिया है, पर मानव रक्त पाया गया जो अभियुक्त के रक्त समूह का है जो मामले में एकमात्र अभियोगात्मक साक्ष्य नहीं हो सकता । उपर्युक्त बातों पर विचार करते हुए यह सुस्पष्ट है कि सीरम संबंधी परीक्षण में न तो अभियुक्त का रक्त समूह और न ही वीर्य पाया गया और जैसा कि अभियोजन पक्ष ने कथन किया है कि यान में भी कोई स्खलित वीर्य नहीं पाया गया था ।

22. उपरोक्त के अतिरिक्त अभियोजन पक्ष के पक्षकथन में अनेक खामियां हैं । अभियोजन पक्ष के अनुसार अभियुक्त ने पीड़िता (अभि. सा. 1) के साथ उसकी बहिन (अभि. सा. 6) के मोबाइल पर फोन करके उसे भी बुलाया था । अभियुक्त और पीड़िता के मोबाइल का सीडीआर मंगाकर मोबाइल फोन कॉल्स का ब्यौरा एकत्र नहीं किया गया । बलात्संग के पश्चात् पीड़िता ने अपने मित्र अर्थात् राहुल (अभि. सा. 5) को सूचना भेजी थी । राहुल की सीडीआर और संदेश संबंधी ब्यौरे भी पेश नहीं किए गए । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार पीड़िता के पति (अभि. सा. 4) ने भी उसी दिन रात्रि को पीड़िता को फोन किया था, लेकिन उसका भी सीडीआर पेश नहीं किया गया है । अभियोक्त्री का आचरण अस्वाभाविक था । घटना के पश्चात् वापस आने पर वह अपनी बहिन से मिली, उस समय उनके पिता भी घर पर मौजूद थे, लेकिन

उसने उन दोनों से घटना के विषय में कुछ नहीं कहा । यह भी अभिकथन किया गया है कि बलात्संग के समय यान के अंदर अभियोक्त्री की गर्दन पर चाकू रखकर धमकी दी गई थी, लेकिन अभियोजन पक्ष ने चाकू को भी अभिगृहीत नहीं किया है और न ही उसे पेश किया है । अभियोजन पक्ष की कहानी यह है कि जब अभियोक्त्री ने यान में प्रवेश किया तभी सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली द्वारा यान के सभी दरवाजों को बंद कर दिया गया था । लेकिन यान की कोई तकनीकी रिपोर्ट पेश नहीं की गई जिससे यह साबित हो सके कि यान में सेंट्रल लॉकिंग प्रणाली थी । इस मामले में डीएनए परीक्षण भी नहीं किया गया है, प्रमुख रूप से तब जब न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला परीक्षण से अभियोजन पक्ष की कहानी के अनुसार अपराध का कारण प्रकट नहीं हो सका था । इसके अतिरिक्त, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के उपबंधों के अनुपालन में भी 24 घंटे के भीतर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट नहीं भेजी गई । अभियुक्त के शरीर पर क्षतियां पाई गई थीं, जैसा कि उसकी चिकित्सीय रिपोर्ट प्रदर्श-15 से ज्ञात होता है, लेकिन इसका कोई स्पष्टीकरण अभिलेख पर मौजूद नहीं है । ये सभी तथ्य अभियोजन के पक्षकथन तथा अन्वेषण की रीति के संबंध में भी संदेह उत्पन्न करते हैं । ये सभी कमियां सामूहिक रूप से अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक हैं, जो कि अभियुक्त के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन किए गए अपराध के संबंध में आरोप के लिए अभियुक्त के दोष को साबित करने में असफल रहा है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा दंड संहिता की धारा 365 तथा 506 के अधीन अभियुक्तों को दोषमुक्त करते समय इन सभी पहलुओं पर विचार किया गया है ।

23. ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय की राय है कि अभियोक्त्री द्वारा प्रस्तुत किया गया परिसाक्ष्य ठोस प्रकृति का नहीं है, इसलिए अभियुक्त के विरुद्ध दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप साबित करने के लिए पीड़िता के द्वारा दिए गए परिसाक्ष्य का अवलंब लेना सुरक्षित नहीं है । इसके अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष के

साक्षियों के द्वारा किए गए कथनों से अभियोजन का पक्षकथन साबित नहीं होता है । अभियोजन पक्ष के साक्षियों ने न्यायालय में अभियोजन के पक्षकथन से अलग कहानी को प्रकट किया है । जैसा कि चर्चा की गई है कि अभियोक्त्री का एकमात्र परिसाक्ष्य विश्वस्त प्रकृति का नहीं है तथा चिकित्सा और वैज्ञानिक साक्ष्यों से भी वह मिथ्या साबित हुआ है । अभिलेख पर लाई गई सामग्री के अनुसार वर्तमान मामला या तो सम्मति का या फिर मिथ्या रूप से फंसाने का मामला प्रतीत होता है । उक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह संप्रेक्षण किया गया कि विद्वान् विचारण न्यायालय साक्ष्यों को सही परिप्रेक्ष्य में समझने में विफल रहा है और मूल सिद्धांतों के प्रतिकूल, बिना ठोस साक्ष्य के दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोपों को सही ठहराया है । इसलिए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि बलात्संग के आरोप को साबित करने के लिए विचारण न्यायालय के निष्कर्ष और निर्णय विकारग्रस्त एवं अविधिपूर्ण है और इसलिए वे अपास्त किए जाने के दायी हैं । तद्नुसार, विचारण न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया जाता है ।

24. पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन आरोप का दोषी ठहराए जाने के निर्णय तथा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित किए गए दंडादेश को अपास्त किया जाता है । तद्नुसार, यह अपील सफल होती है तथा इसे मंजूर किया जाता है । अभियुक्त को संदेह का लाभ देते हुए दंड संहिता की धारा 376(1) के अधीन दोषमुक्त किया जाता है । इसके परिणामस्वरूप, यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है और यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है तो उसे तुरंत कारागार से छोड़ दिया जाए ।

25. इस न्यायालय की रजिस्ट्री, आदेश और अभिलेख की प्रतिलिपि तुरंत विचारण न्यायालय को भेजेगी ।

अपील मंजूर की जाती है ।

जा./पु.

गतांक से आगे .....

संसद् के अधिनियम

अध्याय 10

सीमित दायित्व भागीदारी का संपरिवर्तन

55. फर्म से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन – कोई फर्म, इस अध्याय और दूसरी अनुसूची के उपबंधों के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो सकेगी ।

56. प्राइवेट कंपनी से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन – कोई प्राइवेट कंपनी इस अध्याय और तीसरी अनुसूची के उपबंधों के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो सकेगी ।

57. असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन – कोई असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी इस अध्याय और चौथी अनुसूची के उपबंधों के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो सकेगी ।

58. रजिस्ट्रीकरण और संपरिवर्तन का प्रभाव – (1) रजिस्ट्रार, यह समाधान हो जाने पर कि, यथास्थिति, किसी फर्म, प्राइवेट कंपनी या असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी ने दूसरी अनुसूची, तीसरी अनुसूची या चौथी अनुसूची के उपबंधों का अनुपालन किया है, इस अधिनियम के उपबंधों और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन रहते हुए, ऐसी अनुसूची के अधीन प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों को रजिस्टर करेगा और यह कथन करते हुए कि सीमित दायित्व भागीदारी प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट तारीख से ही इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत की गई है, ऐसे प्ररूप में, जो रजिस्ट्रार अवधारित करे, रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र जारी करेगा :

परंतु सीमित दायित्व भागीदारी, रजिस्ट्रीकरण की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर, यथास्थिति, संबंधित फर्म रजिस्ट्रार या कंपनी रजिस्ट्रार को, जिसके पास वह, यथास्थिति, भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) या कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) के उपबंधों के अधीन रजिस्ट्रीकृत थी, सीमित दायित्व भागीदारी के संपरिवर्तन और उसकी विशिष्टियों के बारे में ऐसी रीति और प्ररूप में सूचना देगी, जो केंद्रीय सरकार विहित करे ।

(2) ऐसे संपरिवर्तन पर, फर्म के भागीदार, यथास्थिति, प्राइवेट कंपनी या असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी के शेयरधारक वह सीमित दायित्व भागीदारी जिसमें ऐसी फर्म या ऐसी कंपनी संपरिवर्तित की गई है और सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार, यथास्थिति, दूसरी अनुसूची, तीसरी अनुसूची या चौथी अनुसूची के उन उपबंधों से आबद्ध होंगे जो उन्हें लागू हों ।

(3) ऐसे संपरिवर्तन पर, रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र की तारीख से ही संपरिवर्तन के प्रभाव ऐसे होंगे, जो, यथास्थिति, दूसरी अनुसूची, तीसरी अनुसूची या चौथी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं ।

(4) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, यथास्थिति, दूसरी अनुसूची, तीसरी अनुसूची या चौथी अनुसूची के अधीन जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट तारीख से ही, –

(क) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट नाम से इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत सीमित दायित्व भागीदारी होगी ;

(ख) यथास्थिति, फर्म या कंपनी में निहित सभी मूर्त (जंगम या स्थावर) और अमूर्त संपत्ति, यथास्थिति, फर्म या कंपनी से संबंधित सभी आस्तियां, हित, अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, बाध्यताएं और, यथास्थिति, फर्म या कंपनी के संपूर्ण उपक्रम किसी और आश्वासन, कार्रवाई या विलेख के बिना सीमित दायित्व भागीदारी में अंतरित हो जाएंगे और उसमें निहित हो जाएंगे ; और

(ग) यथास्थिति, फर्म या कंपनी विघटित हुई और, यथास्थिति, फर्म रजिस्ट्रार या कंपनी रजिस्ट्रार के अभिलेख से हटा दी गई समझी जाएगी ।

अध्याय 11

विदेशी सीमित दायित्व भागीदारी

59. विदेशी सीमित दायित्व भागीदारी – केंद्रीय सरकार, कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) के उपबंधों को ऐसे उपांतरणों सहित, जो समुचित प्रतीत हों, या ऐसी संरचना वाले ऐसे विनियामक तंत्र को, जो विहित किया जाए, लागू या सम्मिलित करके भारत में विदेशी

सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा कारबार के स्थान की स्थापना करने और उनमें अपने कारबार करने के संबंध में उपबंध करने के लिए नियम बना सकेगी ।

अध्याय 12

सीमित दायित्व भागीदारी का समझौता, ठहराव या पुनर्निर्माण

60. सीमित दायित्व भागीदारी का समझौता या ठहराव – (1) जहां, –

(क) किसी सीमित दायित्व भागीदारी और उसके लेनदारों के बीच ; या

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी और उसके भागीदारों के बीच,

समझौता या ठहराव का प्रस्ताव है, वहां अधिकरण, सीमित दायित्व भागीदारी या सीमित दायित्व भागीदारी के किसी लेनदार या भागीदार के या ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी की दशा में, जिसका परिसमापन किया जा रहा है, समापक के आवेदन पर ऐसी रीति में, जो विहित की जाए या अधिकरण निदेश दे, यथास्थिति, लेनदारों या भागीदारों का अधिवेशन बुलाए जाने, आयोजित और संचालित किए जाने का आदेश कर सकेगा ।

(2) यदि अधिवेशन में, यथास्थिति, लेनदारों या भागीदारों के मूल्य में तीन-चौथाई का प्रतिनिधित्व करने वाला बहुमत किसी समझौते या ठहराव के लिए सहमत हो जाता है तो समझौता या ठहराव, यदि अधिकरण द्वारा मंजूर किया गया हो, आदेश द्वारा, यथास्थिति, सभी लेनदारों या भागीदारों पर और सीमित दायित्व भागीदारी या ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी की दशा में, जिसका परिसमापन किया जा रहा है, समापक पर और सीमित दायित्व भागीदारी के अभिदायकर्ताओं पर भी आबद्धकर होगा :

परंतु अधिकरण द्वारा किसी समझौते या ठहराव को मंजूरी देने वाला कोई आदेश तभी किया जाएगा जब अधिकरण का यह समाधान हो जाता है कि सीमित दायित्व भागीदारी या ऐसे किसी अन्य व्यक्ति ने, जिसके द्वारा उपधारा (1) के अधीन आवेदन किया गया है, शपथपत्र द्वारा या अन्यथा अधिकरण को सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित

सभी तात्विक तथ्यों को, जिनके अंतर्गत सीमित दायित्व भागीदारी की नवीनतम वित्तीय स्थिति और सीमित दायित्व भागीदारी के संबंध में लंबित कोई अन्वेषण कार्यवाहियां भी हैं, प्रकट कर दिया है ।

(3) उपधारा (2) के अधीन अधिकरण द्वारा किया गया आदेश सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा, ऐसा आदेश किए जाने के पश्चात् तीस दिन के भीतर रजिस्ट्रार के पास फाइल किया जाएगा और वह इस प्रकार फाइल किए जाने के पश्चात् ही प्रभावी होगा ।

(4) यदि उपधारा (3) का अनुपालन करने में व्यतिक्रम किया जाता है, सीमित दायित्व भागीदारी और सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक अभिहित भागीदार, जुर्माने से, जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(5) अधिकरण, इस धारा के अधीन उसे आवेदन किए जाने के पश्चात्, किसी समय, सीमित दायित्व भागीदारी के विरुद्ध किसी वाद या कार्यवाही के आरंभ किए जाने या जारी रखे जाने को, ऐसे निबंधनों पर, जो अधिकरण ठीक समझे, आवेदन को अंतिम रूप से निपटाए जाने तक रोक सकेगा ।

61. समझौता या ठहराव लागू करने की अधिकरण की शक्ति – (1) जहां अधिकरण, धारा 60 के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी की बाबत समझौता या ठहराव को मंजूर करने वाला कोई आदेश करता है, वहां, –

(क) उसे समझौते या ठहराव के क्रियान्वयन का अधीक्षण करने की शक्ति होगी ; और

(ख) वह ऐसा आदेश किए जाने के समय या उसके पश्चात् किसी भी समय, किसी विषय के संबंध में ऐसे निदेश दे सकेगा या समझौते या ठहराव में ऐसे उपांतरण कर सकेगा, जो वह समझौते या ठहराव के समुचित कार्यकरण के लिए आवश्यक समझे ।

(2) यदि पूर्वोक्त अधिकरण का यह समाधान हो जाता है कि धारा 60 के अधीन मंजूर किया गया कोई समझौता या ठहराव उपांतरणों सहित या उसके बिना समाधानप्रद रूप में कार्यान्वित नहीं किया जा

सकता है तो वह, स्वप्रेरणा से या सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज में हितबद्ध किसी व्यक्ति के आवेदन पर, सीमित दायित्व भागीदारी के परिसमापन के लिए आदेश कर सकेगा और ऐसा आदेश इस अधिनियम की धारा 64 के अधीन किया गया आदेश समझा जाएगा ।

62. सीमित दायित्व भागीदारी के पुनर्निर्माण या समामेलन को सुकर बनाने के लिए उपबंध – (1) जहां किसी सीमित दायित्व भागीदारी और किन्हीं ऐसे व्यक्तियों के बीच, जो उस धारा में वर्णित हैं, प्रस्तावित समझौते या ठहराव की मंजूरी के लिए धारा 60 के अधीन कोई आवेदन अधिकरण को किया जाता है और अधिकरण को यह दर्शित किया जाता है कि –

(क) समझौता या ठहराव किसी सीमित दायित्व भागीदारी या सीमित दायित्व भागीदारियों के पुनर्निर्माण या किन्हीं दो या अधिक सीमित दायित्व भागीदारियों के समामेलन की स्कीम के प्रयोजनों या उसके संबंध में प्रस्तावित किया गया है ; और

(ख) स्कीम के अधीन संबंधित किसी सीमित दायित्व भागीदारी का (जिसे इस धारा में "अंतरक सीमित दायित्व भागीदारी" कहा गया है) संपूर्ण उपक्रम, संपत्ति या दायित्व या उसका कोई भाग किसी दूसरी सीमित दायित्व भागीदारी में (जिसे इस धारा में "अंतरिती सीमित दायित्व भागीदारी" कहा गया है) अंतरित किया जाना है,

वहां अधिकरण, समझौते या ठहराव की मंजूरी देने वाले आदेश द्वारा या पश्चात्वर्ती आदेश द्वारा निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेगा, अर्थात् :–

(i) किसी अंतरक सीमित दायित्व भागीदारी के संपूर्ण उपक्रम, संपत्ति या दायित्वों या उसके किसी भाग का अंतरिती सीमित दायित्व भागीदारी में अंतरण ;

(ii) किसी अंतरक सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध लंबित किन्हीं विधिक कार्यवाहियों का अंतरिती सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध जारी रखा जाना ;

(iii) किसी अंतरक सीमित दायित्व भागीदारी का परिसमापन के बिना विघटन ;

(iv) ऐसे किसी व्यक्ति के संबंध में किए जाने वाले उपबंध, जो ऐसे समय के भीतर और ऐसी रीति में, जो अधिकरण निदेश दे, समझौते या ठहराव से विसम्मति रखता है ; और

(v) ऐसे आनुषंगिक, पारिणामिक और अनुपूरक विषय, जो यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हों कि पुनर्निर्माण या समामेलन पूर्णतः और प्रभावी रूप से किया जाएगा :

परंतु किसी सीमित दायित्व भागीदारी के, जिसका परिसमापन किया जा रहा है, किसी अन्य सीमित दायित्व भागीदारी या सीमित दायित्व भागीदारियों से समामेलन की किसी स्कीम के प्रयोजनों के लिए या उसके संबंध में प्रस्तावित किसी समझौते या ठहराव को अधिकरण द्वारा तभी मंजूरी दी जाएगी, जब अधिकरण को रजिस्ट्रार से यह रिपोर्ट प्राप्त हो गई हो कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज ऐसी रीति में नहीं किए गए हैं, जिससे उसके भागीदारों के हितों या लोकहित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो :

परंतु यह और कि खंड (iii) के अधीन किसी अंतरक सीमित दायित्व भागीदारी के विघटन का कोई आदेश अधिकरण द्वारा तभी किया जाएगा जब शासकीय समापक ने सीमित दायित्व भागीदारी की बहियों और कागजपत्रों की संवीक्षा करने पर अधिकरण को यह रिपोर्ट दे दी हो कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज ऐसी रीति में नहीं किए गए हैं, जिससे उसके भागीदारों के हितों या लोकहित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो ।

(2) जहां इस धारा के अधीन कोई आदेश किसी संपत्ति या दायित्वों के अंतरण के लिए उपबंध करता है वहां उस आदेश के आधार पर वह संपत्ति अंतरिती सीमित दायित्व भागीदारी को अंतरित होगी और उसमें निहित हो जाएगी और ऐसे दायित्व उसमें अंतरित होंगे और उसके दायित्व बन जाएंगे ; तथा किसी संपत्ति की दशा में, यदि आदेश ऐसा निदेश करे, ऐसे किसी प्रभार से मुक्त होगी, जो समझौते या ठहराव के कारण, प्रभाव में नहीं रहा है ।

(3) इस धारा के अधीन कोई आदेश किए जाने के पश्चात् तीस दिन के भीतर, ऐसी प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी, जिसके संबंध में आदेश किया गया है, उसकी प्रमाणित प्रति रजिस्ट्रीकरण के लिए रजिस्ट्रार के पास फाइल कराएगी ।

(4) यदि उपधारा (3) के उपबंधों का अनुपालन करने में व्यतिक्रम किया जाता है तो सीमित दायित्व भागीदारी, सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक अभिहित भागीदार, जुर्माने से, जो पचास हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा में, "संपत्ति" के अंतर्गत प्रत्येक प्रकार की संपत्ति, अधिकार और शक्तियां भी हैं ; और "दायित्वों" के अंतर्गत प्रत्येक प्रकार के कर्तव्य भी हैं ।

अध्याय 13

परिसमापन और विघटन

63. परिसमापन और विघटन – सीमित दायित्व भागीदारी का परिसमापन या तो स्वेच्छा से या अधिकरण द्वारा किया जा सकेगा और इस प्रकार परिसमापित सीमित दायित्व भागीदारी विघटित हो सकेगी ।

64. वे परिस्थितियां, जिनमें सीमित दायित्व भागीदारी का अधिकरण द्वारा परिसमापन किया जा सकेगा – सीमित दायित्व भागीदारी का अधिकरण द्वारा परिसमापन किया जा सकेगा –

(क) यदि सीमित दायित्व भागीदारी वह विनिश्चय करती है कि सीमित दायित्व भागीदारी का अधिकरण द्वारा परिसमापन किया जाए ;

(ख) यदि छह मास से अधिक की अवधि के लिए, सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों की संख्या दो से कम रहती है ;

(ग) यदि सीमित दायित्व भागीदारी अपने ऋणों का संदाय करने में असमर्थ है ;

(घ) यदि सीमित दायित्व भागीदारी ने भारत की संप्रभुता और अखंडता, राज्य की सुरक्षा या लोक व्यवस्था के हितों के विरुद्ध कार्य किया है ;

(ङ) यदि सीमित दायित्व भागीदारी ने लगातार किन्हीं पांच वित्तीय वर्षों के संबंध में लेखा और शोधनक्षमता का विवरण या वार्षिक विवरणी रजिस्ट्रार के पास फाइल करने में व्यतिक्रम किया है ; या

(च) यदि अधिकरण की यह राय है कि यह न्यायोचित और साम्यापूर्ण है कि सीमित दायित्व भागीदारी का परिसमापन कर दिया जाए ।

65. परिसमापन और विघटन के लिए नियम – केंद्रीय सरकार, सीमित दायित्व भागीदारी के परिसमापन और विघटन से संबंधित उपबंधों के लिए नियम बना सकेगी ।

अध्याय 14

प्रकीर्ण

66. सीमित दायित्व भागीदारी के साथ भागीदार के कारबार संव्यवहार – कोई भागीदारी सीमित भागीदारी को धन उधार दे सकेगा और उसके साथ अन्य कारबार कर सकेगा और ऋण या अन्य संव्यवहारों के संबंध में उसके वही अधिकार और बाध्यताएं होंगी जो ऐसे व्यक्ति के हैं, जो भागीदार नहीं है ।

67. कंपनी अधिनियम के उपबंधों का लागू होना – (1) केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, यह निदेश दे सकेगी कि अधिसूचना में विनिर्दिष्ट कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) का कोई उपबंध, –

(क) किसी सीमित दायित्व भागीदार को लागू होगा ; या

(ख) किसी सीमित दायित्व भागीदारी को ऐसे अपवाद, उपांतरण और अनुकूलन के साथ लागू होगा, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

(2) उपधारा (1) के अधीन जारी किए जाने के लिए प्रस्तावित प्रत्येक अधिसूचना की प्रति संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखी जाएगी । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी ।

यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस अधिसूचना को जारी किए जाने का अनुमोदन न करने के लिए सहमत हो जाएं तो वह अधिसूचना, यथास्थिति, जारी नहीं की जाएगी या दोनों सदन उस अधिसूचना में कोई उपांतरण करने के लिए सहमत हो जाते हैं तो वह उस उपांतरित रूप में ही जारी की जाएगी, जिस पर दोनों सदन सहमत हों ।

68. दस्तावेजों का इलेक्ट्रानिक रूप में फाइल किया जाना – (1) इस अधिनियम के अधीन फाइल, अभिलिखित या रजिस्ट्रीकृत किए जाने के लिए अपेक्षित किसी दस्तावेज को ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, फाइल, अभिलिखित या रजिस्ट्रीकृत किया जा सकेगा ।

(2) रजिस्ट्रार के पास इलेक्ट्रानिक रूप में फाइल किए गए या उसको प्रस्तुत किए गए किसी दस्तावेज की कोई प्रति या उससे कोई उद्धरण, जो रजिस्ट्रार द्वारा प्रदाय या जारी किया जाता है और जिसे ऐसे दस्तावेज की सत्यप्रति या उद्धरण के रूप में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 (2000 का 21) के अनुसार अंकीय चिह्नक के माध्यम से प्रमाणित किया गया है, किन्हीं कार्यवाहियों में मूल दस्तावेज के समान विधिमान्यता के रूप में साक्ष्य में ग्राह्य होगा ।

(3) रजिस्ट्रार द्वारा प्रदाय की गई कोई सूचना जो रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रार के पास फाइल किए गए या उसको प्रस्तुत किए गए किसी दस्तावेज के सत्य उद्धरण के रूप में अंकीय चिह्नक के माध्यम से रजिस्ट्रार द्वारा प्रमाणित किया गया है, किन्हीं कार्यवाहियों में साक्ष्य में ग्राह्य होगी और यह उपधारणा की जाएगी कि वह जब तक उसके विरुद्ध कोई साक्ष्य प्रस्तुत न किया जाए, ऐसे दस्तावेज से सत्य उद्धरण है ।

69. अतिरिक्त फीस का संदाय – इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रार के पास फाइल या रजिस्ट्रीकृत किए जाने के लिए अपेक्षित कोई दस्तावेज या विवरणी यदि उसमें उपबंधित समय में फाइल या रजिस्ट्रीकृत नहीं की जाती है तो उस समय के पश्चात् उस तारीख से, जिस तक उसे फाइल किया जाना चाहिए, तीन सौ दिन की अवधि तक, ऐसी किसी फीस के अतिरिक्त, जो ऐसे दस्तावेज या विवरणी को फाइल

करने के लिए संदेय हों, ऐसे विलंब के प्रत्येक दिन के लिए एक सौ रुपए की अतिरिक्त फीस के संदाय पर फाइल या रजिस्ट्रीकृत की जा सकेगी :

परंतु ऐसा दस्तावेज या विवरणी, इस अधिनियम के अधीन किसी अन्य कार्रवाई या दायित्व पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, इस धारा में विनिर्दिष्ट फीस और अतिरिक्त फीस के संदाय पर तीन सौ दिन की ऐसी अवधि के पश्चात् भी फाइल की जा सकेगी ।

70. वर्धित दंड – यदि कोई सीमित दायित्व भागीदारी या ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी का कोई भागीदार या अभिहित भागीदार कोई अपराध करता है तो सीमित दायित्व भागीदारी या कोई भागीदार या अभिहित भागीदार दूसरे या पश्चात्वर्ती अपराध के लिए यथाउपबंधित कारावास से दंडनीय होगा, किंतु ऐसे अपराधों की दशा में, जिसके लिए कारावास के साथ या उसे छोड़कर जुर्माना विहित किया गया है, जुर्माने से, जो ऐसे अपराध के लिए जुर्माने की रकम का दुगुना होगा, दंडनीय होगा ।

71. अन्य विधियों के लागू होने का वर्जित न होना – इस अधिनियम के उपबंध तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबंधों के अतिरिक्त होंगे, न कि उनके अल्पीकरण में ।

72. अधिकरण और अपील अधिकरण की अधिकारिता – (1) अधिकरण ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के द्वारा या उसके अधीन उसे प्रदत्त किए जाएं ।

(2) अधिकरण के किसी आदेश या विनिश्चय से व्यथित कोई व्यक्ति अपील अधिकरण को अपील कर सकेगा और कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 10चथ, धारा 10चयक, धारा 10छ, धारा 10छघ, धारा 10छङ और धारा 10छच के उपबंध ऐसी अपील के संबंध में लागू होंगे ।

73. अधिकरण द्वारा पारित किसी आदेश के अननुपालन के संबंध में शास्ति – जो कोई इस अधिनियम के किसी उपबंध के अधीन अधिकरण द्वारा किए गए किसी आदेश का पालन करने में असफल रहता है तो वह कारावास से, जो छह मास तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा और जुर्माने का भी, जो पचास हजार रुपए से कम का नहीं होगा, दायी होगा ।

74. साधारण शास्तियां – कोई व्यक्ति, जो इस अधिनियम के अधीन किसी ऐसे अपराध का दोषी है जिसके लिए स्पष्ट रूप से कोई दंड उपबंधित नहीं किया गया है, जुर्माने का जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, किंतु जो पांच हजार रुपए से कम का नहीं होगा, दायी होगा और अतिरिक्त जुर्माने का, जो उस प्रथम दिन के, जिसके पश्चात् व्यतिक्रम जारी रहता है, पश्चात् के प्रत्येक दिन के लिए पचास रुपए तक का हो सकेगा, दायी होगा ।

75. रजिस्टर से निष्क्रिय सीमित दायित्व भागीदारी का नाम काटने की रजिस्ट्रार की शक्ति – जहां रजिस्ट्रार के पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त कारण है कि सीमित दायित्व भागीदारी इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार कारबार नहीं चला रही है या अपना प्रचालन नहीं कर रही है, वहां सीमित दायित्व भागीदारी का नाम ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्टर से काट दिया जाएगा :

परंतु रजिस्ट्रार, इस धारा के अधीन किसी सीमित दायित्व भागीदारी का नाम काटने से पूर्व ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी को सुने जाने का युक्तियुक्त अवसर देगा ।

76. सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा अपराध – जहां सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा इस अधिनियम के अधीन किया गया कोई अपराध, –

(क) सीमित दायित्व भागीदारी के किसी भागीदार या भागीदारों या अभिहित भागीदार या अभिहित भागीदारों की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया ; या

(ख) उस सीमित भागीदारी के भागीदार या भागीदारों या अभिहित भागीदार या अभिहित भागीदारों की ओर से किसी उपेक्षा के कारण हुआ,

साबित होता है, वहां यथास्थिति, सीमित दायित्व भागीदार का भागीदार या उसके भागीदार या उसका अभिहित भागीदार या उसके अभिहित भागीदार और वह सीमित दायित्व भागीदार उस अपराध के दोषी होंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने तथा दंडित किए जाने के लिए दायी होंगे ।

77. न्यायालय की अधिकारिता – तत्समय प्रवृत्त किसी अधिनियम में किसी प्रतिकूल उपबंध के होते हुए भी, यथास्थिति, प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट को इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का विचारण करने की अधिकारिता होगी और उक्त अपराध की बाबत दंड अधिरोपित करने की शक्ति होगी ।

78. अनुसूचियों में परिवर्तन करने की शक्ति – (1) केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम की किसी अनुसूची में अंतर्विष्ट उपबंधों में से किसी उपबंध को परिवर्तित कर सकेगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन अधिसूचित कोई परिवर्तन इस प्रकार प्रभावी होगा मानो वह अधिनियम में अधिनियमित किया गया हो और वह, जब तक अधिसूचना में अन्यथा निदेश न हो अधिसूचना की तारीख को प्रवृत्त होगा ।

(3) उपधारा (1) के अधीन केंद्रीय सरकार द्वारा किया गया प्रत्येक परिवर्तन, किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस परिवर्तन में कोई उपांतरण करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे उपांतरित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किंतु परिवर्तन के ऐसे उपांतरण या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

79. नियम बनाने की शक्ति – (1) केंद्रीय सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 7 की उपधारा (3) के अधीन अभिहित भागीदार द्वारा दी जाने वाली पूर्व सहमति का प्ररूप और रीति ;

(ख) धारा 7 की उपधारा (4) के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी के अभिहित भागीदार के रूप में कार्य करने के लिए सहमत होने वाले प्रत्येक व्यष्टि की विशिष्टियों का प्ररूप और रीति ;

(ग) धारा 7 की उपधारा (5) के अधीन अभिहित भागीदार बनने के लिए किसी व्यष्टि की पात्रता से संबंधित शर्तें और अपेक्षाएं ;

(घ) धारा 11 की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन निगमन दस्तावेज फाइल करने की रीति और उसके लिए संदेय फीस का संदाय ;

(ङ) धारा 11 की उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन फाइल की जाने वाली विवरणी का प्ररूप ;

(च) धारा 11 की उपधारा (2) के खंड (क) के अधीन निगमन दस्तावेज का प्ररूप ;

(छ) धारा 11 की उपधारा (2) के खंड (छ) के अधीन प्रस्तावित सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित निगमन दस्तावेज में अंतर्विष्ट की जाने वाली जानकारी ;

(ज) धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी या किसी भागीदार या अभिहित भागीदार पर दस्तावेजों की तामील करने की रीति और वह प्ररूप और रीति, जिसमें सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा कोई अन्य पता घोषित किया जा सकेगा ;

(झ) धारा 13 की उपधारा (3) के अधीन रजिस्ट्रार को सूचना देने का प्ररूप और रीति और रजिस्ट्रीकृत कार्यालय के परिवर्तन के संबंध में शर्तें ;

(ञ) धारा 16 की उपधारा (1) के अधीन रजिस्ट्रार को आवेदन करने की रीति और संदेय फीस की रकम ;

(ट) वह रीति जिसमें धारा 16 की उपधारा (2) के अधीन रजिस्ट्रार द्वारा नाम आरक्षित किए जाएंगे ;

(ठ) वह रीति जिसमें धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन किसी अस्तित्व द्वारा आवेदन किया जा सकेगा ;

(ड) धारा 19 के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी के नाम-परिवर्तन की सूचना का प्ररूप और रीति तथा संदेय फीस की रकम ;

(ढ) धारा 23 की उपधारा (2) के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी करार और उसमें किए गए परिवर्तन का प्ररूप और रीति और संदेय फीस की रकम ;

(ण) धारा 25 की उपधारा (3) के खंड (क), खंड (ख) और खंड (ग) के अधीन सूचना का प्ररूप, संदेय फीस की रकम और विवरण के अधिप्रमाणन की रीति ;

(त) धारा 32 की उपधारा (2) के अधीन किसी भागीदार के अभिदाय के धनीय मूल्य का लेखा रखने और प्रकटन की रीति ;

(थ) धारा 34 की उपधारा (1) के अधीन लेखा बहियां और उनके रखे जाने की अवधि ;

(द) धारा 34 की उपधारा (2) के अधीन लेखा और शोधनक्षमता के विवरण का प्ररूप और रीति ;

(ध) धारा 34 की उपधारा (3) के अधीन लेखा और शोधनक्षमता का विवरण फाइल करने का प्ररूप, रीति, फीस और समय ;

(न) धारा 34 की उपधारा (4) के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी के लेखाओं की संपरीक्षा ;

(प) धारा 35 की उपधारा (1) के अधीन वार्षिक विवरणी का प्ररूप और रीति और उसके लिए संदेय फीस ;

(फ) धारा 36 के अधीन निगमन दस्तावेज, भागीदारों के नाम और उसमें किए गए परिवर्तनों, लेखा और शोधनक्षमता विवरण और वार्षिक विवरणी के निरीक्षण की रीति और उसके लिए संदेय फीस की रकम ;

(ब) धारा 40 के अधीन रजिस्ट्रार द्वारा दस्तावेजों का किसी रूप में नष्ट किया जाना ;

(भ) धारा 43 की उपधारा (3) के खंड (क) के अधीन प्रतिभूति के रूप में अपेक्षित रकम ;

(म) धारा 44 के अधीन दी जाने वाली प्रतिभूति की रकम ;

(य) धारा 49 की उपधारा (2) के खंड (ख) के अधीन, प्रति देने के लिए संदेय फीस ;

(यक) धारा 54 के अधीन निरीक्षक की रिपोर्ट के अधिप्रमाणन की रीति ;

(यख) धारा 58 की उपधारा (1) के परंतुक के अधीन संपरिवर्तन के बारे में विशिष्टियों का प्ररूप और रीति ;

(यग) धारा 59 के अधीन विदेशी सीमित दायित्व भागीदारियों द्वारा भारत में कारबार के स्थान की स्थापना करने और कारबार करने और विनियामक तंत्र तथा उसकी संरचना के संबंध में ;

(यघ) धारा 60 की उपधारा (1) के अधीन अधिवेशन बुलाने, आयोजित और संचालित करने की रीति ;

(यङ) धारा 65 के अधीन सीमित दायित्व भागीदारियों के परिसमापन और विघटन के संबंध में ;

(यच) धारा 68 की उपधारा (1) के अधीन इलेक्ट्रानिक रूप में दस्तावेज फाइल करने की रीति और शर्तें ;

(यछ) धारा 75 के अधीन रजिस्टर से सीमित दायित्व भागीदारियों के नाम काटने की रीति ;

(यज) दूसरी अनुसूची के पैरा 4 के उपपैरा (क) के अधीन विशिष्टियों वाले विवरण का प्ररूप और रीति तथा फीस की रकम ;

(यझ) दूसरी अनुसूची के पैरा 5 के परंतुक के अधीन संपरिवर्तन के बारे में विशिष्टियों की रीति और प्ररूप ;

(यञ) तीसरी अनुसूची के पैरा 3 के उपपैरा (क) के अधीन विवरण का प्ररूप और रीति तथा संदेय फीस की रकम ;

(यट) तीसरी अनुसूची के पैरा 4 के परंतुक के अधीन संपरिवर्तन के बारे में विशिष्टियों का प्ररूप और रीति ;

(यठ) चौथी अनुसूची के पैरा 4 के उपपैरा (क) के अधीन विवरण का प्ररूप और रीति तथा संदेय फीस की रकम ; और

(यड) चौथी अनुसूची के पैरा 5 के परंतुक के अधीन संपरिवर्तन के बारे में विशिष्टियों की रीति और प्ररूप ।

(3) इस अधिनियम के अधीन केंद्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किंतु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

80. कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केंद्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा ऐसे उपबंध कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, और जो उसे कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक प्रतीत हों :

परंतु इस धारा के अधीन ऐसा कोई आदेश इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से दो वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

81. संक्रमणकालीन उपबंध – जब तक कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) के उपबंधों के अधीन अधिकरण और अपील अधिकरण गठित नहीं किए जाते हैं तब तक इस अधिनियम के उपबंध निम्नलिखित उपांतरणों के अधीन रहते हुए इस प्रकार प्रभावी होंगे, मानो –

(क) धारा 41 की उपधारा (1) के खंड (ख), धारा 43 की उपधारा (1) के खंड (क), और धारा 44 में आने वाले "अधिकरण" शब्द के स्थान पर, "कंपनी विधि बोर्ड" शब्द रखे गए हों ;

(ख) धारा 51 और धारा 60 से धारा 64 में आने वाले "अधिकरण" शब्द के स्थान पर, "उच्च न्यायालय" शब्द रखे गए हों ;

(ग) धारा 72 की उपधारा (2) में आने वाले "अपील अधिकरण" शब्दों के स्थान पर, "उच्च न्यायालय" शब्द रखे गए हों ।

पहली अनुसूची

[धारा 23(4) देखिए]

भागीदारों और सीमित दायित्व भागीदारी तथा उसके भागीदारों के पारस्परिक अधिकारों और कर्तव्यों से संबंधित विषयों के संबंध में, ऐसे विषयों पर किसी करार के न होने की दशा में लागू होने वाले उपबंध

1. भागीदारों के पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य और सीमित दायित्व भागीदारी तथा उसके भागीदारों के पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य किसी सीमित दायित्व भागीदारी के निबंधनों के अधीन रहते हुए या किसी विषय पर ऐसे किसी करार के अभाव में, इस अनुसूची के उपबंधों द्वारा अवधारित किए जाएंगे ।

2. सीमित दायित्व भागीदारी के सभी भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी की पूंजी, लाभों और हानियों में समान रूप से हिस्सा बंटाने के लिए हकदार हैं ।

3. सीमित दायित्व भागीदारी प्रत्येक भागीदार को उसके द्वारा –

(क) सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार के सामान्य और समुचित संचालन में ; या

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार या संपत्ति के परिरक्षण के लिए आवश्यक रूप से की गई किसी बात में या उसके बारे में,

किए गए संदायों और उपगत वैयक्तिक दायित्वों के संबंध में क्षतिपूर्ति करेगी ।

4. प्रत्येक भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार के संचालन में उसके कपट से उसको हुई किसी हानि के लिए सीमित दायित्व भागीदारी को क्षतिपूरित करेगा ।

5. प्रत्येक भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी के प्रबंध में भाग ले सकेगा ।

6. कोई भी भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार या प्रबंध में कार्य करने के लिए पारिश्रमिक का हकदार नहीं होगा ।

7. विद्यमान भागीदारों की सहमति के बिना किसी व्यक्ति को भागीदार के रूप में सम्मिलित नहीं किया जाएगा ।

8. सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित कोई विषय या मुद्दा भागीदारों की संख्या में बहुमत द्वारा पारित संकल्प द्वारा विनिश्चित किया जाएगा और इस प्रयोजन के लिए प्रत्येक भागीदार का एक मत होगा । तथापि, सभी भागीदारों की सहमति के बिना सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार की प्रकृति में कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकेगा ।

9. प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी यह सुनिश्चित करेगी कि उसके द्वारा किए गए विनिश्चय, ऐसे विनिश्चय किए जाने के बीस दिन के भीतर कार्यवृत्त में लेखबद्ध किए जाएं और सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्ट्रीकृत कार्यालय में रखे और अनुरक्षित किए जाएं ।

10. प्रत्येक भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी को प्रभावित करने वाली बातों के बारे में वास्तविक लेखा और पूरी जानकारी किसी भागीदार या उसके विधिक प्रतिनिधियों को देगा ।

11. यदि कोई भागीदार, सीमित दायित्व भागीदारी की सहमति के बिना, उसी प्रकृति का कोई कारबार करता है जो सीमित दायित्व भागीदारी का है और उससे प्रतियोगिता करता है तो वह उस कारबार में

उसे हुए सभी लाभों का, सीमित दायित्व भागीदारी को हिसाब देगा और उनका उसे संदाय करने के लिए दायी होगा ।

12. प्रत्येक भागीदार, सीमित दायित्व भागीदारी की सहमति के बिना, सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित किसी संव्यवहार से या सीमित दायित्व भागीदारी की संपत्ति, नाम या किसी कारबारी संपर्क से उसके द्वारा व्युत्पन्न किसी फायदे का सीमित दायित्व भागीदारी को हिसाब देगा ।

13. भागीदारों का कोई बहुमत किसी भागीदार को तभी निष्कासित कर सकता है जब भागीदारों के बीच स्पष्ट करार द्वारा ऐसा करने के लिए कोई शक्ति प्रदान की गई हो ।

14. भागीदारों के बीच सीमित दायित्व भागीदारी करार से उद्भूत ऐसे सभी विवाद, जिनका निपटान ऐसे करार के निबंधनानुसार नहीं किया जा सकता है, माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) के उपबंधों के अनुसार माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किए जाएंगे ।

दूसरी अनुसूची

(धारा 55 देखिए)

फर्म से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन

1. निर्वचन – इस अनुसूची में, जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "फर्म" से भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) की धारा 4 में यथापरिभाषित फर्म अभिप्रेत है ;

(ख) किसी सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित होने वाली फर्म के संबंध में, "संपरिवर्तन" से फर्म की संपत्ति, आस्तियों, हितों, अधिकारों, विशेषाधिकारों, दायित्वों, बाध्यताओं और उपक्रम का इस अनुसूची के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में अंतरण अभिप्रेत है ।

2. फर्म से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन – (1) कोई फर्म इस अनुसूची में उपवर्णित संपरिवर्तन की अपेक्षाओं का अनुपालन करके सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो सकेगी ।

(2) ऐसे संपरिवर्तन पर, फर्म के भागीदार इस अनुसूची के उन उपबंधों द्वारा आबद्ध होंगे, जो उनको लागू होते हैं ।

3. संपरिवर्तन के लिए पात्रता – कोई फर्म सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के लिए इस अनुसूची के अनुसार आवेदन कर सकेगी यदि और केवल तभी जब सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों में, जिसमें फर्म का संपरिवर्तन किया जाना है, उस फर्म के सभी भागीदार सम्मिलित हैं, न कि कोई और ।

4. फाइल किए जाने वाला विवरण – कोई फर्म किसी सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के लिए रजिस्ट्रार को निम्नलिखित फाइल करते हुए आवेदन कर सकेगी –

(क) उसके सभी भागीदारों द्वारा ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति से तथा ऐसी फीस के साथ जो केंद्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे, निम्नलिखित विशिष्टियां, अंतर्विष्ट करते हुए, विवरण, अर्थात् :–

(i) फर्म का नाम और रजिस्ट्रीकरण संख्या यदि लागू हो ; और

(ii) वह तारीख जिसको फर्म भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) या किसी अन्य विधि, यदि लागू हो, के अधीन रजिस्ट्रीकृत की गई थी ; और

(ख) धारा 11 में निर्दिष्ट निगमन दस्तावेज और विवरण ।

5. संपरिवर्तन का रजिस्ट्रीकरण – पैरा 4 में निर्दिष्ट दस्तावेजों को प्राप्त होने पर, रजिस्ट्रार, इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, दस्तावेजों को रजिस्टर करेगा और ऐसे प्ररूप में जो रजिस्ट्रार अवधारित करे, यह कथन करते हुए रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र जारी करेगा कि सीमित दायित्व भागीदारी प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट तारीख से ही इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत है :

परंतु सीमित दायित्व भागीदारी, रजिस्ट्रीकरण की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर, संबंधित उस फर्म रजिस्ट्रार को, जिसके पास वह भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) के उपबंधों के अधीन रजिस्ट्रीकृत थी, संपरिवर्तन के बारे में और सीमित दायित्व भागीदारी की विशिष्टियों की ऐसे प्ररूप और रीति में सूचना देगी, जो केंद्रीय सरकार विहित करे ।

6. रजिस्ट्रार रजिस्टर करने से इनकार कर सकेगा – (1) इस अनुसूची की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि यदि इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन प्रस्तुत की गई विशिष्टियों या अन्य जानकारी से उसका समाधान नहीं होता है तो वह रजिस्ट्रार से, किसी सीमित दायित्व भागीदारी को रजिस्टर करने की अपेक्षा करती है :

परंतु रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकरण से इनकार की दशा में अधिकरण के समक्ष अपील की जा सकेगी ।

(2) रजिस्ट्रार, किसी विशिष्ट मामले में, पैरा 4 में विनिर्दिष्ट दस्तावेजों को ऐसी रीति में सत्यापित कराने की अपेक्षा कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

7. रजिस्ट्रीकरण का प्रभाव – पैरा 5 के अधीन जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ही, –

(क) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट नाम से इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत सीमित दायित्व भागीदारी होगी ;

(ख) फर्म में निहित सभी मूर्त संपत्ति (जंगम और स्थावर) और अमूर्त संपत्ति और फर्म से संबंधित सभी आस्तियां, हित, अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, बाध्यताएं और फर्म का संपूर्ण उपक्रम किसी और आश्वासन, कृत्य या विलेख के बिना सीमित दायित्व भागीदारी को अंतरित हो जाएंगे और उसमें निहित हो जाएंगे ; और

(ग) फर्म विघटित समझी जाएगी और यदि वह भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) के अधीन पहले से रजिस्ट्रीकृत है तो उस अधिनियम के अधीन रखे गए अभिलेखों से हटा दी जाएगी ।

8. संपत्ति के संबंध में रजिस्ट्रीकरण – यदि कोई संपत्ति, जिसको पैरा 7 का उपपैरा (ख) लागू होता है, किसी प्राधिकारी के पास रजिस्ट्रीकृत है, तो सीमित दायित्व भागीदारी, रजिस्ट्रीकरण की तारीख के पश्चात् यथासाध्य शीघ्र, संपरिवर्तन के प्राधिकार और सीमित दायित्व भागीदारी की विशिष्टियों को ऐसे माध्यम और ऐसे प्ररूप में, अधिसूचित करने के लिए सभी आवश्यक उपाय करेगी जो सुसंगत प्राधिकारी अपेक्षा करे ।

9. लंबित कार्यवाहियां – फर्म द्वारा या उसके विरुद्ध सभी कार्यवाहियां, जो किसी न्यायालय या अधिकरण में या किसी प्राधिकारी के समक्ष रजिस्ट्रीकरण की तारीख को लंबित हैं, सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध जारी रखी जा सकेंगी, पूरी की जा सकेंगी और प्रवृत्त की जा सकेंगी ।

10. दोषसिद्धि, विनिर्णय, आदेश या निर्णय का जारी रहना – किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी की फर्म के पक्ष में या उसके विरुद्ध कोई दोषसिद्धि, विनिर्णय, आदेश या निर्णय सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवृत्त किया जा सकेगा ।

11. विद्यमान करार – ऐसा प्रत्येक करार, जिसका फर्म रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व एक पक्षकार थी, चाहे वह ऐसी प्रकृति का था यह कि उसके अधीन अधिकार या दायित्व समनुदेशित किए जा सकें उस दिन से वैसे ही प्रभावी रहेगा, मानो –

(क) फर्म के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी ऐसे करार की पक्षकार हो ; और

(ख) रजिस्ट्रीकरण की तारीख को या उसके पश्चात् की गई किसी बात की बाबत फर्म के प्रतिनिर्देश के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी के प्रतिनिर्देश रखा गया हो ।

12. विद्यमान संविदाएं आदि – रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व विद्यमान ऐसे सभी विलेख, संविदाएं, स्कीम, बंधपत्र, करार, आवेदन, लिखत और ठहराव जो फर्म से संबंधित हैं या जिनमें फर्म एक पक्षकार है, उस तारीख को और उसके पश्चात् वैसे ही प्रभावी बने रहेंगे मानो वे सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित हों और सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध उसी प्रकार प्रवर्तनीय होंगे मानो सीमित दायित्व भागीदारी उसमें नामित की गई हो या फर्म के स्थान पर वह उसकी पक्षकार हो ।

13. नियोजन का जारी रहना – नियोजन की प्रत्येक संविदा जिसे पैरा 11 या पैरा 12 लागू होते हैं, रजिस्ट्रीकरण की तारीख को या उसके पश्चात् वैसे ही प्रभावी बनी रहेगी मानो फर्म के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी उसके अधीन नियोजक हो ।

14. विद्यमान नियुक्ति, प्राधिकार या शक्ति – (1) किसी भी भूमिका या हैसियत में फर्म की प्रत्येक नियुक्ति जो रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवृत्त है उस तारीख से वैसे ही प्रभावी और प्रवर्तित होगी मानो सीमित दायित्व भागीदारी नियुक्त की गई हो ।

(2) फर्म को प्रदत्त कोई प्राधिकार या शक्ति जो रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवर्तन में है, उस तारीख से वैसे ही प्रभावी और प्रवर्तित होगी मानो वह सीमित दायित्व भागीदारी को प्रदत्त की गई हो ।

15. पैरा 7 से पैरा 14 का लागू होना – पैरा 7 से पैरा 14 (जिसमें दोनों सम्मिलित हैं) के उपबंध ऐसे किसी अन्य अधिनियम के अधीन, जो सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवर्तन में है, फर्म को जारी किए गए किसी अनुमोदन, अनुज्ञापत्र या अनुज्ञप्ति को, ऐसे अन्य अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए लागू होंगे, जिसके अधीन ऐसा अनुमोदन, अनुज्ञापत्र या अनुज्ञप्ति जारी की गई है ।

16. भागीदार का संपरिवर्तन से पूर्व फर्म के दायित्वों और बाध्यताओं के लिए दायी होना – (1) पैरा 7 से पैरा 14 (जिसमें दोनों सम्मिलित हैं) में किसी बात के होते हुए भी, किसी ऐसी फर्म का, जो सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो गई है, प्रत्येक भागीदार फर्म के ऐसे दायित्वों और बाध्यताओं के लिए व्यक्तिगत रूप से (सीमित दायित्व भागीदारी के साथ संयुक्त रूप से और पृथक् रूप से) दायी बनी रहेगी, जो संपरिवर्तन के पूर्व उपगत हुई हों या जो संपरिवर्तन के पूर्व किसी संविदा से उद्भूत हुई हों ।

(2) यदि ऐसा कोई भागीदार पैरा (1) में निर्दिष्ट किसी दायित्व या बाध्यता का निर्वहन करता है तो वह ऐसे दायित्व या बाध्यता के संबंध में (सीमित दायित्व भागीदारी के साथ किसी करार के अधीन रहते हुए) सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा पूर्ण रूप से क्षतिपूर्ति किए जाने का हकदार होगा ।

17. पत्राचार में संपरिवर्तन की सूचना – (1) सीमित दायित्व भागीदारी यह सुनिश्चित करेगी कि रजिस्ट्रीकरण की तारीख के पश्चात्

चौदह दिन के अपश्चात् प्रारंभ होने वाली बारह मास की अवधि के लिए सीमित दायित्व भागीदारी के प्रत्येक शासकीय पत्राचार में निम्नलिखित समाविष्ट होंगे :–

(क) यह विवरण कि फर्म रजिस्ट्रीकरण की तारीख से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो गई थी ;

(ख) उस फर्म का नाम और रजिस्ट्रीकरण संख्यांक (यदि लागू हो) जिससे वह संपरिवर्तित हुई थी ।

(2) कोई सीमित दायित्व भागीदारी, जो उपपैरा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करती है, जुर्माने से जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा और अतिरिक्त जुर्माने से जो पहले दिन के पश्चात् जिसको व्यतिक्रम जारी रहता है प्रत्येक दिन के लिए पचास रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

तीसरी अनुसूची

(धारा 56 देखिए)

प्राइवेट कंपनी से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन

1. निर्वचन – इस अनुसूची में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "कंपनी" से कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (iii) में यथापरिभाषित प्राइवेट कंपनी अभिप्रेत है;

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित होने वाली प्राइवेट कंपनी के संबंध में "संपरिवर्तन" से कंपनी की संपत्ति, आस्तियों, हितों, अधिकारों, विशेषाधिकारों, बाध्यताओं और उपक्रम का इस अनुसूची के उपबंधों के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में अंतरण अभिप्रेत है ।

2. प्राइवेट कंपनियों की सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के

लिए पात्रता – (1) कोई कंपनी इस अनुसूची में उपवर्णित संपरिवर्तन की अपेक्षाओं का अनुपालन करके सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो सकेगी ।

(2) कोई कंपनी इस अनुसूची के अनुसार किसी सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के लिए केवल तभी आवेदन कर सकेगी यदि –

(क) आवेदन के समय आस्तियों में कोई प्रतिभूति हित विद्यमान या प्रवृत्त नहीं है, और

(ख) उस सीमित दायित्व भागीदारी के, जिसमें वह संपरिवर्तित होती है भागीदारों में कंपनी के सभी शेयरधारक सम्मिलित हैं, न कि कोई और ।

(3) ऐसे संपरिवर्तन पर, कंपनी, उसके शेयरधारक, सीमित दायित्व भागीदारी, जिसमें कंपनी संपरिवर्तित हो गई है और उस सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार इस अनुसूची के उन उपबंधों से आबद्ध होंगे, जो उन्हें लागू होते हैं ।

3. फाइल किए जाने वाला विवरण – कंपनी किसी सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के लिए रजिस्ट्रार को निम्नलिखित फाइल करते हुए आवेदन कर सकेगी –

(क) उसके सभी शेयरधारकों द्वारा ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में तथा ऐसी फीस के साथ जो केंद्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे, निम्नलिखित विशिष्टियां अंतर्विष्ट करते हुए, विवरण, अर्थात् :–

(i) कंपनी का नाम और रजिस्ट्रीकरण संख्या ;

(ii) वह तारीख जिसको कंपनी निगमित की गई थी ; और

(ख) धारा 11 में निर्दिष्ट निगमन दस्तावेज और विवरण ।

4. संपरिवर्तन का रजिस्ट्रीकरण – पैरा 3 में निर्दिष्ट दस्तावेजों के प्राप्त होने पर रजिस्ट्रार इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए दस्तावेजों को रजिस्टर करेगा और

ऐसे प्ररूप में जो रजिस्ट्रार अवधारित करे, यह कथन करते हुए रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र जारी करेगा कि सीमित दायित्व भागीदारी प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट तारीख से ही इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत है :

परंतु सीमित दायित्व भागीदारी, रजिस्ट्रीकरण की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर संबंधित कंपनी रजिस्ट्रार को, जिसके पास वह कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) के उपबंधों के अधीन रजिस्ट्रीकृत थी, संपरिवर्तन के बारे में और सीमित दायित्व भागीदारी की विशिष्टियों की ऐसे प्ररूप और रीति में सूचना देगी, जो केंद्रीय सरकार विहित करे ।

5. रजिस्ट्रार रजिस्टर करने से इनकार कर सकेगा – (1) इस अनुसूची की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा यदि इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन प्रस्तुत की गई विशिष्टियों या अन्य जानकारी से उसका समाधान नहीं होता है तो वह रजिस्ट्रार से, सीमित दायित्व भागीदारी को रजिस्टर करने की अपेक्षा करती है :

परंतु रजिस्टार द्वारा रजिस्ट्रीकरण से इनकार की दशा में अधिकरण के समक्ष अपील की जा सकेगी ।

(2) रजिस्ट्रार किसी विशिष्ट मामले में, पैरा 3 में निर्दिष्ट दस्तावेजों को ऐसी रीति में सत्यापित कराए जाने की अपेक्षा कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

6. रजिस्ट्रीकरण का प्रभाव – पैरा 4 के अधीन जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ही, –

(क) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट नाम से इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत एक सीमित दायित्व भागीदारी होगी ;

(ख) कंपनी में निहित सभी मूर्त संपत्ति (जंगम और स्थावर) और अमूर्त संपत्ति, कंपनी से संबंधित सभी आस्तियां, हित, अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, बाध्यताएं और कंपनी का संपूर्ण उपक्रम किसी और आश्वासन, कृत्य या विलेख के बिना सीमित

दायित्व भागीदारी को अंतरित हो जाएंगे और उसमें निहित हो जाएंगे ; और

(ग) कंपनी विघटित समझी जाएगी और उसे कंपनी रजिस्ट्रार के अभिलेखों से हटा दिया जाएगा ।

7. संपत्ति के संबंध में रजिस्ट्रीकरण – यदि कोई संपत्ति जिसको पैरा 6 का उपपैरा (ख) लागू होता है, किसी प्राधिकारी के पास रजिस्ट्रीकृत है, तो सीमित दायित्व भागीदारी, यथासाध्य शीघ्र, रजिस्ट्रीकरण की तारीख के पश्चात् संपरिवर्तन के प्राधिकार और सीमित दायित्व भागीदारी की विशिष्टियों को ऐसे प्ररूप और रीति में, जो प्राधिकारी अवधारित करे, अधिसूचित करने के लिए सभी आवश्यक उपाय करेगी जो सुसंगत प्राधिकारी अपेक्षा करे ।

8. लंबित कार्यवाहियां – कंपनी द्वारा या कंपनी के विरुद्ध सभी कार्यवाहियां जो किसी न्यायालय या अधिकरण में या किसी अन्य प्राधिकारी के समक्ष रजिस्ट्रीकरण की तारीख को लंबित हैं, सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध जारी रखी जा सकेंगी, पूरी की जा सकेंगी और प्रवृत्त की जा सकेंगी ।

9. दोषसिद्धि, विनिर्णय, आदेश या निर्णय का जारी रहना – किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी की कंपनी के पक्ष में या उसके विरुद्ध कोई दोषसिद्धि, विनिर्णय, आदेश या निर्णय सीमित दायित्व सीमित भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवृत्त किया जा सकेगा ।

10. विद्यमान करार – ऐसा प्रत्येक करार जिसका कंपनी रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व कंपनी एक पक्षकार थी, चाहे वह ऐसी प्रकृति का था या नहीं कि उसके अधीन अधिकार या दायित्व समनुदेशित किए जा सकें, उस दिन से वैसे ही प्रभावी रहेगा, मानो :–

(क) कंपनी के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी उस करार की पक्षकार हो ; और

(ख) रजिस्ट्रीकरण की तारीख को या उसके पश्चात् की गई किसी बात की बाबत कंपनी के प्रतिनिर्देश के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी के प्रतिनिर्देश रखा गया हो ।

11. विद्यमान संविदाएं, आदि – रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व विद्यमान ऐसे सभी विलेख, संविदाएं, स्कीमें, बंधपत्र, करार, आवेदन, लिखित और ठहराव जो कंपनी से संबंधित हैं या जिनमें कंपनी एक पक्षकार है उस तारीख को और उसके पश्चात् वैसे ही प्रभावी बने रहेंगे मानो वे सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित हों और सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवर्तनीय होंगे मानो सीमित दायित्व भागीदारी उसमें नामित की गई हो या वह कंपनी के स्थान पर उसकी पक्षकार हो ।

12. नियोजन का जारी रहना – नियोजन की प्रत्येक संविदा जिसे पैरा 10 या पैरा 11 लागू होते हैं, रजिस्ट्रीकरण की तारीख को या उसके पश्चात् वैसे ही प्रभावी बनी रहेगी मानो सीमित दायित्व भागीदारी कंपनी के स्थान पर उसके अधीन नियोजक थी ।

13. विद्यमान नियुक्ति, प्राधिकार या शक्ति – (1) किसी भूमिका या हैसियत में कंपनी की प्रत्येक नियुक्ति जो रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवृत्त है उस तारीख से वैसे ही प्रभावी और प्रवर्तित होगी मानो सीमित दायित्व भागीदारी नियुक्त की गई हो ।

(2) कंपनी को प्रदत्त कोई प्राधिकार या शक्ति जो रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवर्तन में है, उस तारीख से वैसे ही प्रभावी और प्रवर्तित होगी मानो वह सीमित दायित्व भागीदारी को प्रदत्त की गई हो ।

14. पैरा 6 से पैरा 13 का लागू होना – पैरा 6 से पैरा 13 (जिसमें दोनों सम्मिलित हैं) के उपबंध ऐसे किसी अन्य अधिनियम के अधीन, जो सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवर्तन में है, कंपनी को जारी किए गए किसी अनुमोदन, अनुज्ञापत्र या अनुज्ञप्ति को, ऐसे अन्य अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए लागू होंगे, जिसके अधीन ऐसा अनुमोदन, अनुज्ञापत्र या अनुज्ञप्ति जारी की गई है ।

15. पत्राचार में संपरिवर्तन की सूचना – (1) सीमित दायित्व भागीदारी यह सुनिश्चित करेगी कि रजिस्ट्रीकरण को तारीख के पश्चात्

चौदह दिन के अपश्चात् प्रारंभ होने वाली बारह मास की अवधि के लिए सीमित दायित्व भागीदारी के प्रत्येक शासकीय पत्राचार में निम्नलिखित समाविष्ट होंगे, अर्थात् :–

(क) यह विवरण कि कंपनी रजिस्ट्रीकरण की तारीख से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो गई थी ;

(ख) कंपनी का नाम और रजिस्ट्रीकरण जिससे वह संपरिवर्तित हुई थी ।

(2) कोई सीमित दायित्व भागीदारी जो उपपैरा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करती है, जुर्माने से, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगी किंतु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा और अतिरिक्त जुर्माने से, जो पहले दिन के पश्चात् प्रत्येक दिन के लिए जिसको व्यतिक्रम जारी रहता है, पचास रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगी ।

चौथी अनुसूची

(धारा 57 देखिए)

असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी से सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन

1. निर्वचन – इस अनुसूची में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "कंपनी" से असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी अभिप्रेत है ;

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित होने वाली कंपनी के संबंध में "संपरिवर्तन" से कंपनी की संपत्ति, आस्तियों, हितों, अधिकारों, विशेषाधिकारों, बाध्यताओं और उपक्रम का इस अनुसूची के उपबंधों के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में अंतरण अभिप्रेत है ;

(ग) "सूचीबद्ध कंपनी" से भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड अधिनियम, 1992 (1992 का 15) की धारा 11 के अधीन भारतीय

प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड द्वारा जारी भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (प्रकटन और विनिधानकर्ता संरक्षण) मार्गनिर्देश, 2000 में यथा परिभाषित सूचीबद्ध कंपनी अभिप्रेत है ;

(घ) "असूचीबद्ध पब्लिक कंपनी" से ऐसी कंपनी अभिप्रेत है जो सूचीबद्ध कंपनी नहीं है ।

2. कंपनी का सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन – (1) कोई कंपनी इस अनुसूची में उपवर्णित संपरिवर्तन की अपेक्षाओं का अनुपालन करके सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तित हो सकेगी ।

(2) ऐसे संपरिवर्तन पर कंपनी, उसके शेयरधारक, सीमित दायित्व भागीदारी, जिसमें कंपनी संपरिवर्तित हो गई है और उस सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार इस अनुसूची के उन उपबंधों से आबद्ध होंगे, जो उन्हें लागू होते हैं ।

3. संपरिवर्तन के लिए पात्रता – कोई कंपनी इस अनुसूची के उपबंधों के अनुसार किसी सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के लिए आवेदन कर सकेगी यदि –

(क) आवेदन के समय आस्तियों में कोई प्रतिभूति हित विद्यमान या प्रवृत्त नहीं है ; और

(ख) उस सीमित दायित्व भागीदारी के, जिसमें यह संपरिवर्तित होती है, भागीदारों में कंपनी के सभी शेयरधारक सम्मिलित हैं न कि कोई और ।

4. विवरण का फाइल किया जाना – कोई कंपनी किसी सीमित दायित्व भागीदारी में संपरिवर्तन के लिए रजिस्ट्रार को निम्नलिखित फाइल करते हुए आवेदन कर सकेगी –

(क) उसके सभी शेयरधारकों द्वारा ऐसे प्ररूप और रीति में तथा ऐसी फीस के साथ जो केंद्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे, निम्नलिखित विशिष्टियां अंतर्विष्ट करते हुए, विवरण, अर्थात् :–

(i) कंपनी का नाम और रजिस्ट्रीकरण संख्या ; और

(ii) वह तारीख जिसको कंपनी निगमित की गई थी ; और

(ख) धारा 11 में निर्दिष्ट निगमन दस्तावेज और विवरण ।

5. संपरिवर्तन का रजिस्ट्रीकरण – पैरा 4 में निर्दिष्ट दस्तावेजों के प्राप्त होने पर, रजिस्ट्रार इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, दस्तावेजों को रजिस्टर करेगा और ऐसे प्ररूप में जो रजिस्ट्रार अवधारित करे रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र यह कथन करते हुए जारी करेगा कि सीमित दायित्व भागीदारी प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट तारीख से ही इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत है :

परंतु सीमित दायित्व भागीदारी, रजिस्ट्रीकरण की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर संबंधित कंपनी रजिस्ट्रार को, जिसके पास वह कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) के उपबंधों के अधीन रजिस्ट्रीकृत थी, संपरिवर्तन के बारे में और सीमित दायित्व भागीदारी की विशिष्टियों की ऐसे प्ररूप और रीति में सूचना देगी, जो केंद्रीय सरकार विहित करे ।

6. रजिस्ट्रार रजिस्टर करने से इनकार कर सकेगा – (1) इस अनुसूची की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि यदि इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन प्रस्तुत की गई विशिष्टियों या अन्य जानकारी से उसका समाधान नहीं होता है तो वह रजिस्ट्रार से सीमित दायित्व भागीदारी को रजिस्टर करने की अपेक्षा करती है :

परंतु रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकरण से इनकार की दशा में अधिकरण के समक्ष अपील की जा सकेगी ।

(2) रजिस्ट्रार किसी विशिष्ट मामले में पैरा 4 में निर्दिष्ट दस्तावेजों को ऐसी रीति में सत्यापित कराए जाने की अपेक्षा कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

7. रजिस्ट्रीकरण का प्रभाव – पैरा 5 के अधीन जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ही, –

(क) रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट नाम से इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत एक सीमित दायित्व भागीदारी होगी ;

(ख) कंपनी में निहित सभी मूर्त संपत्ति (जंगम और स्थावर) और अमूर्त संपत्ति, कंपनी से संबंधित सभी आस्तियां, हित, अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, बाध्यताएं और कंपनी का संपूर्ण उपक्रम किसी और आश्वासन, कृत्य या विलेख के बिना सीमित दायित्व भागीदारी में अंतरित हो जाएंगे और उनमें निहित हो जाएंगे ; और

(ग) कंपनी विघटित समझी जाएगी और उसे कंपनी रजिस्ट्रार के अभिलेखों से हटा दिया जाएगा ।

8. संपत्ति के संबंध में रजिस्ट्रीकरण – यदि कोई संपत्ति जिसको पैरा 7 का खंड (ख) लागू होता है, किसी प्राधिकारी के पास रजिस्ट्रीकृत है, तो सीमित दायित्व भागीदारी यथाशीघ्र रजिस्ट्रीकरण की तारीख के पश्चात् यथा अपेक्षित संपरिवर्तन के प्राधिकार और सीमित दायित्व भागीदारी की विशिष्टियों को, ऐसे प्ररूप और रीति में जो प्राधिकारी अवधारित करे, अधिसूचित करने के लिए सभी आवश्यक उपाय करेगी जो सुसंगत प्राधिकारी अपेक्षा करे ।

9. लंबित कार्यवाहियां – कंपनी द्वारा या कंपनी के विरुद्ध सभी कार्यवाहियां जो किसी न्यायालय या अधिकरण में या किसी प्राधिकारी के समक्ष रजिस्ट्रीकरण की तारीख को लंबित हैं, सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध जारी रखी जा सकेंगी, पूरी की जा सकेंगी और प्रवृत्त की जा सकेंगी ।

10. दोषसिद्धि, विनिर्णय, आदेश या निर्णय का जारी रहना – किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी का कंपनी के पक्ष में या उसके विरुद्ध कोई दोषसिद्धि, विनिर्णय, आदेश या निर्णय सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवृत्त किया जा सकेगा ।

11. विद्यमान करार – ऐसा प्रत्येक करार, जिसकी कंपनी रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व एक पक्षकार थी, चाहे ऐसी प्रकृति का था या नहीं कि तद्धीन अधिकार या दायित्व समनुदेशित किए जा सकें, उस दिन से वैसे ही प्रभावी रहेगा, मानो -

(क) कंपनी के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी ऐसे करार की पक्षकार थी ; और

(ख) रजिस्ट्रीकरण की तारीख को या उसके पश्चात् की गई किसी बात की बाबत कंपनी के प्रतिनिर्देश के स्थान पर सीमित दायित्व भागीदारी के प्रतिनिर्देश रखा गया हो ।

12. विद्यमान संविदाएं आदि – रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व विद्यमान ऐसे सभी विलेख, संविदाएं, स्कीम, बंधपत्र, करार, आवेदन, लिखत और ठहराव जो कंपनी से संबंधित हैं या जिनमें कंपनी एक पक्षकार है उस तारीख को और उसके पश्चात् वैसे ही जारी रहेंगे मानो वे सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित हों, और सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवर्तनीय होंगे मानो सीमित दायित्व भागीदारी उसमें नामित की गई हो या वह कंपनी के स्थान पर उसकी पक्षकार हो ।

13. नियोजन का जारी रहना – नियोजन की प्रत्येक संविदा जिसे पैरा 11 या पैरा 12 लागू होते हैं, रजिस्ट्रीकरण की तारीख को या उसके पश्चात् वैसे ही प्रभावी बनी रहेगी मानो सीमित दायित्व भागीदारी कंपनी के स्थान पर उसके अधीन नियोजक थी ।

14. विद्यमान नियुक्ति, धिकार या शक्ति – (1) किसी भूमिका या हैसियत में कंपनी की प्रत्येक नियुक्ति जो रजिस्ट्रीकरण की तारीख से पूर्व प्रवृत्त है, उस तारीख से वैसे ही प्रभावी और प्रवर्तित होगी मानो सीमित दायित्व भागीदारी नियुक्त की गई हो ।

(2) कंपनी को प्रदत्त कोई प्राधिकार या शक्ति जो रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवर्तन में है उस तारीख से वैसे ही प्रभावी और प्रवर्तित होगी मानो वह सीमित दायित्व भागीदारी को प्रदत्त की गई हो ।

15. पैरा 7 से पैरा 14 का लागू होना – पैरा 7 से पैरा 14 (जिसमें दोनों सम्मिलित हैं) के उपबंध ऐसे किसी अन्य अधिनियम के अधीन, जो सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्ट्रीकरण की तारीख से ठीक पूर्व प्रवर्तन में है, कंपनी को जारी किए गए किसी अनुमोदन, अनुज्ञापत्र या

अनुज्ञप्ति को, ऐसे अन्य अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए लागू होंगे, जिसके अधीन ऐसा अनुमोदन, अनुज्ञापत्र या अनुज्ञप्ति जारी की गई है ।

16. पत्राचार में संपरिवर्तन की सूचना – (1) सीमित दायित्व भागीदारी यह सुनिश्चित करेगी कि रजिस्ट्रीकरण की तारीख के पश्चात् चौदह दिन के अपश्चात् प्रारंभ होने वाली बारह मास की अवधि के लिए सीमित दायित्व भागीदारी के प्रत्येक शासकीय पत्राचार में निम्नलिखित समाविष्ट होंगे, अर्थात् :–

(क) यह विवरण कि कंपनी रजिस्ट्रीकरण की तारीख से सीमित दायित्व भागीदारी में परिवर्तित हो गई थी ;

(ख) कंपनी का नाम और रजिस्ट्रीकरण जिससे यह संपरिवर्तित हुई थी ।

(2) कोई सीमित दायित्व भागीदारी जो उपपैरा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करती है, जुर्माने से जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, और अतिरिक्त जुर्माने से जो पहले दिन के पश्चात् प्रत्येक दिन के लिए जिसको व्यतिक्रम जारी रहता है पचास रुपए से कम होगा किंतु जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

———————

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संविधान संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 47259/88

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/ product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in